

महामहोपाध्यायछज्जूरामशास्त्रिविद्यासागरप्रणीता

विबुधरत्नावली

(संस्कृत का प्रामाणिक इतिहास)

बी० ए० एम० ए० शास्त्री आचार्य का पाठ्यग्रन्थ

भूमिका लेखक—

जीवनरामशास्त्री हिन्दीप्रभाकर एम० लिट्

प्रकाशक—
मैनेजर सुमेरप्रकाशन,
बिरला लाइन्स दिल्ली—६

मूल्य ३-५० नये पैसे,

मुद्रक—कैलाशचन्द्र एम. ए.
...प्रेस दरियागंज दिल्ली—६

भूमिका

आज संस्कृत के विद्वान् संस्कृत छात्र तथा संस्कृत प्रेमियों के लिये विबुधरत्नावली नामक संस्कृत के प्रामाणिक एवं खोज पूर्ण इतिहास को अर्पित करते हुए हमें महान् हर्ष हो रहा है केवल खेद यही है कि आज हम 'सत्यंशिवंसुन्दरम्, में से केवल सौन्दर्य को प्रधानता तथा मान्यता देने लगे हैं। कागज सुन्दर मुद्रण सुन्दर लेखक अंग्रेज या अंग्रेजी का विद्वान्, बस हम निर्विचार उसके मन्तव्यों को मानने के लिये कटिवद्ध हो जाते हैं, भीतर कुछ हो, न हो चाहे सब हमारे विरुद्ध हो, इसके विपरीत हमारे पूर्वज सत्य और शिव को ही प्रधानता तथा मान्यता देते थे सौन्दर्य को वे तृतीय कोटि में रखते थे। आज हम विदेशियों के अभिनव चाकचिक्य में पड़कर अपने विश्वगुरु पवित्र भारत वर्ष के ऐतिहासिक उत्कर्ष को मिटाने जा रहे हैं हमारा तो पूर्ण विश्वास है कि वह अमिट है।

'हमारे देश में है पूर्वजों के तपोबल की दिव्यशक्ति।
हजारों के मिटाने से भी हर्गिज मिट नहीं सकती ॥

और हम 'घर का जोगी जोगना बाहर का जोगी सिद्ध, मानने लगे हैं। यहां भी महाकवि शेक्सपीयर का यह कथन स्मरण रखने योग्य है—

"आल् देट गिल्ट इ ज नोट गोल्ड, अर्थात् चमचमाता हुआ सभी सोना नहीं होता, विद्वान् लोग तो कविकुलगुरुकालिदास के कथनानुसार 'सन्तः परीक्ष्यान्यतरद्भजन्ते मूढ़ः परप्रत्ययनेयबुद्धि, मानते आये हैं जब पूज्य ग्रन्थकार ने कीथ म्याक्डोनल आदि के वृहत् इतिहास पढ़े तो ज्ञात हुआ कि इन लोगों ने भारतीय ऐतिहासिक सत्यता

की निर्मम हत्या की है जानकर अथवा अनजाने यह हम नहीं कह सकते तब 'सत्ये नास्ति भयं क्वचित्, के अनुसार पूज्यग्रन्थकार से न रहा गया। वस्तु स्थिति को सामने रखने के लिये यह छोटासा किन्तु गागर में सागर तुल्य इतिहास ग्रन्थ लिखा। इसमें वेद पुराण दर्शन और काव्य साहित्य ग्रन्थों का तथा शूद्रक, विक्रमादित्य, यशोधर्म, भास और कालिदासादि का संक्षिप्त किन्तु प्रामाणिक समय निरूपण करके भारतीय इतिहास का मस्तक ऊंचा उठाया है। अब किसी भी देशी या विदेशी इतिहास लेखक की सामर्थ्य नहीं जो हमारे इतिहास को विकृत कर सके। उपरिनिर्दिष्ट संदिग्ध विषयों पर चार विश्वविद्यालयों में पूज्य ग्रन्थकार के चार भाषण हुए सभी विद्वानों ने छाती ठोककर आपके निर्णयों का समर्थन एवं अनुमोदन किया। इन निर्णयों को वे तो निःसन्देह मानेंगे जो देश समाज और काल की अपेक्षा 'सत्य' को सर्वोपरि मानते हैं। प्रस्तुत ग्रन्थ में काल निर्णय करते हुए ईसवी सन् का प्रयोग नहीं किया गया। विक्रम सम्वत् का प्रयोग हुआ है। पाठकों से अनुरोध है कि वे भी अभारतीय सम्वत् का प्रयोग कदापि न किया करें। प्रस्तुत पुस्तक के निर्माण एवं मुद्रण में जिन महानुभावों से सहायता प्राप्त हुई है तदर्थ हार्दिक धन्यवाद।

नम्रनिवेदक—

जीवनराम शास्त्री,

अशुद्धिशोधनम्

अशुद्धि	शुद्धि
इत्तिहास पृ० २ पं० १६	इतिहास,
छ सहस्त्र पृ० २ पं० २२	छसहस्र,
योव वेदांश्च पृ० २ पं० २	यौवैंवेदांश्च,
अनेक व्याकरण पृ० ४ पं० ६	अनेक ग्रन्थ,
संख्यया: पृ० ६ पं० १२	संख्यया
वेदस्यापौरूषेयता पृ० १२ पं० २	वेदस्यापौरुषेयता,
वेदानामववोधाय पृ० १३ पं ६	लोकानामुपकाराय,
पतञ्जलि: शुश्रुतश्च पृ० १४ पं० ५	अग्निवेशः शुश्रुतश्च,
पतञ्जलि ने किया पृ० १४ पं० ६	याज्ञवल्वयसहपाठीचरक ने किया
शास्त्र प्रयाग पृ० १६ पं० ५	शस्त्र प्रयोग,
वर्तमान समय में भी पृ० १७ पं० ६	कुछ समय पूर्व,
वर्हस्पत्य पृ० १७ पं० १५	वार्हस्पत्य,
विमुह्यित पृ० १८ पं० २	विमुह्यति,
वेदापवेद पृ० " पं० ६	वेदोपवेद,
द्वितीय अध्याय: पृ० १६ पं १	द्वितीयः अध्यायः
३६ पृ० १ पं० ३	॥१॥
" पृ० ६	॥२॥ एवमग्रेपि

अशुद्धि	शुद्धि
दुरुत्तानां पृ० २२ पं० १०	दुरुक्तानां,
महाभध्ये पृ० २५ पं० ६	महाभाष्ये,
वाक्यपदीय पृ० २६ पं० १३	राजतरङ्गिणी,
इसीभर्तृहरि पृ० " पं० २८	इसीवत्सभर्तृहरि
उन्होंने स्वयं भीं लिखा है पृ० २७ पं० ६	उन्होंने लिखा है,
व्यकरणेऽपि पृ० २८ पं० १०	व्याकरणेऽपि,
चन्द्रादित्य पृ० २९ पं० १२	इसके पिता का चन्द्रादित्य नाम,
लघुशब्देन्दुशेखर पृ० ३३ पं० १३	कौमुदीकीतीसरीटीका] लघु शब्देन्दु शेखर,
प्रधान मन्त्री और पृ० ३४ पं० १३	प्रधान मन्त्री आनन्दराय,
पण्डित इन्द्रदत्त ने पृ० ३५ पं० ३	मैथिल पण्डित इन्द्रदत्त ने,
६३ पृ० ३६ पं० ७	३७
छात्रहितर्थिना पृ० ३८ पं० १७	छात्रहितार्थिना,
सप्ताविचवेद पृ० ४२ पं० १०	सप्ताश्विवेद,
यही वात पृ० ४२ पं० १६	सिद्धसेन का समय ७०५ तक
विक्रमादित्य था पृ० ४२ पं० १८	विक्रमादित्य रहा होगा,
जीवित था पृ० ४३ पं० ११	विद्यमान था,
इसमें पृ० ४३ पं० १२	ज्योतिर्विदा भरण में,
कर पृ० ४५ पं० १	की होगी,
परिवर्तित किया पृ० ४५ पं० १	परिवर्तितकियाकहना प्रमाणरहित है,

अशुद्धि	शुद्धि
नवरत्न थे पृ० ४५ पं० २०	नवरत्न रहे होंगे,
इन्होंने तीनों कालिदासों का पृ० ४६ पं० ८	इसी तीसरे कालिदास का,
महेशोपाध्याय पृ० ४६ पं० ६	महेश्वरोपाध्याय,
लालावती पृ० ४८ पं० १५	लीलावती
चतुर्थ अध्याय: पृ० ५३ पं० १	चतुर्थः अध्यायः,
इसका समय पृ० ५६ पं० १५	वात्स्यायनचाणक्य का समय,
न्यायवार्तिकतात्पर्य पर पृ० ५७ पं० १४	न्यायवार्तिक पर,
समय पृ० ६५ पं० ८	वृत्ति का समय,
यह ग्रन्थ पृ० ६५ पं. १८	मुक्तावलि ग्रन्थ
नैवशक्नेति पृ. ६९ पं. ६	नैव शक्नोति,
शारारिक पृ. ९३ पं. ४	शारीरिक
योगेग पृ. ७५ पं. १	योगेन,
भोजराजः स्वीं पृ. ७६ पं० ५	भोजराजः स्वां,
परमान्पोति पृ. ७८ पं. ६	परमाप्नोति
मुशररासिनी पृ० ७८ पं. १४	पुंसएकान्तवासिनः,
इनकी पृ. ८१ पं. १२	इसकी,
इनका मत है पृ. ८१ पं. १५	इसका मत है,
पद्य ग्रहीष्पन्नो पृ. ८२ पं. २२	यद्यग्रहीष्यन्नो
भारतीर्थ ने पृ. ८४ पं. ६	भारतीतीर्थ ने
गागाभट्टटेन पृ. ८४ पं ११	गागाभट्टेन
निकश्चन पृ. ८७ पं. ५	नकश्चन,

अशुद्धि	शुद्धि
स्वर्गश्च नरकश्चापि पृ. ९१ पं १३	स्वर्गंचनरकंचापि,
रामायरणामृतंम् पृ. १०१ पं. १५	रामायरणामृतम्,
यत्रेहास्ति पृ. १०२ पं. ६	यन्नेहास्ति,
सौगताश्व पृ. १११ पं ४	सौगताश्च
आठच्सोलक पृ. ११३ पं ४	आठसो तक के
विष्णुवर्धन पृ. १३४ पं १४	कुब्जविष्णुवर्धन,
भातृहरि पृ. १३६ पं १३	भर्तृहरि,
शिव्काञ्ची पृ. १५८ पं. १६	शिवकाञ्ची,
साहित्यगुरुथा पृ. १५४ पं. ६	साहित्यगुरु था,
इसका पृ. ५३ पं. ८	उनका,
१७ सर्गों के पृ. ५२ पं. ७	अट्ठारह सर्गों के
जिका पृ. ६२ पं १७	जनिका
क्षाजड़ाः पृ. १६१ पं. १५	क्षारजड़ा
का पृ. पं.	काल

अशुद्धि पत्र

अशुद्धियां	पृष्ठ	पंक्ति	शुद्धियां
मालवेन्द्र यशोधर्मन्	४३	२१	मालवेन्द्र स्कन्दगुप्त
शाकप्रवर्तक विक्रम सातवाहन विक्रम हुआ	४३	१४	काव्यत्रय चन्द्रगुप्त काल में लिखे
संगति नहीं खाता	४४	१२	विष्णु-धर्मन् से संगति खाता है।
श्रीधरसेन (धर्मसेन)	४४	१३	विष्णुधर्मनथा
स्कन्दगुप्र	४३	१८	चन्द्रगुप्त
यह पहले भानुगुप्त बालादित्य ५६ सं०	४३	२३	यशोधर्मन् नरसिंह गुप्त बालादित्य ५४० विक्रमसं०
श्रीधरसेन (यशोधर्मन्)	४	१८	चन्द्रगुप्त द्वितीय
रामगुप्ततो	२५		रामगुप्त (शंख) तो
सूर्य का नाम होगा	४५	८	सूर्य का नाम नहीं है
प्रकाशादित्य वत्सभट्टि	२६	३	हरिगुप्र हरि भर्तृहरि
स्कन्दगुप्त विक्रमादित्य का भाई	२६		बत्तीसी के अनुसार चन्द्र-गुप्त विक्रम का छोटा भाई
कुमार गुप्त प्रथम ने	१६	६	चन्द्रगुप्त द्वितीय ने
स्कन्दगुप्त को राजा बना दिया था	२६		राज्य छोड़कर चला गया था
जवस्कन्दगुप्त कहीं	२६	७	जब चन्द्रगुप्त कहीं
भानुमती और पुत्र	२९	१२	शीला और पौत्र
श्रीधर्मसेनइतिया:	४४	२०	श्रीविष्णुधर्मनइति
यही श्रीधरसेन	४४	२१	यही विष्णु धर्मन

अशुद्धियां	पृष्ठ	पंक्ति	शुद्धियां
मालवेन्द्र कहलाता होगा	४५	३	वस्तुत: मालवेन्द्र नहीं
इसने	४५	४	यशोधर्मने
श्रीधरसेन यशोधर्म के पुत्र	४५		विष्णुधर्मन् का उत्तराधिकारी
इन्ही तीनों	४६	२१	पद्मगुप्त सहित इन्ही तीनों
महाभारत का पाठ	३७	१७	महाभारत का 'यास्कोमा-मृषि:' पाठ
तृतीय	३६	२०	द्वितीय
सर्वप्रथम	४२	११	सर्वान्तिम
यशोधर्म	४२, ३२, ४२, ४२		चन्द्रगुप्त द्वितीय
ठीक है	२४	२४	ठीक नहीं
तृतीय	४३	३	द्वितीय
जिस समय यशोधम जीवित था	४३	१०	जो असंगत और प्रक्षिप्त है
यशोधर्म विक्रम ने ६० वर्ष तक	४१	११	यशोधम ने ६०० विक्रम सं० तक
चष्टणरुद्र सिंह	१३०	७	चष्टणसिंहसेन
सातवाहन कुल	१२५	६	सातवाहन कुल यश:
गोतमी पुत्र सातवाहन राजा ने	१२०	६	हाल सातवाहन विषम शील विक्रम ने
६५ शक सेनाओं सहित	१२२	१६	शक सेना सहित
शक सेना सहित	१०२	१२	पञ्चाशणवें शक सेना सहित

अशुद्धियाँ	पृष्ठ	पंक्ति	शुद्धियां
स्कन्दगुप्त मालवेन्द्र था भी नहीं	४३	२०	स्कन्दगुप्त मालवेन्द्र भी था भारतेन्द्र भी
मत्स्य के प्रथम पुलुमात्री	११७	२०	गोतमी पुत्र सातकर्णि
इस प्रथम पुलुमावी	११७	११	इसके दत्तक पुत्र पुलुमावी
इसने	११७	१४	गोतमी पुत्र ने
और दूसरी			और बहन
भीमसेनोलंकार देव शर्मा लंकार	१७८	५-६	भीमसेनोह्यलंकार श्री देव शर्मा लंकार
यही वर्णन	१२२	१४	शूद्रक विक्रम वर्णन
दक्षिणी प्रदेशका	११२	६	दक्षिणी प्रदेश विदिशाका
त्रैलोक्य प्रज्ञप्तिमें	१११	६	पटावलिमें
भगादिया	११२	१८	षोड़ाशको वन्दी बना लिया
लोक प्रसिद्ध विक्रम	१२३	६	द्वितीय विक्रम
वेताल पच्चीसी सिंहासन वत्तीसी	१२३	१०	वेताल पच्चीसी
अभिन्न व्यक्ति है	११२	७	भिन्न भिन्न व्यक्ति हैं
हरिगुप्तस्य	११६	१२	स्थिर गुप्तस्य
विष्णु वर्धन यशोधम विक्रम	१२६	६	था
[illegible]	११६	६	रुद्रसिंह प्रथम भी
वेदव्यासो	१०१	२१	[illegible]

अशुद्धियाँ	पृष्ठ	पंक्ति	शुद्धियां
विक्रमादित्यभूपति	१२६	१०	धरसेनश्च भूपतिः
शकराजको	१३०	१६	उज्जयिनी के राजा शकरुद्रसेन को
एक दो वर्ष बाद	११४	१४	वायु के अनुसार ६० वर्ष राज्य कर विक्रम सं० से ३० वर्ष पूर्व
इसमें	४३	१२	ज्योतिर्विदाभरणमें
कुमार गुप्त प्रथम के समय से	४३	१६	चन्द्र गुप्त द्वितीय के समय से
श्रीवामदेवोपाध्यायः			वामदेव उपाध्यायः



विषयसूची

भूमिका लेखक

ग्रन्थकार-



म० म० छज्जूराम शास्त्री

दिल्ली



जीवनराम शास्त्री एम लिट

विवुधरत्नावली

संस्कृतेतिहासः

प्रथमः अध्यायः ।

श्रीगणेशं प्रणम्यादौ मामकीं नाम मातरम् ।
पितरं मोक्षरामं च मूलचन्द्रं च सोदरम् ॥१॥

सर्वश्रीगणेश, मामकीनामक माता, मोक्षरामनामक पिता, मूलचन्द्-नामक ज्येष्ठभ्राता, को प्रणाम करके ।

कुरुक्षेत्रमध्यवर्ति - रिटोलीग्रामवासिना ।
भारतीयराजधान्यामिन्द्रप्रस्थे प्रवासिना ॥२॥

पवित्र कुरुक्षेत्र मध्यवर्ति रिटोली ग्राम के निवासी, भारत की राजधानी देहली के प्रवासी ।

महामहोपाध्यायेन विद्यासागर शास्त्रिणा ।
गौड़पण्डितवर्येण छज्जूरामेण शर्मणा ॥३॥

महामहोपाध्याय गौड़ पण्डित छज्जूराम शास्त्री, विद्यासागर, संस्थापक-संस्कृत प्रचारक मण्डल दिल्ली ।

वुध्या निर्ध्याय वहुधा प्रमाणशतशुद्धया ।
संस्कृतस्येतिहासोऽयं सहभाषो विरच्यते ॥४॥

प्रमाणशत शुद्ध बुद्धि से सम्यक्तया निर्णय करके—भाषा-भाष्यसहित, संस्कृतेतिहास को बनाते हैं । विज्ञान-वेत्ता संस्कृत भाषा को विश्वभाषा जननी मानते हैं [illegible]

में इस भाषा को संस्कृत नाम से व्यवहृत किया गया है। पाणिनि यास्क आदि के समय में यह बोल चाल की भाषा थी।

सम्राट् पुष्यमित्र और अग्निमित्र शूद्रक तथा सम्राट् समुद्रगुप्त एवं चन्द्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य का राज्यकाल संस्कृत-भाषा का 'स्वर्णयुग' माना जाता है। उस समय अन्तःपुरतक की बोल चाल की भाषा संस्कृत थी। उसके बाद भी धारानरेश-भोज और जुलाहेका संस्कृत सम्बाद आवालवृद्ध प्रसिद्ध है। यही नहीं संस्कृत-भाषा विश्वजनीन ज्ञान का भण्डार है जैसा कि लिखा है—

"न तज् ज्ञानं न तच्छिल्पं न सा विद्या नताः कलाः।
नासौ नयो न तत्कर्म संस्कृते यन्न दृश्यते॥
'इदमन्धन्तमः कृत्स्नं जायेत भुवनत्रयम्।
यदि संस्कृत वाग्ज्योति रासंसांर न दीप्यते॥
छान्दोग्योपनिषत् में—'इतिहासःपञ्चमोवेदः,

कहा है। यास्क ने निरुक्त में-देवर्षि ब्रह्मर्षि और राजर्षि तथा आचार्यों की कथाओं को इतिहास माना है, महर्षि याज्ञवल्क्यने लिखा है—इन्तिहासपुराणाम्यां वेदं समुपव्टंहयेत्'। इतिहासग्रन्थों का निर्माण-अनादिकाल से होता आया है—रामायण महाभारत हर्षचरित-राजतरङ्गिणी आदिग्रन्थ इसके ज्वलन्त प्रमाण हैं॥

ईश्वराज्जज्ञिरेवेदाः ऋक् साम यजुरादयः।
आविर्भावस्वरूपैषां जनिः संमन्यतेबुधैः ॥५॥

ऋक् यजुः साम और अथर्व, ये चारों वेद ईश्वर से आविर्भूत हुए भारतीय संस्कृतिके प्राण वेदों का आविर्भाव विक्रम से छसहस्त्रवर्ष पूर्व से पीछे का नहीं हो सकता यह लो० तिलक का मत है, पाश्चात्यों ने भी ऐसी-ऐसी कल्पनायें की हैं वे सव भ्रान्त हैं। यों तो 'भोजस्येदं पुष्करिणीव वेश्म, मंत्र के अनुसार बेदभोज राजा के भी वाद के होने चाहियें। देखिये— [illegible] वैदिक ज्ञान ब्रह्मा के लिये प्रकटित किया जैसा

श्रुति कहती है—

'यो ब्रह्मार्णं बिदधाति पूर्वं यो व वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै ॥

वेदों का पढ़ना द्विजों का मुख्य कर्तव्य है ।

'वेदाध्ययनं नित्यमनध्ययने पातात्'

वेद सृष्टि काल में ईश्वर से प्रकटित होते हैं और महाप्रलयमें ईश्वरमें विलीन हो जाते हैं । ईश्वरोक्त होने से वेद प्रमाण माने जाते हैं—

'तद्वचनादाम्नायस्य प्रामाण्यम् (कणाद)

वेदव्यासादधीत्यैतान् वेदान्प्राचीचरन्भुवि ।
पैलो बैशम्पायनश्च सुमन्तुः जैमिनिःमुनिः ॥६॥

भगवान् वेदव्यास ने चतुष्पाद वेद का पठन पाठन और लेख द्वारा विभाग किया ।

अध्वर्यु मन्त्रों को छांटकर यजुर्वेद,
होतृ कृत्य ऋचाओं को छांटकर ऋग्वेद,
उद्गातृ ऋचाओं को छांटकर सामवेद,
अवशिष्ट मन्त्रों को छांटकर अथर्ववेद,

बनाया, सबमें लोकोपयोगी अथर्व है, और चारों में प्रधान है सामवेद, तभी गीता में लिखा है—

'वेदानां सामवेदोऽस्मि,

चार छात्रों (पैल बैशम्पायन सुमन्तु और जैमिनि) को चारभागोंमें पढाया । विभक्त वे प्रथम से ही थे क्योंकि रामायण में चारों वेदों का

उल्लेख है। अथर्ववेद में और छान्दोग्योपनिषत् में भी चारों का ही उल्लेख हैं—हाँ पृथक् २ छंटवाकर प्रचार व्यासजी ने ही किया। अथर्ववेद में—'संलिखितमजैषम्' किसी वस्तु के लेखवद्ध करने का निर्देश है। निरुक्त में भी लिखा है—

उपदेशाय ग्लायन्तोऽवरे ग्रन्थान्समाम्नाषिषुः (लेखितवन्तः)

पाणिनि से पूर्व अनेक व्याकरण लिखे गए थे जो पाणिनि के दृष्टिंगत हुए होंगे। आर्यों की लिपि ब्राह्मी, और यवनों की खरोष्ठी थी।

पैलः पपाठ ऋग्वेदं बैशम्पायनकोयजुः।
जैमिनिः सामवेदंच अथर्वाणं सुमन्तुकः ॥७।

पैल ने ऋग्वेद का बैशम्पायनने यजुर्वेद का जैमिनि ने सामवेद का और सुमन्तु ने अथर्ववेद का अध्ययन अध्यापन और लेख द्वारा प्रचार किया। ये चारों महर्षि व्यास के शिष्य थे।

चारों वेद सर्व प्रथम ब्रह्मपुत्र सनत्-कुमार से देवर्षि नारद ने पढ़े थे। अत्रि हारित और संवर्त्त का भी यही मत है ये सब ऋषि वेदव्यास जी से पूर्वबर्त्ती थे।

ऋग्वेदेतु विशेषेण वर्तते भगवत्स्तुतिः।
सहस्राणि दशास्मिन्वै सन्ति मन्त्राः शतानिषट् ।८

वेद पद से संहिता ब्राह्मण और उपनिषदों का ग्रहण होता है। ऋग्वेद कीं केवल शाकल शाखा ही उपलब्ध होती है। यही शाखा ऋग्वेदनाम से प्रसिद्ध है। शेष पांच शाखाएं—बाष्कल, आश्वलायन,

शांख्यायन, और माण्डूकायन थीं। जैसा कि शौनकीय प्राति शाख्य में लिखा है—

'ऋचां समूहो ऋग्वेदः तमभ्यस्य प्रयत्नतः।
पठितः शाकलेनादौ चतुर्भिस्तदनन्तरम् ॥
शंखाश्वलायनौचैव मण्डूको वाष्कलस्तथा।
वहवृचाः ऋषयः सर्वे पंचैते एकवेदिनः ॥

ऋग्वेद में चरण व्यूह के लेखानुसार दस हजार पांच सौ अस्सी मन्त्र हैं, यह संख्या केवल शाकल शाखा की है, इसमें सूक्त हैं एक हजार अट्ठाईस, अध्याय हैं चौसठ मण्डल दश और अष्टक हैं आठ।

'समानच्छन्दसो मन्त्रा यत्र तत्सूक्तमुच्यते।

यजुर्वेदेऽस्ति यज्ञस्य विधिः दैवतपूजनम्।
एकोनविंशति शतं मन्त्राः पञ्चचसप्ततिः ॥६।

यजुर्वेद में यज्ञ की विधि और देव पूजन के मन्त्र हैं। शतपथ में लिखा है—'यजुषा हवैदेवाः सत्रं तेनिरे। शुक्ल--यजुर्वेद की वाजसनेयी संहिता में १९०७५ मन्त्र हैं और चालीस अध्याय हैं। इस संहिता के और शतपथ ब्राह्मण के संकलन कर्ता महर्षि याज्ञवल्क्य थे। वे वेदव्यास के शिष्य सुमन्तु के शिष्य थे, वेदव्यास जी का लोक में स्थिति समय, परीक्षित के पुत्र महाराजा जनमेजयतक है। जो कलि संवत् द्वितीय शतक निश्चित है। अतः याज्ञवल्क्य का समय कलि तृतीय शतक है।

सामवेदे तु भगवद् गुणगानं विशिष्यते ।
मन्त्रा अष्टसहस्राणि चतुर्दशचसंख्यया: ॥१०॥

सामवेद में—उद्गातासे गीयमान स्तुति मन्त्रों का संग्रह है 'अष्टौ सामसहस्राणि सामानि च चतुर्दश । उह्यानि सरहस्यानीत्येवसामगण:स्मृत:॥ चरणव्यूह के इस प्रमाणानुसार सामवेद में ८०१४ मन्त्र हैं । परन्तु यह संख्या ब्राह्मण भाग सहित है । स्वतन्त्र मन्त्र केवल ६७५ हैं । इसी अभि-प्राय से सायण ने लिखा है—'साम्नान्तु सर्वेषामृगाश्रितत्वम् । सामवेद गीति प्रधान है । स्वर ताल मूर्च्छना ग्राम और लय आदि भेदों द्वारा एक एक मन्त्र कई कई राग रागनियों में गाया जाता था । किसी कारणवश ये भेद इन्द्र को असह्य हुए इसलिये इन भेदों को भूलोक से नष्ट कर दिया । 'सहस्रवर्त्मा सामवेद:, ऐसी प्रसिद्धि है, ये भेद संप्रति गन्धर्वों के पास हैं ।

विधि: अथर्ववेदेऽस्ति विवाहादिक कर्मण: ।
मन्त्राणां सूर्यसाहस्रं शतत्रय मथापिच ॥११॥

विवाह यज्ञोपवीतादि षोड़श संस्कार और श्राद्धादि कृत्यों का संग्रह अथर्ववेद में है । इस वेद को ब्रह्माजी के ज्येष्ठ पुत्र अथर्वाने संकलित किया था । चरणव्यूह के निम्न लेखानुसार—'द्वादशानि सहस्राणि मन्त्राणां त्रिशतानिच । गोपर्थ ब्राह्मणं वेदेऽथर्वकं शत पाठकम् ॥ इस वेद में १२३०० मन्त्र हैं । वर्तमान काल में—अथर्व वेद की शौनक शाखा ही 'अथर्व संहिता' कहलाती है । वेदों के व्यावहारिक उपदेश भी अथर्व वेद में ही निहित हैं ।

महाभाष्यानुसारेण ऋग्वेदस्यैकविंशतिः ।
सहस्र सामवेदस्य यजुर्वेदस्यचैवहि ॥१२॥
एकोत्तरशतं चाथर्वा वेदस्य नवाभवन् ।
पुराशाखानचाद्यत्वे लभ्यन्ते कालपर्ययात् ॥१३

महाभाष्य के अनुसार तथा षड्गुरु शिष्य की सर्वानुक्रमणिका में ऋग्वेद की २१ यजुर्वेद की १०१, सामवेद की १०००, और अथर्ववेद कीं ९ शाखाएं थीं। वर्त्तमान काल में उनमें से केवल बारह (१२) शाखाएं उपलब्ध होती हैं। शेष शाखाएं विधर्मी तथा विदेशियों के शासन से हमारी उपेक्षावृत्ति से लुप्त हो गई हैं। स्वतन्त्र भारत में ये भी लुप्त होती जा रही हैं।

यजुर्वेदस्य पंचैवद्वे ऋग्वेदस्यचैवहि ।
साम्नःतिस्रोऽथर्वणोद्वे लभ्यन्ते कालपर्ययात् ।१४

शुक्ल यजुर्वेद की दो शाखाएं काण्व और माध्यंदिनी कृष्ण यजुर्वेद की तीन--कठ, मैत्रायणी और तैत्तिरीय, ऋग्वेद की दो--वाष्कल और शाकल, सामवेद की तीन--कौथुमी, जैमिनीया और राणायनीया, अथर्ववेद की दो शौनक और पिप्पलाद, उपलब्ध होती हैं अन्य सब शाखाएं लुप्त हो गईं हैं।

यजुर्वेदे कृतं भाष्य मुव्वटेन मनीषिणा ।
महीधरेण च कृतं भाष्यंतस्यातिविस्ततम् ॥१५॥

शुक्ल यजुर्वेद संहिता पर विबुध श्रेष्ठ उव्वट तथा महीधर ने अपने अपने भाष्य लिखे। उव्वट गुजरात देश के आनन्दपुर का निवासी था। इसके समय में उस प्रान्त का शासक सम्राट् कालभोज बापारावल था। जिसका समय अष्टम शतक है। महाकवि राज शेखर का आश्रयदाता— महेन्द्रपाल, बापारावल का पुत्र और महीपाल पौत्र था, बापारावल प्रतिहार वंशीय सम्राट् था यह सब अपने भाष्य के अन्त में उव्वट ने दिया है।

'आनन्दपुर वास्तव्य वज्रटाख्यस्य सूनुना।
मन्त्र भाष्य मिदं क्लृप्तं भोजे राष्ट्रं प्रशासति॥

कुछ विद्वान् उव्वट को कैय्यट और मम्मट का भ्राता कहते हैं यह सम्भव नहीं क्योंकि कैय्यट ने अपने पिता का नाम जैय्यट लिखा है। किसी भाष्य प्रति में 'अवन्त्यामुवटो वसन्' ऐसा पाठ भी है परन्तु बहुत कम है। शिला लेखों से यह सिद्ध हो गया है कि काल भोंज बापा-रावल का आनन्दपुर से सम्बन्ध था, तब निश्चय है कि उव्वट ने इसीके शासन काल में अपना भाष्य लिखा होगा। महीधर ने उव्वट के ही भाष्य को अपने भाष्य में प्रपञ्चित किया है अतः महीधर इसका उत्तर-कालीन है।

ज्येष्ठ भ्रातु र्माधवस्य सर्वज्ञस्यनिदेशतः।
चतुर्वेदेषु भाष्याणि सायणेन कृतानिवै॥१६॥

दक्षिण देशीय विजयनगर के महाराज बुक्क और हरिहर के मन्त्री तथा गुरु सर्व-शास्त्रज्ञ माधवाचार्य की आज्ञा से कनिष्ठ भ्राता सायणा

चार्य ने चारों वेदों पर भाष्य लिखे। यह भ्रातृ संबन्ध स्वयं माधवाचार्य ने लिखा है।

श्रीमती जननी यस्य पिता श्रीयुतमायणः।
अनुजः सायणाचार्यः सर्वज्ञः स हि माधवः॥

माधवाचार्य ने भी व्याकरण और मीमाँसा के अनेक ग्रन्थ लिखे हैं। अनेक शिला लेखों से तथा ग्रन्थान्तर प्रमाणों से इनका निश्चित समय चतुर्दश शतक का अन्तिम भाग तथा पंचदश शतक का पूर्व भाग है।

यथावेदाः चतुःसंख्याः तथैव ब्राह्मणान्यपि।
ऐतरेयं शतपथं ताण्डयं गोपथमेव च ॥१७॥

जिस प्रकार वेद चार हैं उसी प्रकार प्रधान ब्राह्मण भी चार हैं। ऐतरेय शतपथ, ताण्डय और गोपथ, सर्वानुक्रमणिका में मन्त्र और ब्राह्मण के लक्षण निम्न प्रकार से हैं—'विनियोक्तव्यरूपोयः स मन्त्र इति कथ्यते। विधिस्तुतिपरं वाक्यं ब्राह्मणं कथयन्तिहि॥

ऋग्वेदस्य चैतरेयं यजुः शतपथं तथा।
सामवेदस्य ताण्डयं चाथर्ववेदस्य गोपथम् ॥१८॥

ऋग्वेद पर महीदास का ऐतरेय और कौषीतक का कौषीतकी ये दो ब्राह्मण हैं प्रधान ऐतरेय है मूल में हमने प्रधान का ही उल्लेख किया है, क्योंकि प्राधान्येन व्यपदेशा भवन्ति, ऐसा आचार्यों का मत है। शुल्क यजुर्वेद का प्रधान ब्राह्मण शतपथ है जिसका सङ्कलन महर्षि या ज्ञवल्क्य ने किया था। दूसरा कण्वने किया, पहला माध्यन्दिन और

सामवेद के नौ ब्राह्मण हैं, जिनमें सबसे प्रधान और बड़ा ताण्डय है। अथर्ववेद का एक ही ब्राह्मण है जिसका नाम है—गोपथ।

मन्त्र-ब्राह्मणयोर्वेदनामधेयमिदं वचः।
आपस्तम्ब मुनिः प्राह् वेद ज्ञान धुरन्धरः ॥१६॥

आपस्तम्ब बौधायन और जैमिनि प्रभृति महर्षियों ने अपने अपने ग्रन्थों में मन्त्र और ब्राह्मण दोनों को ही वेद माना है। तदनन्तर कालीन भाष्यकार सायणादि भी इसी मत को पुष्ट करते आये हैं अतः दोनों को वेदमानना प्रमाण संगत है॥

मन्त्र ब्राह्मण वेदस्य द्वौभागौ मुनिभिर्मतौ।
उभयोर्भागयोश्चैव समंप्रामाण्यमीष्यते ॥२०॥

मन्त्र ब्राह्मणात्मक वेद के दो भाग मुनि सम्मत हैं, दोनों का समान रूप से ही प्रामाण्य अभीष्ट है। और अध्ययनाध्यापन भी दोनों का समान रूप से ही होता आया है जैमिनि भी यही मानते हैं—'तुल्यंच साम्प्रदायिकम्। पाणिन्यादि षड्ङ्गकारोंने भी यही माना है।

जनमेजयनामादि-ब्राह्मणेषु यथा तथा।
देवापिप्रभृतेर्मन्त्रभागेष्वपि हि दृश्यते ॥१२॥

शतपथ गोपथ आदि ब्राह्मण ग्रन्थों में जनमेजय आदि अनित्य पुरुषों के नाम तथा इतिहास विद्यमान हैं एवमेव-वैदिकमन्त्रों में भी—यद्देवापिः शंतनवेपुरोहितः (ऋग्वेद) रमध्वंमे वचसे कुशिकस्यसूनः (ऋग्वेद(

'वृत्र हणं पुरन्दरम्' (यजुर्वेद) इन्द्रोदधीचिरस्थिभिः (ऋग्वेद) युवांच्यवानं सुनयं यथारथंपुनर्युवानम्' (अथर्ववेद) वेदोंमें 'यस्येक्ष्वाकुरुपव्रते' 'चत्वारिंश द्दशरथस्य शोणाः' 'रामेवोचमसुरेमघवत्सु' ब्रह्मण्योदेवकीपुत्रः इत्यादि नाम तथा इतिहास ओतप्रोत हैं। सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथा पूर्व मकल्पयत्। 'यत्रोभयोः समोदोषः परिहारोऽपि तादृशः। नैकस्तत्रानुयोक्तव्यः तादृगर्थविचारणे (कुमारिल)

एतस्य च समाधान मिदं वेदज्ञ सम्मतम्।
भूतं भव्यं भविष्यञ्च सर्वं वेदात्प्रसिध्यति ॥२२॥

मन्त्र-ब्राह्मणात्मक वेद में जो देव ब्रह्म राजर्षियों के नाम तथा इतिहास आते हैं। इसका समाधान—वेदज्ञों ने इस प्रकार किया है कि कोई भी ऐसी भूत भविष्यत् और वर्तमान वस्तु नहीं है जो वेदों से ज्ञात न की जा सके। ब्रह्मा से लेकर देवताओं का, गोत्र प्रवर्तक सप्त-ऋषियों का और ब्राह्मण क्षत्रियों वैश्यों का, सृष्टि और महा प्रलय का सभी वृत्त वेदों में विद्यमान है। 'सहप्रमा ऋषयः पूर्वेषांपन्थामनुसृत्य धीरा अन्वा लेभिरे। यजुर्वेद के इस मन्त्र में ऋषियों को दिव्यज्ञान युक्त कहा है। 'युगान्तेऽन्तर्हितान्वेदान् सेतिहासान्महर्षयः। लेभिरे तपसा पूर्वमनुज्ञाताः स्वयंभुवा॥ वेद किस समय बने इस सम्बन्ध में निश्च-यात्मक लेख आज तक किसी विद्वान् ने नहीं लिखा। अतएव नित्य शाश्वत वेदों का सप्तऋषियों ने समाधि द्वारा दर्शन करके उनको शब्द सम्बद्ध किया है, निरपेक्षोरवः श्रुतिः (शावर भाष्य) तभी वेद का दूसरा नाम श्रुति है अथवा ब्रह्माजी ने ऋषियों के लिये वेदों का उपदेश किया 'अनादिनिधना नित्या वागुत्सृष्टा स्वयंभुवा। अर्थात् वेदों को सभी ने कर्णं परम्परया सुना है बनाया नहीं। यही सायणादि ने लिखा है—

तत्कर्त्रनुपलम्भात् । 'न पौरुषेयत्वं तत्कर्तृ पुरुषस्याभावात् (सांख्यसूत्र)

मन्त्रब्राह्मणरूपस्य वेदस्यापौरुषेयता ।
काठकादिसमाख्यानं जातं प्रवचनेन वै ॥२३॥

वेद पुरुषनिर्माणजनित नहीं हैं। काठक कौथुम ऐतरेय तैत्तिरीयादिनाम उनके प्रवचनकर्तृक हैं। पूर्वमीमांसा के आख्याप्रवचनात् सूत्र के अनुसार।

ऋग्वेदस्य चैतरेयं यजुषोहीशकाठके ।
तैत्तिरीयं महत्पुण्यं वृहदारण्यकं तथा ॥२४॥

केन छान्दोग्य एव द्वे सामवेदस्य कीर्तिते ।
प्रश्नमण्डूकमाण्डूक्या वेदस्याथर्वणोमताः ॥२५॥

उपनिषदों में १० उपनिषदें मुख्य हैं ऋग्वेद की ऐतरेय शुक्ल-यजुर्वेद की ईश और वृहदारण्यक, कृष्ण यजुर्वेद की तैत्तिरीय और कठ, सामवेद की छान्दोग्य और केन, अथर्ववेद की प्रश्न मण्डूक और माण्डूक्य इन्हीं दशों पर आचार्य शङ्करने अपना भाष्यलिखा है। इन उपनिषदों में अध्यात्म विद्या का निगूढ रहस्य विवेचित है। आत्मज्ञान का मूल श्रोत उपनिषद् ही हैं। औपनिषद ज्ञान के सामने पाश्चात्यों का विज्ञान टिमटिमाता दीपक है। इनके अध्ययन और मनन से अविद्या का नाश एवं आत्म ज्ञान होता है उपनिषदों में श्रेय मार्ग का उपदेश है उसके लिये आत्म संयम और चित्तशान्ति नितान्त आवश्यक है आत्म सम्बन्धी समस्या कठोपनिषद में समझाई है। वेद के दोभागहैं। कर्मकाण्ड और ज्ञान काण्ड, मन्त्र तथा ब्राह्मण ग्रन्थों में कर्म काण्ड का

विवेचन है और उपनिषदों में ज्ञान काण्ड का। उपनिषदों में परमात्मा के दो रूप माने गये हैं सगुण और निर्गुण, इन्हीं दोनों को साकार और निराकार कहते हैं। निर्गुण ब्रह्म निरुपाधि है। केनोपनिषद् में इसी का चूडान्त वर्णन है। सगुण ब्रह्म सत्य ज्ञान अनन्त और आनन्दस्वरूप माना है इसका विवेचन वृहदारण्यकमें है। याज्ञवल्क्यने गार्गी को निर्गुण ब्रह्म का उपदेश किया था। इस निर्गुण ब्रह्मज्ञान के होने पर पुरुष आत्मरति आत्मानन्द और पूर्ण काम हो जाता है। औपनिषद ज्ञान की यह पराकाष्ठा है। 'ज्ञात्वा एतद्जन्ममृत्युप्रहाणि:। ब्रह्मविद्ब्रह्मैवभवति ॥

वेदानामुपवेदाश्च चत्वारोह्यॆव निर्मिता:।
वेदानामववोधाय मुनिभिस्तत्वदर्शिभि: ॥२५॥

आत्म द्रष्टा मुनियों ने निर्भ्रान्त वैदिक ज्ञान के लिये चार वेदों के चार ही उपवेद प्रकल्पित किये हैं॥

ऋग्वेदस्य आयुर्वेद: यजुषो धनुरेवच।
सामवेदस्य गान्धर्वोह्यर्थ शास्त्रमथर्वण: ॥२७॥

ऋग्वेद का आयुर्वेद, यजुर्वेद का धनुर्वेद, उपवेद हैं। सामवेद का गान्धर्व, और अथर्ववेद का अर्थशास्त्र, उपवेद हैं।

धन्वन्तरि प्रचरित आयुर्वेद: प्रकथ्यते।
तस्याद्यत्वे शतं ग्रन्था: प्रचारश्चमहान्भुवि ॥२८॥

काशी निवासी धन्वन्तरि दिवोदासने सर्व प्रथम आयुर्वेद का प्रचार

किया । इस शास्त्र के आद्य ज्ञाता अश्विनीकुमार देववैद्य हैं । धन्वन्तरि दिवोदास की बहन गोतम की पत्नी अहल्याथी । अतः दिवोदास जी त्रेतायुग के व्यक्ति हैं ।।

कलिजानां हि जीवानामुपकारपरौ मुनी ।
पतञ्जलिः सुश्रुतश्च चक्रतुः स्वस्वसंहिते ।।२६।।

महर्षि अग्नि वेश प्रणीत संहिता का प्रति-संस्करण-पतञ्जलिने किया, और सुश्रुतने सुश्रत संहिता लिखी । सुश्रुत वैद्य, दिवोदास-धन्व न्तरिका शिष्यथा, और वह विश्वामित्र का पुत्र था ।।

योगेन चित्तस्य पदेन वाचां मलं शरीरस्य च वैद्यकेन ।
योऽपाकरोत्तं प्रवरं मुनीनां पतञ्जलिं प्राञ्जलिरानतोऽस्मि ।।

इस पद्य से-योगदर्शन-काव्य, महाभाष्य और चरकसंहिताके कर्ता एक ही पतञ्जलि माने जाते हैं । पतञ्जलि का समय-विक्रमसंवत्से ५० वर्ष पूर्व है । सम्राट् कनिष्ककी सभा में कोई चरकनामक वैद्य भी था । कुछ पतञ्जलि का ही दूसरा नाम चरक कहते हैं । परन्तु नागेश ने 'चरके पतञ्जलिः' लिखा है । यह भी कहते हैं कि कनिष्कका भी समय विक्रम से ५० वर्ष पूर्व ही था । अब कनिष्क का समय विक्रम के वाद माना जाता है । चरकसंहिता में आठ प्रस्थान हैं और शुश्रुत में पांच, ये दोनों आर्ष ग्रन्थ हैं । शुश्रुत शालि होत्र से पढाथा, अग्निपुराण में लिखा है— शालिहोत्रः शुश्रुताय आयुर्वेद मुक्तवान् । अग्निवेश और शुश्रुत दोनों त्रेतायुग के महर्षिथे ।।

निदानं माधवश्चक्रे वाग्भटश्च स्वसंहिताम् ।
श्रीमान् शार्ङ्गधरः स्वीयां संहितां च भिषग्वरः ।।३०।।

श्री माधवकर ने विक्रम की चतुर्थ शती में माधव-निदान, वाग्भट ने वाग्भट-संहिता, और शार्ङ्गधरने चौदहवीं शती में शार्ङ्गधर संहिता लिखी निदान में माधव सर्वश्रेष्ठ है ।।

चक्रः चक्रे चक्रदत्तं भावो भावप्रकाशकम् ।
तथा श्रीकृष्णगोपालो रसेन्द्रं सारसंग्रहम् ।।३१।।

श्री चक्रपाणि ने विक्रम की पन्द्रहवीं शती में चक्रदत्त-ग्रन्थ लिखा । इसकी चरक टीका भी उपलब्ध है । भावमिश्र ने षोड़शशती में भाव-प्रकाश ग्रन्थ, और सत्रहवींशती में वैद्य कृष्णगोपाल ने रसेन्द्रसार संग्रह ग्रन्थ लिखा ।।

गोविन्ददासो भैषज्यरत्नावलि मकल्पयत् ।
प्रत्यक्ष-शारीरकादीन् गणनाथादयोव्यधुः ।।३२।।

वङ्गदेशीय-वैद्यवर गोविन्ददास ने विक्रम की बीशवीं शती में भैषज्यरत्नावली, कलकत्ता-निवासी वैद्यरत्न गणनाथसेन सरस्वती ने प्रत्यक्षशारीरिक, और बम्बई निवासी वैद्य यादव जी त्रिकमजी ने सिद्धयोग संग्रह ग्रन्थ लिखे ।।

विश्वामित्रादिभिः प्रोक्ता रामाद्यैः सुप्रचारिता ।
धर्नुविद्या विनष्टाऽद्यातीवदुःखस्य कारणम् ।।३३।।

धनुर्वेद यजुर्वेद का उपवेद है । यह विद्या विश्वामित्रादिने श्री रामादिको उपदिष्ट की थी । श्रीराम लक्ष्मणादि ने इस का प्रचार किया [illegible]

ग्रन्थ में चारपाद हैं ॥

दीक्षापाद, संग्रहपाद, सिद्धिपाद, और प्रयोगपाद ।

प्रथम पाद में धनुष का लक्षण और अधिकारि वर्णन है दूसरे में गुरु सम्प्रदाय सिद्ध शस्त्रों का वर्णन, तृतीय में शस्त्रों के चलाने का अभ्यास, और चतुर्थ में शत्रुओं पर शस्त्र प्रयाग करना वर्णित है ।

कृते दुष्यन्तभरतौ त्रेतायां रामलक्ष्मणौ ।
द्वापरे भीष्मकर्णाद्याः पृथ्वीराजः कलौ युगे ॥३४॥

सत्ययुग में दुष्यन्त भरत आदि, त्रेता में श्रीराम लक्ष्मणादि, द्वापर में भीष्म कर्ण द्रोण अर्जुनादि, और कलियुग में सम्राट् पृथ्वीराज तक धनुर्वेत्ता रहे । पृथ्वी-राज लक्ष्यवेधी बाण चलाने जानता था ॥

सरस्वतीप्रचरिता नारदाद्यैः प्रचारिता ।
गन्धर्वैः पूर्णतां नीता गानविद्याप्रशस्यते ॥३५॥

वाग्देवी-सरस्वतीने गान विद्या प्रवर्तित की, देवर्षि नारद तुम्बुरु आदि ने उसका अध्ययन किया । और गन्धर्वोंने उसका चूड़ान्त प्रचार किया ॥

संगीतरत्नाद्या ग्रन्थाः दृश्यन्तेऽस्याः परः शतम् ।
शिवनारद कृष्णाद्या नृत्य गीत प्रवादकाः ॥३६॥

इस विद्या के अनेक ग्रन्थ हैं, नारद का संगीतमकरन्द, शार्ङ्गदेव का संगीत-रत्नाकर, अहोबल का संगीत-पारिजात, और महाकवि

जयदेव का गीत-गोविन्द। हिन्दी में 'रागरत्नाकर' प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं। गान-विद्या नृत्य-गीत-वाद्य भेद से अनेक प्रकार की है। भगवान्-शिव का ताण्डव नृत्य प्रसिद्ध है, गोपियों ने रासलीला में नृत्य किया। नारद और तुम्बुरु सामवेद का गान किया करते थे। श्रीकृष्ण ने वंशी बजा कर त्रिलोक को मुग्ध किया था। लंकेश रावण ने—शिव ताण्डव बना कर और गाकर शंकर को प्रसन्न किया था। वर्तमान समय में भी तानसेन, वैजूवावरा, हरिदासादि, हुए वीसवीं शतीमें विष्णु दिगम्बर, शंकरदास, गङ्गादास, राधेश्याम, नत्थाराम, दीपचन्द्र और लक्ष्मीचन्द्र आदि प्रसिद्ध गायक हुए। काशी की विद्याधरी आदि वेश्यायें भी नृत्य और गान में अति निपुण थीं। स्वर ताल ग्राम लय और मूर्च्छनादि इस विद्या के प्रधान अङ्ग हैं॥

वृहस्पत्यादि रचितमर्थ शास्त्रं प्रशस्यते।
तस्यैवान्तर्गतं शिल्पशास्त्र मद्य चमत्कृतम् ॥३७॥

प्राचीन काल में वृहस्पति (देवगुरु) भीष्म द्रोण और उद्धव के अर्थशास्त्र प्रसिद्ध थे। भास कवि ने वर्हस्पत्य अर्थशास्त्र का उल्लेख किया है। परन्तु सम्प्रति कौटिल्य अर्थशास्त्र ही प्रसिद्ध है। कौटिल्य चाणक्य का नाम है। वह वात्स्यायन भी कहलाता था उसने पहले अर्थशास्त्र और पीछे न्याय भाष्य लिखा। चाणक्य दीर्घ आयुः भोगकर बिन्दुसार के राज्यारम्भ काल में मरा था विक्रम सं० से २५० वर्ष पूर्व मुद्राराक्षस के अनुसार नीतिशास्त्रज्ञ विष्णु शर्मा चणक्य का सहपाठी था। अर्थशास्त्र के अन्तर्गत विश्वकर्मा (देवशिल्पी) कृत शिल्प-विद्या चमत्कृत है॥

पानीयव्योमयाना निधूम्रयानान्यनेकशः ।
रेडियो तार चित्राणि को न दृष्ट्वा विमुह्यित ॥३८॥

पाश्चात्योंने इस विद्या की भारी उन्नति की है । पाश्चात्यों का यह भौतिक विज्ञान विश्व को चकित करने वाला है । इसमें जलयान (सामुद्रिक जहाज) व्योमयान (हवाई जहाज) विमान का वर्णन समराङ्गण सूत्र में है । यन्त्र-सर्वस्व में भरद्वाज ने भी विमानों का वर्णन किया है । धूम्रयान (रेल मोटर बस) रेडियो, तार, चलचित्र (सिनेमा) आदि ने हमारे पूर्वजों की बातों को सत्य सिद्ध किया है ॥

॥इति सटीके विवुधरत्नावलीनाम्नि संस्कृतेतिहासे वेदापवेद निरूपणं नाम प्रथमोऽध्यायः ॥

द्वितीय—अध्यायः

वेदार्थस्याववोधाय शिक्षादिक मजायत ।
शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्द आदिकम् ॥२९॥

शिक्षा—पाणिनीय, याज्ञवल्क्यादि । ऋग्वेद की पणिनीय शिक्षा, शुक्लयजुर्वेद की याज्ञवल्क्य शिक्षा, कृष्णयजुर्वेद की व्यास शिक्षा, साम-वेद की—गौतमी लोमशी और नारदीया तीन शिक्षाएं है । अथर्ववेद की माण्डूकी केवल एक ही शिक्षा है ॥

कल्पसूत्रं त्रिधाप्रोक्तं श्रौतगृह्यादिभेदतः ।
श्रौतंकात्यायनादीनां गृह्यं पारस्करादितः ॥३०॥

कल्पसूत्र तीन प्रकार के होते हैं । श्रौतसूत्र—कात्यायनादिके, गृह्य (सूत्र) पारस्कर प्रभृतिके और धर्मसूत्र गौतमादिके हैं । शुक्लयजुर्वेद का श्रौतसूत्र कात्यायन, गृह्यसूत्र—पारस्कर और धर्मसूत्र गौतम है । कृष्णयजुर्वेद का श्रौतसूत्र—आपस्तम्व, गृह्यसूत्र मानव और धर्मसूत्र—वोधायन है । ऋग्वेदका श्रौतसूत्र आश्वलायन, गृह्यसूत्र शांख्यायन, धर्मसूत्र कोई नहीं । सामवेद का श्रौतसूत्र-द्राह्यायण और लाट्यायन हैं । गृह्यसूत्र गोभिल, खादिर और जैमिनीय हैं । धर्मसूत्र नहीं । अथर्ववेद का श्रौतसूत्र कोई नहीं । गृह्यसूत्र—वैखानस और वाराह हैं । चारों वेदों के चार प्रातिशाख्य हैं ॥

कात्यायन श्रौत सूत्रे कर्कभाष्यं विराजते ।
पारस्करस्य सूत्रेषु भाष्यं हरिहरादिकम् ॥३१॥

कात्यायन श्रौत सूत्रों पर कर्काचार्य का भाष्य है। और पारस्कर गह्यसूत्रों पर हरिहर जयराम और गदाधरादिभाष्य हैं ये कात्यायन संभवतः याज्ञवल्क्य के पुत्र थे। और पारस्कर आश्वलायनके बाद और पाणिनिके पूर्व हुए। पाणिनि ने पारस्करप्रभृतीनि संज्ञायां सूत्र लिखा है। कर्काचार्य का समय विक्रमीय द्वादश शतक और हरिहर का सप्तदश शतक है ॥

कात्यायन श्रौतसूत्रे वृत्ति विद्याधरो व्यधात् ।
पारस्करीयसूत्रेतु वेणीरामेण सा कृता ॥३२॥

कात्यायन श्रौत सूत्रों पर—हमारे मित्र महामहोपाध्याय वेदाचार्य विद्याधरजी की वृत्ति अतीव हृदयङ्गम है। विद्याधर अपने समय में काशी के सर्वोत्तम वैद्विक विद्वान् थे यह वृत्ति इन्होंने बीसवीं शती में बनाई थी। इनके सुयोग्य पुत्र वेदाचार्य वेणीराम गौड़ ने भी पारस्कर गृह्यसूत्रों पर अतीव सरल छात्रोपयोगी वृत्ति लिखी है ॥

चतुर्दश समाश्रित्य शिवसूत्राणि पाणिनिः ।
अष्टाध्यायि व्याकरणं रचयामास सूत्रतः ॥३३॥

महर्षि पाणिनिने चौदह शिव सूत्रों के आधार पर अष्टाध्यायि व्याकरण बनाया। 'अल्पाक्षरमसन्दिग्धं सारवद्विश्वतोमुखम्, यह सूत्र मात्र का लक्षण है। 'षड़ङ्गेषुव्याकरणं प्रधानम्' इस महाभाष्य के [illegible]नुसार तथा 'प्रथमे हि विद्वांसो वैयाकरणाः' इस ध्वनिकार के

कथनानुसार वेद के ६ अङ्गों में व्याकरण प्रधान है। देखिये—

'अङ्गीकृतं कोटिमितं च शास्त्रं नाङ्गीकृतंव्याकरणं च येन।
न शोभते तस्य मुखारविन्दं सिन्दूर विन्दुर्विधवाङ्गनावत्॥

क्योंकि व्याकरण के पढ़े बिना अन्य शास्त्रों का पढ़ना अशक्य है। व्याकरणों में भी पाणिनीय ही सर्वोपकारक है 'काणादं पाणिनीयंच सर्व शास्त्रोपकारकम्' (पराशरपुराण) देवताओं ने ब्रह्माजी से कहा— 'इमां नो वाचं व्याकुरु ब्रह्मा वृहस्पतये, वृहस्पतिरिन्द्राय' इन्द्रो भरद्वाजाय, भरद्वाज ऋषिभ्यो वाचं व्याकरोत्। ऋषियों ने पांच व्याकण बनाये। ऐन्द्र, काशकृत्स्न, आपिशलि, शाकटायन, और पाणिनीय, पाणिनि से पूर्व शाकटायन व्याकरण का सार्वभौम प्रचार था। 'अनुशाकटायनं वैयाकरणाः' (काशिका) पाणिनि प्रणीत एक काव्य भी है जिसके अनेक श्लोक सुभाषितावल्यादि में उद्धृत हैं। राजशेखर ने भी लिखा है—'नमः पाणिनये तस्मै यस्मादाविरभूदिह। आदौ व्याकरणं, काव्यमनुजांववती जयम्॥ पाणिनिका समय नवीन-मतानुसार विक्रम से साढ़े तीन सौ वर्ष पूर्व है, ऐतिहासिक इसी मत को प्रमाणित करते हैं। षड्गुरु के कथनानुसार छन्दः शस्त्र प्रणेता पिङ्गल पाणिनिका अनुज भ्राता था, और यास्क भी पाणिनि का समकालिक था। यह संभव भी है क्योंकि यास्क ने परःसंनिकर्षः संहिता, पाणिनिसूत्र निरुक्त में उद्धृत किया है और पाणिनि ने 'यस्कादिभ्योगोत्रे सूत्र से यास्क शब्द सिद्ध किया है। पिङ्गल ने 'उरो वृहती यास्कस्य, लिखा है। पाणिनिकी माता दाक्षी पिता-पणी, अभिजन शलातुर था। पाणिनिका शिष्य था कौत्स, 'उपसेदिवान्-कौत्सः पाणिनिम् (महाभाष्य) और वृहत्कथा के अनुसार गरु था पाटलिपुत्र निवासी सम्राट् नन्द-समकालिक वर्ष उपाध्याय, उपदेष्टा भगवान् [illegible]

येन सर्वा वसुमती कृतैकेन विदुष्मती ।
स मुनिः पाणिनिः लोके प्रशस्यः कस्य नास्ति हि ॥३४॥

जिस मुनि पाणिनि ने समस्त पृथ्वी के मानव अपने व्याकरण द्वारा विद्वान् बना दिये वह मुनि पणिनि किस व्यक्ति से प्रशंसनीय नहीं है अपितु विश्व प्रशस्य है ॥ पतञ्जलि के समय में बच्चे तक पाणिनीय शास्त्र को पढ़ने लग गये थे, आकुमारं यशः पाणिनेः (महाभाष्य)

तस्यैव न्यूनतां हर्तुं विशिष्टं वक्तुमप्यथ ।
कात्यायनो मुनिः स्वानि वार्तिकानि प्रणीतवान् ॥३५॥

कात्यायन मुनिने पाणिनीय सूत्रों पर वार्तिक लिखे । उक्तानुक्त दुरुक्तानां चिंत्रा यत्र प्रवर्तते, यह वार्तिकमात्रका लक्षण है । प्रयाग समीपवर्त्ति कौशाम्बी (कोसम) नगर वास्तव्य सोमदेव शर्मा के पुत्र मुनिवर कात्यायन कथासरित्सागर के अनुसार पाणिनि के सहपाठी थे । इन्होंने सूत्रों की न्यूनता को दो प्रकार से पूर्ण किया कहीं पर सूत्रों से प्राप्त विधियों का निषेध और कहीं पर अप्राप्त विधियों का विधान, परन्तु पाणिनि में इनकी महती श्रद्धा थी देखिये वार्तिक—'भगवतः पणिनेः सिद्धम् । कुछ ऐतिहासिक, कात्यायन को महर्षि याज्ञवल्क्य का पुत्र बतलाते हैं परन्तु यह सम्भव नहीं क्योंकि याज्ञवल्क्य और कात्यायन के समय में महान् अन्तर है । इसी कात्यायन का एक नाम वररुचि भी था । इसी नाम से उसने एक काव्य लिखा है जिसका निर्देश महाभाष्य-कार—पतञ्जलि ने 'वाररुचं काव्यम्' कह कर किया है । सम्राट् समुद्र-गुप्त ने भी पाणिनि और कात्यायन (वररुचि) काव्यकर्ता लिखे हैं । भाष्यकार ने कात्यायन वररुचि को [illegible] लिखा है ॥

सर्वः सर्वं न जानाति महर्षिरपि कश्चन ।
कात्यायन मुनिः खल्वेतत्स्वकृत्यान्यदर्शयत् ॥३६॥

मुनियों की कृतिमें भी त्रुटि रहना असम्भव नहीं यह वात कात्यायन ने पाणिनीय सूत्रोंमें त्रुटि निकालकर सिद्ध कर दिखादी है । 'प्रायेण-मुह्यन्ति हि ये लिखन्ति' । यह न्याय मनुष्यमात्र में व्यापक है । पाणिनि और कात्यायन दोनों मुनियों का शरीर त्याग परस्पर शाप से त्रयोदशी तिथी को हुआ था, अतः त्रयोदशी में व्याकरण का पठन पाठन नहीं होता । सब शास्त्रों के न पढ़ने की तिथियां निम्न हैं—

'अष्टमी गुरु हन्त्री च शिष्य हन्त्री चतुर्दशी ।
अमा पूर्णा द्वयोर्हन्त्र्यौ प्रतिपत्पाठनाशिनी ॥
'आका पौचैं द्वितीयायां पक्षयोरुभयोरपि ।
वेदाङ्गोपाङ्ग शास्त्राणि न नपठेत् सांप्रदायिकः ॥

प्राकृत-प्रकाशकार वररुचि भी सम्भवतः यही थे क्योंकि ये सूत्र भी प्राचीन प्रतीत होते हैं। एक कात्यायन स्मृति भी उपलब्ध होती है उसका निर्माता संभवतः याज्ञवल्क्य पुत्र कात्यायन रहा होगा । क्योंकि वह स्मृति-निर्माणकाल था । याज्ञवल्क्य ने भी एक स्मृति लिखी है जिसकी टीका मिताक्षरा है ॥

अप्रचारतमोमग्नसूत्रवार्तिकयोः कृते ।
महाभाष्येन्दु मातेने भगवान् श्रीपतञ्जलिः ॥३७॥

सूत्र तथा वार्तिक का यथेष्ट प्रचार न देखकर गोनर्द (गाण्डा) देशीय गोणिका पुत्र महर्षि पतञ्जलि ने महाभाष्य ग्रन्थ लिखा । इसका

संस्कृत इतना सरल तथा गम्भीरार्थ है जैसा किसी भी संस्कृत ग्रन्थ में उपलब्ध नहीं होता। इसी कारण संस्कृत साहित्यमें महाभाष्यकी सर्वोच्च प्रतिष्ठा है। भाष्यकार पतञ्जलि, पाणिनि में बड़ी श्रद्धा रखते थे, देखिये—'भगवतः पाणिने राचार्यस्य सिद्धम्। परन्तु त्रुटि निकालने में भी रुके नहीं। ऋऌक् 'नाभ्कलौ 'न वहुब्रीहौ' का खण्डन कर ही डाला। पाणिनि कात्यायन पतञ्जलि इन तीनों से निर्मित यह व्याकरण त्रिमुनि' कहलाता है और तीनों का ही यथोत्तर प्रामाण्य माना जाता है। 'सूत्रार्थोवर्ण्यते यत्र स्वपदानि च' यह भाष्य मात्र का लक्षण है। महाभाष्य के ही आधार पर अमरसिंह ने अमरकोश लिखा है जैसा कि प्रसिद्ध है—'अमरसिंहो हि पापीयान् सर्वभाष्य मचूचुरत्। अमरसिंह महावैय्याकरण था, उसने स्वयं लिखा है—'अहंच भाष्यकारश्च कुशाग्रीयधियावुभौ। नेतौशब्दाम्वुधेः पारंकिमन्ये जड़वुद्धयः॥ पतञ्जलि शुङ्गवशीय पुष्यमित्र के समकालीन थे। पुष्यमित्र ने एक अश्वमेध यज्ञ किया था जिसका वर्णन महाभाष्य में है—'इहपुष्य मित्रं याजयामः' सम्भव है इस यज्ञ के आचार्य ही पतञ्जलि रहे हों। ब्राह्मण सम्राट् पुष्यमित्र ने ग्रीक देश के राजा मिलिन्द (मिनेंडर) को भी हराया था। जबकि उसने अयोध्यादि भारतीय नगरों पर आक्रमण किया यह वर्णन भी महाभाष्य में है—'अरुणद्यवनः साकेतमरुणद्यवनोमध्यमिकाम्' गार्डन साहब इस घटना का समय विक्रम संवत् से ५३ वर्ष पूर्व मानते हैं। अग्निमित्र पुष्यमित्र का ज्येष्ठ पुत्र था, उसके चरित्र परक मालविकाग्निमित्र में कालिदास ने भी इस अश्वमेध यज्ञ का वर्णन किया है। हां अग्निमित्र का कोई निर्देश भाष्यकार ने नहीं किया। पुष्यमित्र की जन्मभूमि विदिशा और राजधानी मगधमें पाटलीपुत्र थी। पुष्यमित्र विक्रम से ५० वर्ष पूर्व तक जीवित था भाष्यकार का भी समय लगभग यही है॥

किं वर्ण्यते महाभाष्य-महत्त्वं खलु पण्डिताः ।
यच्छब्दतोऽति सरलं कठिनं चार्थतो महत् ॥३८॥

महाभाष्य के महत्त्व का वर्णन कहां तक करें जो देखने में सरल परन्तु अर्थ में अतीव गम्भीर है। महाभाष्य टीकाकार कैय्यट ने ठीक लिखा है—'भाष्याब्धिः क्वाति गम्भीरः, क्वाहं मल्पमतिः।'

बुद्धिशत्रु-विरजानन्दजी ने लिखा है 'अष्टाध्यायी महाभष्ये द्वे (एव) व्याकरण पुस्तके'।

भाष्यकार पतञ्जलि ने 'योगदर्शन' नामक एक काव्य भी लिखा है जिसका वर्णन सम्राट् समुद्रगुप्त ने कृष्ण-चरित में किया है। इसी भ्रम से ये योग सूत्र कर्ता माने गये योगसूत्रकार—पतञ्जलि इनसे बहुत पूर्व हुए हैं। तभी व्यास ने 'एतेनयोगः प्रत्युक्तः' लिखा है ॥

योगिराजो भर्तृहरिः भाष्य टीकां प्रदीपिकाम्
विवुधै रादृतं वाक्यपदीयं च विनिर्ममे ॥३९॥

योगिराज—दीर्घजीवी भर्तृ हरि ने महाभाष्य की टीका प्रदीपिका जो अब काशी से प्रकाशित हो गई है। और वाक्य-पदीय ग्रन्थ बनाये। सब ग्रन्थकारों ने भर्तृ हरि के इन दोनों ग्रन्थों को 'हरि' नाम से उद्धृत किया है। तथापि ये भर्तृ हरि नाम से ही प्रसिद्ध हैं यह विक्रमादित्य का भाई माना जाता है। कौन से विक्रमादित्य का भाई था यह निर्भ्रान्त कहना कठिन है, कर्नल विल्फर्ड इसको रामगुप्त (भर्तृहरि) मानता है परन्तु रामगुप्त तो ४३० विक्रमाब्दमें मारागयाथा। देखिये चन्द्रगुप्त द्वितीय सम्बन्धी लेख—'हत्वा भ्रातरमेव राज्य महरत् देवीं ध्रुवस्वामिनीम्' दत्त्वा रूप्य सहस्रकंव्यलिलिखल्लक्षं स चन्द्रो नृपः ॥ अर्थात् चन्द्रगुप्त द्वितीय ने भाई को मारकर राज्य लिया और उसकी स्त्री हरी। और भी चरक टीकाकार चक्रपाणि लिखता है—'भ्रात्रादिवधेन फलेन ज्ञायते यदयं छद्म

प्रचारी चन्द्रगुप्त इति ॥ (विमानस्थान) परन्तु भर्तृ हरि तो चिरंजीवी माना जाता है। वह रामगुप्त नहीं हो सकता। हमारी सम्मति में यह स्कन्द गुप्त विक्रमादित्य का भाई था। इसके अन्य नाम प्रकाशादित्य वत्सभट्टि और भर्तृ हरि थे। कहते हैं कुमारगुप्त-प्रथम ने इसको ही राजा बनाया था, परन्तु यह वैराग्य होने के कारण राज कार्य कम करता था, इसने अपने भाई स्कन्दगुप्त को राजा बना दिया था, जब स्कन्दगुप्त कहीं लड़ने भिड़ने जाता तब यह राज्य करता था। यह बड़ा भारी विद्वान् था और दीर्घजीवी। यह सात वार गृहस्थ से संन्यास में आता जाता रहा। शतकत्रय इसी की कृति है, वैराग्य शतक में इसका संकेत भी है—'समारम्भा भग्ना: कति न कति वारांस्तवपशो ॥ षष्ठ शतक उत्तरार्ध के सुबन्धु ने इसके 'गुरुणा स्तन भारेण' पद्य का वासवदत्ता में हूबहू अनुकरण किया है, यह चन्द्रगोमिन् के शिष्य वसुरात का शिष्य था। चन्द्रगोमि ने ई० ४२७ वि० ४८४ में अपना व्याकरण बनाकर वसुरात को पढ़ाया था। देखिये वाक्यपदीय 'चन्द्राचार्यादि-भिर्लब्ध्वा देशं तस्मात्तदागमत्। प्रवर्तितं महाभाष्यं स्वंचव्याकरणं कृतम् ॥ चन्द्रगोमि ने अपने व्याकरण में एक पद्य रघुवंश से उद्धृत किया है अतः चन्द्रगोमिन् का यह समय ठीक है। भर्तृ हरि पुण्यराज के लेखानुसार चन्द्रगोमी के शिष्य वसुरात से पढ़ा था। कुमारगुप्त-द्वितीय के सम्बन्ध में ५२९ का मन्दसौर लेख इसी भर्तृ हरि का लिखा हुआ है। वास्तव में यह और इसका भगिनी पुत्र बंगाल का राजा गोविन्दचन्द्र-गोपीचन्द्र अमर माने जाते हैं अब भी कई महात्माओं ने इन दोनों के दर्शन किये हैं इनका लोक में स्थिति समय ५५० वि० समय तक था। इसकी स्त्री भानुमती और पुत्र नरसिंहगुप्त बालादित्य था, जो स्कन्दगुप्त विक्रम का उत्तराधिकारी हुआ, स्कन्दगुप्त का कोई पुत्र नहीं था। इसी गोपीचन्द्र के राज्यत्व

काल में बौद्ध-धर्म कीर्ति की मृत्यु हुई थी। गोपीचन्द्र का पुत्र ललितचन्द्र हुआ ॥

धन्यो भर्तृहरिर्योगी येनापूर्वैव कल्पिता।
स्वीय प्रवन्धे शब्दस्य ब्रह्मणश्चैक वाक्यता ॥४०॥

योगिराज भर्तृ हरि धन्यवाद के पात्र हैं, जिन्होंने अपने ग्रन्थ में शब्द और ब्रह्म की एक वाक्यता की है। उन्होंने स्वयं भी लिखा है—'शब्द ब्रह्मणि निष्णातः परंब्रह्माधिगच्छति ॥

वामनेन जयादित्य पण्डितेन च यत्नतः।
पाणिनीय सूत्रवृत्तिः काशिका सुप्रकाशिता ॥४१॥

वामन और जयादित्य ने काशी में रहकर पाणिनीय सूत्रों की काशिका वृत्ति बनाई। सिद्धान्त-कौमुदी के निर्माण से पूर्व पाणिनीय व्याकरण का पठन पाठन सर्वत्र काशिका द्वारा ही होता था। ७५० सन् के इत्सिङ्ग ने काशिका का नाम लिखा है और काशिका में सप्तम शतकपूर्वार्धके महाकवि भारविका उल्लेख है। अतः काशिका का निर्माण समय सप्तम शतक का उत्तर भाग निश्चित है। अष्टम शतक पूर्वार्ध के महाकवि माघ ने—'अनुत्सूत्र पद न्यासा सद्वृत्तिः सन्निवन्धना' पद्यांश से इसी वृत्ति का स्मरण किया होगा। इस वृत्ति से पूर्व भी कुछ वृत्तियां पाणिनीय सूत्रों पर थीं जिनका संकेत महाभाष्य में है ॥

के न दृष्ट्वा प्रसीदन्ति काशिकामिव काशिकाम्।
लिङ्ग सूत्रात्मको यत्र विश्वनाथः प्रतिष्ठितः ॥४२॥

काशी (वाराणसी) की तरह काशिकावृत्ति को देख कर कौन

विद्वान् प्रसन्न नहीं होता है, जिसमें लिङ्ग रूपेण अथवा सूत्र रूपेण भगवान् विश्वनाथ प्रतिष्ठित हैं। ये चतुर्दश सूत्र शिवोपदिष्ट होने से शिवसूत्र कहलाते हैं॥

जिनेन्द्रबुद्धिः कृतवांस्तट्टीकां न्यासनामिकाम्।
हरदत्तो महाशैवः तथैव पदमञ्जरीम् ॥४३॥

विहार देशीय जिनेन्द्र वुद्धि ने काशिका की टीका न्यास, और महा-शैव श्रीकण्ठ के शिष्य कर्णाटिक देशीय हरदत्त पण्डित ने पद-मञ्जरी टीका बनाई। इस न्यास से पूर्व भी कुणि प्रभृति आचार्यों के न्यास थे। जो अब अनुपलब्ध हैं। महाकवि वाण ने अपने ६७७ के हर्ष चरित में 'कृत गुरुपद न्यासा लोक इव व्यकरणेऽपि' यहां किसी न्यास ग्रन्थ का उल्लेख किया है वह सम्भवतः अन्य हो और भामहालंकार में भी एक न्यास का उल्लेख है। भामहका समय षष्ठ और वाण का सप्तम शतक निश्चित है। डा० वेलवल्कर ने जिनेन्द्र वुद्धि का समय अष्टम शतक लिखा है हरदत्त का समय नवम शतक है क्योंकि हरदत्त श्रीकण्ठ का शिष्यथा। श्रीकण्ठका शंकराचार्य जी के साथ शास्त्रार्थ हुआ था ऐसा विद्यारण्य के शंकर दिग्विजय में वर्णित है हरदत्त कैयट से पूर्ववर्तीथा॥

न्यासकारं न को वेत्ति हरदत्तं च पण्डितम्।
ययोर्मतं प्रमाणत्वेनोद्धृतं दीक्षितैरपि ॥४४॥

न्यासकार जिनेन्द्रबुद्धि को और पदमञ्जरीकार हरदत्त पण्डित को कौन वैय्याकरण नहीं जानता। जिन दोनों का मत सिद्धान्त-कौमुदीकार भट्टोजिदीक्षित ने कौमुदी में ... लिया है।

प्रदीपाख्यं महाभाष्यग्रन्थ-व्याख्यानमद्भुतम् ।
प्रणिनाय महाविद्वान् कैय्यटो जैय्यटात्मजः ॥४५॥

कैयट पण्डित ने भर्तृहरि कृत प्रदीपिका व्याख्या के आधार पर महाभाष्य की प्रदीप टीका लिखी। इस प्रदीप से महाभाष्य मन्दिर चमक उठा। इस प्रदीप के विना महाभाष्य का निगूढार्थ समझना कठिन था। कुछ विद्वान् कहते हैं कि—कैय्यट, काव्य-प्रकाशकार मम्मट और वेद भाष्यकार उव्वट का भ्राता था परन्तु यह निश्चयात्मक नहीं कहा जा सकता। क्योंकि कैय्यट ने अपने पिता का नाम जैय्यट लिखा है। और उव्वट ने वज्रट। कैय्यट इतना त्यागी एवं सन्तोषी पण्डित था कि एक दिन से अधिक अन्न अपने घर में नहीं रखता था। सम्भव है देवीस्तोत्र टीका कर्ता दशम-शतकीय कैय्यट यही हो वह भी काश्मीर का ही निवासी था। चन्द्रादित्य जैयट का ही दूसरा नाम रहा होगा।

नमस्तस्मै कैय्यटाय पण्डितेन्द्राय कुर्महे ।
यस्योत्तम-प्रदीपेन दिदीपे भाष्य-मन्दिरम् ॥४६॥

महेश्वर शिष्य कैय्यट पण्डित के लियेबार बार नमस्कार है जिसके प्रदीप से महाभाष्य मन्दिर प्रकाशवान् हो गया है॥

प्रक्रिया-कौमुदी रामचन्द्रेण निरमीयत ।
तत्प्रकाशं रचितवान् शेषश्रीकृष्ण पण्डितः ॥४७॥

काशी निवासी पण्डित रामचन्द्र ने प्रक्रिया-कौमुदी बनाई और दक्षिणी महाराष्ट्र शेषवंशीय शेषकृष्ण पण्डित ने उस की टीका प्रक्रिया

प्रकाश लिखी । इन दोनों के ही आधार पर भट्टोजि दीक्षित ने प्रसिद्ध 'सिद्धान्त कौमुदी' बनाई । पं० रामचन्द्र का समय विक्रमीय पञ्चदश शतक है । और शेष कृष्ण का सप्तदश शतक प्रथम पाद तक, पारिजात हरण चम्पू और कंस वध नाटक इसी वैय्याकरण और महाकवि शेषकृष्ण के हैं । शेषकृष्ण का बड़ा पुत्र शेष वीरेश्वर, पण्डितराज-जगन्नाथ का गुरु और छोटा शेष गोविन्द, मधुसूदन सरस्वती का शिष्य था ॥

किं कौमुदी प्रकाशेन विना केनापि दृश्यते ।
प्रक्रिया कौमुदी तस्मात्प्रकाशेन नियोजिता ॥४८॥

क्या कौमुदी (चन्द्रिका) कदापि प्रकाश के बिना रह सकती है कदापि नहीं । अतः शेषकृष्ण ने प्रक्रिया-कौमुदी पर अपनी प्रकाश टीका लिखी ॥

भट्टोजिः पण्डितवरः पाणिनीय-धुरन्धरः ।
सिद्धान्त-कौमुदीं शब्द कौस्तुभं भाष्यबोधकम् ॥४९॥

सिद्धान्तकौमुदी-व्याख्यां तथा प्रौढ मनोरमाम् ।
निर्माय स्थापयामास यशः परममात्मनः ॥५०॥

श्री शेषकृष्ण के शिष्य भट्टोजि दीक्षित ने सिद्धान्त कौमुदी, शब्द-कौस्तुभ, और 'नकौमुदी भाति मनोरमां विना । न कौमुदी भाति मनोरमां विना ॥ पद्य के अनुसार सिद्धान्त-कौमुदी की प्रौढ़-मनोरमा टीका बनाकर अपना यश दश दिशाओं में फैला दिया । भट्टोजी ने विधि कौमुदी से भी बढ़कर हृदय ग्राहिणी कौमुदी लिखी, जिससे

उसकी इतनी प्रशंसा हुई—'कौमुदी यदि नायाति वृथाभाष्ये परिश्रमः। कौमुदी यदि चायाति भाष्येपि सफलः श्रमः ॥ माना जाने लगा। कौमुदी की कृपा से समस्त-भारत में पाणिनीय—व्याकरण का एकच्छत्र साम्राज्य हो गया। भट्टोजिदीक्षित काशी-निवासी दाक्षिणात्य ब्राह्मण थे। इनका समय सप्तदश शतक उत्तर भाग है। इन्होंने वेदान्त-शास्त्र अप्पय दीक्षित से पढ़ा था, यह इनके वेदान्त-तत्त्वकौस्तुभ ग्रन्थ से स्पष्ट है। भट्टोजी ने किसी विद्वत्सभा में पण्डित-राज जगन्नाथ को प्रसङ्ग-वश म्लेच्छ कह डाला था जिससे चिढ़कर पण्डितराज ने भट्टोजो की मनोरमा का खण्डन कर डाला। भट्टोजी के भाई रङ्गोजी भट्ट के पुत्र कौण्ड भट्ट ने लिखा है—

'बाग्देवी यस्य जिह्वाग्रे नरीनर्ति सदा मुदा।
भट्टोजीदीक्षित महं पितृव्यं नौमि सिद्धये॥

नाकरिष्य द्यदि श्रीमान् भट्टोजिः कौमुदीमिमाम्।
पाणिनीयं नामशेष मभविष्य त्तदा बुधाः ॥५१॥

यदि भट्टोजि दीक्षित, इस सिद्धान्त-कौमुदी को न बनाते तो आज पाणिनीय-व्याकरण का नाम शेष रह जाता। कौमुदी की हृदयङ्गम शैली ने सब व्याकरणों को परास्त कर अपना सिक्का जमा दिया।

कौमुदो मेव संक्षिप्य मध्य सिद्धान्तकौमुदी।
कृता वरदराजेन तथैव लघुकौमुदी ॥५२॥

भट्टोजी दीक्षित के शिष्य तैलङ्ग देशीय भट्ट वरदराज ने सिद्धान्त कौमुदी का सार ग्रहण करके मध्य कौमुदी तथा लघु कौमुदी बनाई।

वरदराज का स्थिति समय विक्रमीय सप्तदशशतक अन्तिम भाग है मध्य-कौमुदी की टीका सदाशिव-दीक्षित ने की ॥

इमे बालोन्मज्जनाय वरदेनानुकम्पिना ।
सिन्द्धान्तकौमुदी सिन्धोः लघुसिन्धू समुद्धृते ॥५३॥

ये मध्यसिद्धान्त कौमुदी और लघुकौमुदी रूपी दो छोटी नदियाँ, छात्रों के अवगाहनार्थ दयालु-वरदराज पण्डित ने महती-नदी सिद्धान्त कौमुदी से निकालीं ।

सिद्धान्त कौमुदी व्याख्यां ज्ञानेन्द्राख्य-सरस्वती ।
गूढ़तत्वाववोधाय निर्ममेतत्त्ववोधिनीम् ॥५४॥

सिद्धान्त-कौमुदी की दूसरी टीका तत्त्ववोधिनी, काशी-निवासी ज्ञानेन्द्र सरस्वती ने लिखी । रसगङ्गाधरकार जगन्नाथ के कथनानुसार ज्ञानेन्द्र, जगन्नाथ के पिता का वेदान्त शास्त्र का गुरु था । जगन्नाथ ने— श्रीमज् ज्ञानेन्द्र भिक्षोः, लिखा है । यदि विज्ञानभिक्षु, विवक्षित होता तो—'श्रीमद् विज्ञान भिक्षोः' लिखता । ज्ञानेन्द्र, वेदान्त शास्त्र का भी विद्वान् रहा होगा यह बात असम्भव नहीं । सुनते हैं—एकबार ज्ञानेन्द्र ने कौमुदी का खण्डन करने का विचार किया था परन्तु भट्टोजी की प्रार्थना पर खण्डन न करके कौमुदी की टीका लिखी ॥

कौण्डभट्टो रचितवान् वैय्याकरण भूषणम् ।
शब्दरत्नं महाविद्वान् हरिदीक्षित पण्डितः ॥५५॥

भट्टोजी के भाई रङ्गोजी भट्ट के पुत्र—कौण्ड भट्ट ने— [illegible] वैयाकरण-भूषण बनाया । और सिंघोर

नरेश-रामराजा के-गुरु हरिदीक्षित ने—भट्टोजी की प्रौढ़-मनोरमा की शब्दरत्न-टीका लिखी। हरिदीक्षित ने वेदान्तसूत्र-वृत्ति में अपना समय 'गजेषुरसभू १६५८ शकाब्द १७९३ विक्रमाब्द दिया है। भूषण की दर्पण और शब्द-रत्न की भैरवी टीका सरल है ॥

किंभूषणं विना भान्ति रम्या अपिहि कारिकाः।
अङ्गना इव तेनात्र भूषणं परिकल्पितम् ॥५६॥

रमणीय होती हुई भी भट्टोजी की कारिकाएं स्त्रियों के समान भूषण विना शोभित नहीं होतीं, अतः कारिकाओं पर उनके भ्रातुष्पुत्र कौण्ड भट्ट ने भूषण व्याख्या लिखी ॥

नागेशोऽकृत मञ्जूषां परिभाषेन्दुशेखरम्।
भाष्यप्रदीपोद्योतंच लघुशब्देन्दुशेखरम् ॥५७॥

हरिदीक्षित के शिष्य नागेश भट्ट ने—मञ्जूषा, परिभाषेन्दु-शेखर, लघु-शब्देन्दु शेखर और महाभाष्य प्रदीपोद्योत पुस्तकें लिखीं। इन सब ग्रन्थों का विद्वत्समाज में आज बड़ा आदर है। मञ्जूषा में दार्शनिक रीति से वैय्याकरण सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है। परिभाषेन्दु में उन परिभाषाओं का व्याख्यान है जो भाष्य वार्तिक में पढ़ी गई हैं। नागेशभट्ट महाराष्ट्र ब्राह्मण था। इसका समय १८१० तक निश्चित है। यह शब्दरत्नकार हरिदीक्षित के बाद उसी राम-राजा की सभा का पण्डित हो गया था। यह अपने गुरु का महान् भक्त था, सर्वत्र अपने ग्रन्थों में इसने लिखा है—'हरिदीक्षित-पादाब्ज सेवनावाप्त सन्मतिः। एवमेव—'शृङ्गवेरपुराधीश रामतो लब्ध जीविकः ॥' नागेश, न्याय योग और

साहित्य-शास्त्र का भी प्रकाण्ड पण्डित था। इसका साहित्य शास्त्र गुरु सम्भवतः पण्डित-राज जगन्नाथ था। तभी इसने उसके रसगंगाधर पर गुरु-मर्म प्रकाश, लिखा ॥

कृत्वा रूपत्रयं शेषो लोकानुग्रहकारकम् ।
योगसूत्र महाभाष्य शेखरादीनकल्पयत् ॥५८॥

भगवान् शेष ने तीन वार अवतार लेकर प्रथम अवतार में—योग सूत्र (योग के गूढ़ रहस्य) द्वितीय में महाभाष्य सूत्र निगूढ़ाथ, और तृतीय में व्याकरण के चूड़ान्त-ज्ञानपूर्ण शेखरादि ग्रन्थ लिखे। तभी नागेश के सभी ग्रन्थ व्याकरण की अन्तिम परीक्षा आचार्य में नियत हैं ॥

सिद्धान्तकौमुदी-टीका नाम्ना बाल-मनोरमा ।
वासुदेवेन सुधिया कृता छात्र-हितार्थिना ॥५९॥

वासुदेव दीक्षित ने—सिद्धान्त-कौमुदी की चतुर्थ टीका-बाल मनोरमा बनाई। वासुदेव, चोल देशीय तंजोर नगराधिपति-सरभाजी तुकोजी भोसले का प्रधान मन्त्री और आनन्दराय मखी का प्रधान पण्डित था। मीमांसा के जैमिनीय सूत्रों की 'कुतूहल-वृत्ति' भी इसने लिखी है। इसका समय अष्टादश शतक का उत्तर भाग है ॥

कौमुद्या मौलिकार्थानां बोधनाय-कृतश्रमः
वासुदेवसुधीः केन विदुषा न प्रशस्यते ॥६०॥

सिद्धान्त-कौमुदीके मौलिक अर्थों को बोधित करने के लिये कृतभूरि परिश्रम वासुदेव [illegible] वैयाकरण पण्डितों से अति प्रशंसनीय है ॥

प्रकाशः फक्किकानां हि इन्द्रदत्तेनर्निमितः
आदर्शः परिभाषाणां शिवदत्तेनधीमता ॥६१॥

पण्डित-इन्द्रदत्त ने सिद्धान्त-कौमुदी की फक्किका (पंक्तियों) पर प्रकाश-ग्रन्थ लिखा—यह पंक्तियों का सर्व प्रथम ग्रन्थ है। हमारे-पितृव्य पण्डित शिरोमणि-शिवदत्त जी शेखुपुरिया ने परिभाषेन्दु की परिभाषाओं पर अद्भुत ग्रन्थ—'परिभाषादर्श' लिखा। श्री पण्डित शिवदत्ता जी प्रतिभाशाली विद्वान् थे। ये काशी से पढ़ कर आये और समस्त आयु पर्यन्त घर पर ही छात्र पढाते रहे॥

शास्त्रान्तरपठितॄणां छात्राणां योपकारिका।
कृता वरदराजेन लघुसिद्धान्त-कौमुदी ॥६२॥

परिष्कृत्यावश्यपाठ भाष्योदाहृतिसाधनैः।
मयका सैव सरला कृता छात्रहितार्थिना ॥६३॥

पंचापविश्वविद्यालयतः प्राप्त-प्रभाकरः।
शास्त्री जीवनरामाख्यः तट्टीकां दीपिकां व्यधात् ॥६४॥

मैंने अपने ज्येष्ठ—भ्राता पं० मूलचन्द्र जी, कनिष्ठ पितृव्य पं० शिवदत्त जी, पण्डित परमानन्द जी ब्राह्मणोली, और पं० हीरालाल जी, अमृतसर, से व्याकरण शास्त्र पढ़ कर पंचनदीय शास्त्री-परीक्षोपयोगी—द्वयाह्निक-महाभाष्य की संस्कृत टीका, तथा हिन्दी टीका और लघुकौमुदी का—पद्योदाहरण और प्रत्येक प्रयोग—साधन द्वारा

सरलीकरण किया। इसकी हिन्दी-टीका अपने चिरञ्जीव पुत्र जीवन राम शास्त्री हिन्दी प्रभाकर एम, लिट् द्वारा करवाई। अर्थात्—

भट्ट वरदराज ने जो लघुकौमुदी बनाई थी उसको हमने परिष्कृत कर सरल बना दिया, जीवन राम शास्त्री ने उसकी सूत्रार्थ-दीपिका टीका लिखी॥

कौमुद्याःसारमादाय वामदेवेन शास्त्रिणा।
कृता हिताय छात्राणां परमा-लघुकौमुदी॥६६॥

हमारे शिष्य, भुंगार का ग्राम-निवासी दिल्ली-प्रवासी वामदेव शास्त्री ने छात्रोंके हितार्थ-परम-लघुकौमुदी लिखी॥

॥इति सटीके विबुधरत्नावलीनाम्नि संस्कृतेतिहासे द्वितीयो ऽध्यायः॥

तृतीयः अध्यायः

यास्केन विहितो योवै वैदिकः शब्द-संग्रहः ।
निघन्टुरिति तस्याख्या पप्रथे लोक वेदयोः ॥१॥

पारस्करदेशीय आचार्य यास्क ने जो वैदिक-शब्दों का संग्रह किया उसका नाम निघण्टु रक्खा । कुछ, निघन्टु को कश्यपकृत मानते हैं वह भ्रम है ॥

तस्यभाष्यं निरुक्ताख्यं यास्केन मुनिना कृतम् ।
कलेः षड्विंश शतके षड्गुरुशिष्य-सम्मतेः ॥२॥

निघण्टु का निरुक्त नामक भाष्य कलि के २६सवें शतक में अर्थात् विक्रम से लगभग चार सौ वर्ष पूर्व स्वयं आचार्य-यास्क ने ही लिखा, ऐसा षड्गुरु-शिष्य का मत है। अब वही सर्व-सम्मति से माना जाता है। षड्गुरु-शिष्य के ये छः गुरु थे, (१) यास्क (२) पाणिनि (३) पिङ्गल (४) कात्यायन (५) शौनक और ६ व्याड़ि। यास्क ने—पाणिनि का सूत्र 'परः सन्निकर्षः संहिता' निरुक्त में उद्धृत किया है, और पाणिनि के शिष्य कौत्स का मत दिया है। पाणिनि ने 'यस्कादिभ्योगोत्रे' लिखा है, और 'शौनकादिभ्यः छन्दसि' शौनकने ऋक्प्रातिशाख्य में यास्क और व्याड़िका नामो ल्लेख किया है, यह सब समान कालिकत्व में ही सम्भव है। महाभारत का पाठ यस्क रहा होगा

यह यास्क उसका गोत्रापत्य होगा । और पुराणों का दीर्घसत्र शौनक भी व्यासशिष्य-सूतसम कालिक ग्रन्थ रहा होगा ॥

यास्कस्तु यास्क एवास्ति नैव तस्योपमा क्वचित् ।
यन्निरुक्तंविना वेदा नैव वेद्याः कथंचन ॥३॥

भगवान् यास्क की उपमा किसी से नहीं की जा सकती, क्योंकि जिसके निरुक्त नामक भाष्य के विना वेद सम्यग् वेद्य नहीं ॥

स्कन्दस्वामिप्रदीप्तेऽपि निरुक्ते यास्क मन्दिरे ।
दुर्गेणैव कृतः सम्यक् प्रकाशो व्याख्यया स्वया ॥४॥

यद्यपि-स्कन्द स्वामी ने अपने भाष्य से निरुक्त-मन्दिर चमका दिया था, तथापि उसका अधिक प्रकाश दुर्गाचार्य के ही भाष्य से हुआ । इसी दुर्गाचार्य ने कातन्त्र-व्याकरण की दुर्गवृत्ति लिखी होगी । उसमें भोज-राजा का निर्देश है और भारवि और मयूर के पद्यांश, अतः दुर्गाचार्य का समय (१०७२) के भोज राजा के आस पास का है । अमरकोशकर्ता-अमरसिंहा पर नामक दुर्गसिंह की वह वृत्ति नहीं हो सकती उसका समय षष्ठशतक था ॥

दुर्गाचार्यस्य टीकातः सारमाकृष्य यत्नतः
परीक्षाख्या मया व्याख्या कृता छात्रहितार्थिना ॥५॥

मैंने दुर्गाचार्य की टीका से सार ग्रहण करके छात्रों के हित के लिये परीक्षा-नाम्नी संस्कृत व्याख्या लिखी ॥

छन्दः शास्त्रप्रणेताऽभूत् पिङ्गलो मुनिसत्तमः ।
पाणिने रनुजो भ्राता षड्‌गुरु-शिष्य सम्मतेः ।।६।।

छन्दः शास्त्र के आदि प्रणेता मुनिवर पिङ्गल ने—पिङ्गल नामक ग्रन्थ लिखा और पाणिनीय शिक्षा पिङ्गल, दाक्षी और पाणिन के पुत्र पाणिनि के अनुज भ्राता थे। यह बात षड्‌गुरु शिष्य ने स्पष्ट की है जो माननीय भी है। पिङ्गल का समय विक्रम से लगभग चार सौ वर्ष पूर्व है। पिङ्गल ने 'उरोवृहती-यास्कस्य' लिखा है, यास्क और शौनक ने छन्दों का विवेचन किया है जो पिङ्गल के ही आधार पर रहा होगा यह सब समकालिकत्व में ही सम्भव है। पिङ्गल की मृत्यु मगरमच्छ द्वारा हुई।

लक्ष्यानुसारिणा तेन मुनिना पिङ्गलेनवै ।
छन्दोऽत्र द्विविधं प्रोक्तं वैदिकं लौकिकं तथा ।।७।।

मुनिवर पिङ्गल ने लक्ष्य के अनुसार छन्द दो प्रकार के कहे हैं, वैदिक और लौकिक। वेद में प्रयुज्यमान वैदिक गायत्र्यादि, और लोक में प्रयुज्यमान लौकिक अनुष्टुवादि ।।

छन्दसां श्रुतमात्राणां छात्राणां वोधकाम्यया ।
श्रुतवोधः कृतोग्रन्थः कालिदासेन केन चित् ।।८।।

छन्दों के श्रवणमात्र से छन्दोज्ञान कराने के लिये ज्योतिर्विदा भरणकार-कालिदास ने श्रुतवोध नामक ग्रन्थ लिखा। इससे सरल छन्दोग्रन्थ आज तक दूसरा नहीं बन पाया। यह तृतीय कालिदास की कृति है जिसका समय [illegible] है ।।

केदार भट्टः कृतवान् ग्रन्थं छात्र कृते हितम् ।
वृत्तरत्नाकरं नाम लक्ष्य-लक्षण-संयुतम् ॥९॥

केदार भट्ट ने लक्ष्य लक्षण संयुक्त 'वृत्त-रत्नाकर' नामक छन्दोग्रन्थ लिखा । केदार भट्ट का समय विक्रमीय त्रयोदश शतक निश्चित है, यह काश्मीरिक शैव पण्डित था, वृत्त-रत्नाकर पर नारायण भट्ट की टीका है ॥

गङ्गादासेन विदुषा छन्दसां द्रुतवोधकृत् ।
सरला सुन्दरी छन्दो-मञ्जरी विहिता हिता ॥१०॥

पण्डित गङ्गादास ने छन्दों का शीघ्र-बोध कराने वाली सरल-छन्दोमञ्जरी बनाई, गङ्गादास का समय षोड़श शतक है ॥

वाग्वल्लभं कलितवान् कविश्री-दुःखभञ्जनः ।
छन्दसां संग्रहो यत्र वर्तते विस्तरेण वै ॥११॥

काशी के सुप्रसिद्ध कविवर दुःख भञ्जन ने वाग्वल्लभ ग्रन्थ रचा । और उनके पुत्र म० म० कवि देवीप्रसाद ने उसकी टीका लिखी । देवीप्रसाद की मृत्यु १९८८ विक्रमाब्द में काशी में हुई ॥

आदिना ज्यौतिषं ग्राह्यं यत्प्रशंसोच्यते बुधैः ॥
प्रत्यक्षं ज्यौतिषं शास्त्रं चन्द्रार्कौ यत्र साक्षिणौ ॥१२॥

आदि शब्द से ज्यौतिष शास्त्र का ग्रहण है जिस की प्रशंसा यह है कि—सब शास्त्रों में ज्यौतिष शास्त्र प्रत्यक्ष-प्रमाण सिद्ध है जिसमें सूर्य और [illegible] दोनों साक्षी हैं ॥

भृगुः स्वसंहितां चक्रे कृतादाविति शुश्रुमः ।
द्वापरे कृतवान्पाराशरीं मुनिपराशरः ॥१३॥

सर्व प्रथम महर्षि-भृगु ने सत्ययुग के आदि में भृगु-संहिता लिखी। यह फलित ज्यौतिष का सर्वप्रथम ग्रन्थ है। जिसके कुछ अंश अब भी काशी मेरठ आदि में उपलब्ध होते हैं। जिस व्यक्ति के पास इसका थोड़ा भी अंश है वह मालोमाल हो गया है। भृगु वैदिक ऋषि है, उसीके नाम से गोत्र भार्गव प्रसिद्ध है। महर्षि पराशर ने द्वापर में पाराशरी ग्रन्थ लिखा। यही पराशर वेदव्यास जी के पिता थे ॥

व्यतनोद् द्वापरान्तेहि गर्गाचार्यः स्वसंहिताम् ।
सूर्य-सिद्धान्त मातेने कलेरादौ मयासुरः ॥१४॥

आचार्य-गर्ग मुनि ने द्वापर के अन्तिम भाग में गर्ग-संहिता लिखी। यह गर्गाचार्य, वसुदेवादि यदुवंशी क्षत्रियों का पुरोहित था। कलि के आदि में मयराष्ट्र (मेरठ) के राजा मयनामक असुर ने सूर्य-सिद्धान्त नामक ग्रन्थ लिखा, जिसके ऊपर भास्कराचार्य ने सिद्धान्त-शिरोमणि टीका लिखी ॥

वृहज्जातक मातेने वृहत्संहितया सह ।
वराहमिहिराचार्यः पंचसिद्धान्तिकां तथा ॥१५॥

वराहमिहिर, आदित्यदास के पुत्र थे। ये अवन्ति उज्जयिनी में ही रहा करते थे। इन्होंने ज्यौतिष-शास्त्र का अध्ययन अपने पिता से ही किया था। यह ...

'आदित्यदास-तनयः तदवाप्तवोधः काम्पिल्लके सवितृ लब्ध वर प्रसादः। आवन्तिको मुनि-मतान्यवलोक्य सम्यक् होरां वराह-मिहिरो रुचिरां चकार ।। ये सूर्यो पासक थे, सूर्य के वरदान से ही चमत्कारी ज्यौतिषी हुए। कतिपय ऐतिहासिक कहते हैं कि वराह मिहिर मगध-निवासी थे पश्चात् विक्रम-सभारत्न होने पर अवन्ति में रहने लगे थे। वराह मिहिर ने अपने से पूर्ववर्ती आचार्य-आर्यभट्ट का नाम पंचसिद्धान्तिका में नामोल्लेख पूर्वक दिया है 'लङ्कार्धरात्र-समये दिन प्रवृत्ति जगाद-चार्यभटः। आर्य-भट्ट ने अपना जन्म समय ३९८ शकाब्द दिया है और ग्रन्थ का निर्माण समय ४२१ शकाब्द है। वराह-मिहिर ने अपनी पंच सिद्धान्तिका का निर्माण समय 'सप्ताश्वि वेदसंख्य ४२७ शाक दिया है यह वराह की सर्वप्रथम-कृति है, वराह-मिहिर यशोधर्म विक्रम का सभा रत्न था। इसके सब ग्रन्थों पर भट्टोत्पल की टीकाएँ हैं। वराह मिहिर ने वृहज्जातक में सिद्धसेन-दिवाकर का नामोल्लेख किया है। सिद्धसेन-दिवाकर भी यशोधर्म विक्रमादित्य का सभारत्न था। जैसा कि ज्योतिर्विदाभरण में लिखा है—'धन्वन्तरिः (हरिश्चन्द्र वैद्य) क्षपणकः (सिद्धसेन-दिवाकर) यही बात प्रभावक-चरित में लिखित है। 'श्री सिद्धसेन सूरे दिवाकराद्बोधमाप्य तीर्थेऽस्मिन्। उद्धारं ननु विदधे राजा श्री विक्रमादित्यः ।। यह विक्रमादित्य यशोधर्म विक्रमादित्य था। इसी पद्य में ज्योतिर्विदाभरणकार ने 'ख्यातो वराह-मिहिरो नृपतेः सभायाम्' लिखकर अपने समय में बराह मिहिर को ख्याति प्राप्त ज्यौतिषी लिखा है। बराह-मिहिर शतायुः होकर मृत्यु को प्राप्त हुआ था अतः वह यशोधर्म विक्रम का सभा रत्न रहा होगा, असंगत नहीं। खण्डखाद्य करण की टीका में आमराज ने वराह-मिहिर की मृत्यु शाक ५०९ विक्रमाब्द ६४४ में मानी है जो प्रकृत में ठीक बैठती है ॥

विक्रमार्क-सभारत्नं कालिदासो हि दैववित् ।
यथार्थ-नामकं ज्योतिर्विदाभरणमातनोत् ॥१६॥

मन्दसोरवास्तव्य नृपसखा तृतीय कालिदास ने ज्योतिर्विदाभरण नामक ज्यौतिष ग्रन्थ लिखा । इसने यह ग्रन्थ वराह-मिहिर के मतानुसार लिखा है—'ज्ञात्वा वराह-मिहिरस्य मतम् (ज्योतिर्विदाभरण) ज्योतिर्विदाभरण निर्माण काल इसने वराह मिहिर के मतानुसार ही ३०६८ कलि-वर्ष दिया है। वराह-मिहिर का मत है कि 'आसन्मघासुमुनयः शासति पृथिवीं युधिष्ठिरे नृपतौ । षड्द्विक पंचद्वियुतः शककालः तस्य राज्ञश्च ॥ अर्थात् ३०६८ में से २५६६ वर्ष निकाल देने पर ६३७ विक्रमाब्द ज्योतिर्विदाभरण-निर्माण काल आता है जिस समय यशोधर्मन् जीवित था । यशोधर्म-विक्रमादित्य ने ६० वर्ष राज्य किया था यह प्रसिद्धि है, इसमें लिखा है कि कालिदास ने रघुवंश आदि तीन काव्य लिखे फिर कुछ और ग्रन्थ तदनन्तर मुझ कालिदास नामक ही'व्यक्ति ने ज्योतिर्विदाभरण लिखा । शाक प्रवंतक विक्रम सातवाहन विक्रम हुआ । 'मत्तोऽधुना कृतिरियं सति मालवेन्द्रे श्री विक्रमार्कन्टपराजवरे समासीत् । यद्राजधान्युज्जयिनी महापुरी सदा महाकाल-महेश योगिनी ॥ कुमार गुप्त प्रथम के समय से गुप्तों की दूसरी राजधानी उज्जयिनी हो गई थी, स्कन्द गुप्त-विक्रमादित्य वहां रहने भी लगा होगा, परन्तु ज्योतिर्विदाभरण निर्माण काल ६३७ विक्रमाब्द स्कन्द गुप्त के समय में संगत नहीं होता । स्कन्द-गुप्त केवल मालवेन्द्र था भी नहीं वह तो भारतेन्द्र था । अतः बहुत संभव है यह मालवेन्द्र यशोधर्मन् विक्रमादित्य हो । यशोधर्मन् कौन था, गुहसेन (गन्धर्व सेन का पुत्र श्रीधरसेन, (धर्मसेन) द्वितीय, यह पहले भानुगुप्त बालादित्य ५८६ का सामन्त था । इसके प्रथम शिला

लेख में सामन्त-महाराज लिखा है। इसने ५८६ से ६०० के मध्य में हूण मिहिरकुल को पराजित किया था। देखिये—'चूड़ा पुष्पोपहारैः मिहिर-कुल नृपेणार्चितं पाद युग्मम्' इस जय के बाद इसने अपनी राजधानी उज्जयिनी बना ली होगी, और वहां का युवराज अपना पुत्र शीलादित्य प्रथम (धर्मादित्य) बना दिया था डा० होर्नले हर्षवर्धन की माता यशोमती को इस शीलादित्य की बहन मानता है, जिससे यशोधर्मन् (श्रीधरसेन) शीलादित्य और यशोमती का पिता सिद्ध होता है। पुत्र की धर्मादित्य पदवी पिता-श्रीधरसेन का विक्रमादित्य पदवी धारण करना सिद्ध करता है, कुछ ऐतिहासिक, मातृविष्णु के छोटे भाई धर्म विष्णु या विष्णुधर्मन् को यशोधर्मन् मानते हैं, और कुछ चालुक्य पुल-केशी के छोटे भाई विष्णुवर्धन को यशोधर्मन् मानते हैं परन्तु इन दोनों का समय यशोधर्म के विक्रम संवत् ५८६ के शिलालेख से संगति नहीं खाता, अतः निःसन्देह श्रीधरसेन (धर्मसेन) ही यशोधर्मन् था। इनकी मुख्य राजधानी वलभी थी जो ह्यूनसांग के लेखानुसार विद्या और विद्वानों का केन्द्र था। भागवत में दश आंध्र भृत्य (गुप्तों) के बाद ये ही गुहसेनादि (गर्दभिल्ल) राजा माने हैं, यशोधर्म के तीन लेख मन्दसोर से मिले हैं। पहले लेख का समय ५८९ मालव संवत् है।

'अथ जयति जनेन्द्रः श्री यशोधर्म नामा,
प्रमद बन भिवान्तः शत्रु सैन्यं बिगाह्य।

आगे लिखा है—'आजौ जितीं विजयते जगतीं पुनश्च। श्री विष्णु-वर्धन नराधिपतिः सएव ॥

इसका पाठान्तर मिला है—'श्री धर्मसेन इति यः प्रथिताभिधानः' तब सम्भव है कि यही श्रीधरसेन यशोधर्मन् होगा। इसने अपने हूण [illegible] के उपलक्ष्य में वे लेख लिखवाये होंगे विक्रमादित्य पदवी

धारण कर मालव संबत् को बिक्रम संवत् में परिवर्तित किया। चीनी यात्री इत्सिंग ने वलभी को पश्चिम-मालव लिखा है इसलिए भी यह राजा मालवेन्द्र कहलाता होगा। जिन प्रदेशों पर गुप्त राजा और हूणों का भी अधिकार नहीं था वे भी प्रदेश इसने जीत लिये थे, ये मैत्रक (सूर्य) वंशी क्षत्रिय थे देखिये श्रीधरसेन द्वितीय का ६२८ विक्रम संवत् का दानपत्र। 'स्वस्ति श्री बलभीतः प्रसभ-प्रणता-मित्राणां, मैत्रकाणां' इस धरसेन के सं० ६४८ तक और इस शीलादित्य के ६६६ तक के लेख मिले हैं

यशोधर्म के एक शिला लेख में इनका वंश 'ओलिकर' लिखा है। ओलिकर सम्भवतः प्राकृत में सूर्य का नाम होगा। श्रीधरसेन के पुत्र प्रथम शीलादित्य पर किसी शत्रु ने आक्रमण किया था प्रवरसेन द्वितीय नें उसको समझा कर भगा दिया था, देखिये राज-तरंगिणी—

'वैरिनिर्यासितं राज्ये विक्रमादित्यजं न्यधात्।
पित्र्ये प्रताप-शीलं स शीलादित्यपराभिधम्॥

इस शीलादित्य को डा० होर्नले देवगुप्त मानते हैं और कहते हैं कि पिछले गुप्तों की वंशावली में देवगुप्त का नाम कहीं भी नहीं है अतः श्रीधरसेन (यशोधर्म) के पुत्र शीलादित्य प्रथम का ही एक नाम देवगुप्त था, जिस पर राज्यवर्धन हर्षवर्धन के भाई ने आक्रमण किया था, श्रीधरसेन-यशोधर्मन् विक्रमादित्य के ही धन्वन्तरि आदि निम्नलिखित नवरत्न थे १. धन्वन्तरि-उपनामधारी हरिचन्द्र-वैद्य, २. क्षपणक—सिद्धसेन-दिवाकर, ३. अमरसिंह-अमरकोश-कर्ता, ४. शंकुक-भरतसूत्र टीकाकार, हर्षवर्धन सभा-कवि मयूर भट्ट का पिता, ५. बेताल भट्ट-रुद्र यामल तन्त्र कर्ता, ६. घटखर्पर कवि-एतन्नामक काव्य-कर्ता, इसी की प्रतिद्वन्द्विता में नलोदय काव्य बना, ७. कालिदास-ज्योतिर्विदाभरणकार, ८. वराह मिहिर-प्रागुक्त, ९. वररुचि-यह विक्रम का पुरोहित भी था।

इसने अपनी पत्र-कौमुदी में लिखा है—

'विक्रमादित्य-भूपस्य कीर्ति-सिद्धेः निदेशतः ।
श्रीमान् वररुचिर्धीमान् तनोति पत्र-कौमुदीम् ॥

सुबन्धुकवि इस वररुचि का भनिनी पुत्र था । ज्योतिर्विदा-भरणकार कालिदास ने श्रुतबोध नलोदय शृंगार-तिलकादि अन्य ग्रन्थ भी लिखे थे । राजशेखर ने सूक्ति-मुक्तावली में—

'शृङ्गारे ललितोद्गारे कालिदासत्रयी किमु'

लिखकर इन्हीं तीनों कालिदासों का निर्देश किया होगा ॥

**ब्रह्मगुप्तः खण्डखाद्यं करणं महदद्भुतम् ।
चकार भोजराजश्च राजमार्तण्ड नामकम् ॥१७॥**

जिष्णु-गुप्त पुत्र ब्रह्मगुप्त ने खण्ड-खाद्य नामक करण ग्रन्थ लिखा । यह ग्रन्थ इसने ५८७ शक में बनाया था । ब्रह्म-गुप्त के खण्ड-खाद्य पर पृथूदक स्वामी की टीका है । इस ग्रन्थ की समाप्ति में ब्रह्मगुप्त ने लिखा है—

'ब्राह्मः स्फुट सिद्धान्तः सज्जन गणितज्ञ गोल वित्प्रीत्यै ।
त्रिंशद्बर्षेण कृतो जिष्णु-सुत ब्रह्म गुप्तेन ॥

इसी खण्डखाद्य ग्रन्थ का प्रतिविम्ब भास्कराचार्य का शिरोमणि ग्रन्थ है । ग्रन्थ का निर्माण प्रयोजन भी ब्रह्म-गुप्त ने स्वयं लिखा है—

ब्रह्मोक्तं ग्रह गणितं महता कालेन यत् खिली भूतम् ।
अभिधीयते स्फुटं तत् जिष्णुसुत—ब्रह्म गुप्तेन ॥

ब्रह्मगुप्त के इस ग्रन्थ की टीका भट्ट उत्पल कृत भी है । महाराजा-
[illegible] राज
भोजका दानपत्र १०७८ सं० का उपलब्ध है । राजा भोज पण्डितों

का महान् आश्रयदाता, तथा स्वयं सब शास्त्रों का ज्ञाता था। इसके विषय में एक शिला लेख में लिखा है—

'साधितं विहितं दत्तं ज्ञातं तद्यन्न केनचित्।
किमन्यत्कविराजस्य श्री भोजस्य प्रशस्यते ॥

भोज के उत्तराधिकारी जयसिंह का ११०६ का शिला लेख भी प्राप्त है ॥

**अकरोद् भास्कराचार्यो ज्योतिर्विद्याविदग्रणीः।
लीलावतीं बीज-गणितं सिद्धान्त-शिरोमणिम् ॥१८॥**

महेश्वरोपाध्याय के पुत्र ज्योतिर्वित्-शिरोमणि भास्कराचार्य ने लीलावती, बीज गणित, और सिद्धान्त-शिरोमणि ग्रन्थ लिखे। भास्कराचार्य, शाण्डिल्य वंश में हुए। कविशिरोमणि-भट्ट त्रिविक्रम इसी भास्कराचार्य का पूर्वज था। भास्कराचार्य, विज्जड़विड़ (वीजापुर) के रहने वाले थे। इनका निश्चित समय १०३६ शकाब्द है। भास्कराचार्य,सर्वतन्त्र-स्वतन्त्र विद्वान् था। लीलावतीपर-गङ्गाधर, गणेश देवज्ञ की, वीजगणित पर कृष्ण दैवज्ञ की और सिद्धान्त-शिरोमणि पर नृसिंह-दैवज्ञ मुनीश्वर-दैवज्ञादि की टीकाएं हैं। यही भास्कराचार्य, संन्यास लेने के अनन्तर निम्बार्क स्वामी कहलाये ॥

**कामधेनुं रचितवान् महादेवो महामतिः।
ज्योतिर्विन्मकरन्देन सारणी रचिताद्भुता ॥१९॥**

महादेव-ज्योतिर्वित् ने-कामधेनु नामक-करण ग्रन्थ लिखा। यह ... त्र्यम्बकाख्य नृपति के सभासद परम प्रसिद्ध-वोपदेव पण्डित

का पुत्र था। इसका ग्रन्थ निर्माण समय १२७६ शक संवत् था। पूर्व समय में कामधेनु-ग्रन्थ का महान् प्रचार था। इस ग्रन्थ पर रामदैवज्ञ के पिता अनन्त-दैवज्ञ की टीका है। दैवज्ञ मकरन्द ने तिथ्यादि साधनार्थ विक्रमीयचतुर्दश शतक में अपने ही नाम से सारणी लिखी। मकरन्द दैवज्ञ, काशी निवासी था। यह सारणी फलित ग्रन्थ है ॥

ज्योतिर्वित्केशवः चक्रे पद्धतिं केशवीं तथा।
गणेशः तत्सुतो विद्वान् करणं ग्रहलाघवम् ॥२०॥

कौशिक गोत्रीय केशव दैवज्ञ ने ताजक-पद्धति-केशवी, और उसके पुत्र गणेश-दैवज्ञ ने करण-ग्रन्थ ग्रह-लाघव रचा। केशव का जन्म शक १३७८ के लगभग है यह पश्चिम-समुद्र तीरवर्ती किसी नन्दि ग्राम का निवासी था। इसने मुहूर्ततत्त्वादि अन्य भी कई ग्रन्थ लिखे हैं। केशव पुत्र-गणेश-दैवज्ञ, ज्योतिर्विदों में गणेशावतार माना जाता है। यह गणित-शास्त्र का सर्वश्रेष्ठ विद्वान् था। गणेश ने ग्रह-लाघव के अतिरिक्त भास्कराचार्य की सिद्धान्त-शिरोमणि और लीलावती की टीकाएँ भी लिखी हैं। जैसा कि गणेशने लालावती टीका में स्वयं लिखा है—

'ज्योतिर्वित्कुल मण्डनो द्विजपतिः श्री केशवोजीजनत्
यं लक्ष्मीश्च समस्तशास्त्र निपुणं श्रीमद्गणेशाभिधम्।
अस्यां बुद्धिविलासिनी-समभिधौ लीलावती-व्याकृतौ
तत्कृत्यां परिकर्मणां निरगमात्प्रस्पष्ट मत्राष्टकम् ॥

अनन्तदैवज्ञश्चक्रे पद्धतिं जातके तथा।
तत्सूनुःनीलकण्ठश्च नीलकण्ठीं च जातके ॥२१॥

अनन्त दैवज्ञ, विदर्भदेशीय ... निवासी था। यह चिन्तामणि

दैवज्ञ का पुत्र और नील-कण्ठ तथा राम-दैवज्ञ का पिता था। इसका स्थिति समय १५३८ तक था इसकी दो कृतियाँ हैं—जातक पद्धति तथा कामधेनु टीका। नीलकण्ठ इसी अनन्त दैवज्ञ का पुत्र था, उसने ताजिक नीलकण्ठी ग्रन्थ लिखा। यह नीलकण्ठी फलित ज्यौतिष की अद्‌भुत कृति मानी जाती है। इसका निर्माण समय स्वयं नीलकण्ठ ने अन्त में दिया है—

'शाकेनन्दाभ्रबाणेन्दु (१५०९) मिते आश्विनमासके।
शुक्लेऽष्टम्यां समातन्त्रं नीलकण्ठबुधोऽकरोत् ॥

यह नीलकण्ठ, सम्राट् अकबर की सभा का प्रधान पण्डित था ॥

मुहूर्त-चिन्तामण्याख्यो ग्रन्थो रामेण निर्मितः।
ग्रन्थो मुहूर्तमार्तण्डस्तथा नारायणेन वै ॥२२॥

अनन्त दैवज्ञ के पुत्र तथा नीलकण्ठ के अनुज भ्राता राम दैवज्ञ ने १५२२ शकाब्द में मुहूर्त चिन्तामणि ग्रन्थ लिखा। आज समस्त भारत के मुहूर्त-ग्रन्थों में यह ग्रन्थ सर्वश्रेष्ठ माना जाता है।

मुहूर्त चिन्तामणि पर इनके भ्रातुष्पुत्रगोविन्द दैवज्ञ की पीयूषधारा टीका है। टापर ग्राम निवासी नारायण दैवज्ञ ने मुहूर्तमार्तण्ड ग्रन्थ लिखा। यह भी मुहूर्त-ग्रन्थ अति प्रसिद्ध है। १४९३ शक में नारायण ने इस ग्रन्थ को लिखा था इसकी टीका भी ग्रन्थ कृत ही है ॥

जातकालंकृतिं चक्रे श्रीगणेशः कवीश्वरः ।
हायनरत्न संज्ञं च बलभद्र स्तथाद्भुतम् ॥२३॥

तापीनदी तीरवर्ती सूर्यपुर ग्राम निवासी गोपाल दैवज्ञसुत-गणेश दैवज्ञ ने जातकालंकार ग्रन्थ लिखा। गणेश, शिव-दैवज्ञ का शिष्य गुर्जर ब्राह्मण था। इसने अपना जातकालंकार १५३५ शकाब्द में बनाया था। फलादेशकथन में—यह ग्रन्थ अत्युत्तम माना जाता है। इस ग्रन्थ में सात अध्याय हैं। कविता चमत्कार विशिष्ट है, दामोदर दैवज्ञ के पुत्र बलभद्र ने हायनरत्न ग्रन्थ बनाया। यह कन्नोज का निवासी था। वर्ष-फल कथन में इस ग्रन्थ की बड़ी प्रसिद्धि है। यह दिल्ली सम्राट् शाहजहाँ के पुत्र शूजा का प्रिय पण्डित था। इसने लिखा है—

'पृथ्वीपति महावीर श्रीमत्साहिशुजान्तिके ।
श्रीराजमहल स्थेन मया ग्रन्थो विनिर्मितः ॥

इसका स्थिति समय १५६५ शकाब्द तक निर्धारित है।

ज्योतिर्विदां शिरोरत्नं काशिनाथो महामतिः ।
शीघ्रबोधाय लोकानां शीघ्रबोधमरीरचत् ॥२४॥

काशीनाथ दैवज्ञ ने प्रसिद्ध-ग्रन्थ शीघ्रबोध लिखा। काशीनाथ, रामचन्द्रिकाकार-महाकवि केशव का पुत्र था। इसका समय लगभग षोड़श शतक है ॥

कुरुक्षेत्र पार्श्ववर्तिनीन्द्रीग्रामेनिवासिना ।
नित्यानन्देन सिद्धान्तराजग्रन्थोविनिर्मितः ॥२५॥

श्री नित्यानन्द गौड़, कुरुक्षेत्र (थानेश्वर नगर) समीपवर्ती-इन्द्रीग्राम का निवासी था। इसने १६९६ संवत् में सिद्धान्त-राज ग्रन्थ लिखा। यह पं० देवदत्त का पुत्र था।

'नित्यानन्द स्तस्यपुत्रो द्विजानामाज्ञाकारी सूर्यलब्ध प्रसादः।
षड्गोभूपैः १६९६ विक्रमार्कस्यशाकेयातेचक्रे सर्वसिद्धान्तराजम्॥

इस पुस्तक की एक हस्तलिखित प्रति सरस्वती-भवन काशी में रक्षित है।

चक्रे सिद्धान्तसम्राजं जयसिंहनृपाज्ञया।
ज्योतिर्विद्याविदांसम्राट् जगन्नाथइतिश्रुतः॥२६॥

जयपुर नरेश जयसिंह के सभा-पण्डित जगन्नाथ सम्राट् ने १५७४ में सिद्धान्त-सम्राट् ग्रन्थ बनाया। इस ग्रन्थ में १३ अध्याय हैं। ग्रन्थ के आरम्भ में लिखा है—

'ग्रन्थं सिद्धान्तसम्राजं सम्राट् रचयति स्फुटम्।
तुष्टयैश्रीजयसिंहस्य जगन्नाथाह्वयः कृती॥
'अरबीभाषया ग्रन्थोमिजास्तीनामकःस्थितः।
गणकानां सुबोधाय गीर्वाण्या प्रकटीकृतः॥

लीलावत्याष्टीकावापूनाम्नाकृता नृसिंहेन।
करणकुतूहलटीका श्रीमत् सुधाकरेणोक्ता॥२७॥

काशी के म० म० बापूदेव शास्त्री ने १९३१ विक्रम में लीलावती

की टीका लिखी। और काशी के ही म० म० सुधाकर द्विवेदी ने १९४६ विक्रम में करण-कुतुहल की टीका लिखी॥

ज्योतिस्तत्त्वं मुकुन्देन प्रत्यक्ष-ज्यौतिषं मया।
संगृहीते वुधकृते सर्वज्ञत्वस्य काम्यया ॥२८॥

पर्वतीय मुकुन्दज्यौतिषी ने ज्यौतिषसर्वज्ञानार्थ ज्यौतिष-तत्व, और मैंने प्रत्यक्ष-ज्यौतिष ग्रन्थ लिखा॥

॥इति विवध-रत्नावली नाम्नि संस्कृतेतिहासे वेदोपवेद निरूपणं नाम तृतीय अध्यायः समाप्तः॥

चतुर्थ अध्यायः

अथतत्रभवानासीत्कणादो मुनिपुङ्गवः ।
यश्चकार जगद्भूत्यै शास्त्रं वैशेषिकंमहत् ॥१॥

महर्षि कणाद ने वैशेषिक दर्शन लिखा । कणाद कश्यप गोत्रीय मैथिल ब्राह्मण थे । व्याकरण शास्त्रवत् कणादशास्त्र (न्याय) भी सर्व-शास्त्रोपकारक माना है ।

'काणादं पाणिनीयं च सर्वशास्त्रोपकारकम् ॥

किञ्च—'वादारम्भे वदितु मनसो वाक्यमेकंसभायाम्,
प्रह्वा जिह्वा स्त्यपरिकलित न्यायशास्त्रस्य पुंसः ॥

श्लोकवार्तिक में भट्ट कुमारिल ने, वैशेषिक दर्शन का एक नाम 'औलुक्य' दर्शन भी लिखा है । कहते हैं कि तपस्या करते समय महर्षि कणाद को भगवान् शंकर ने उलूक रूप धारण करके इस शास्त्र का उपदेश किया था । यह बात इसके भाष्यकार के लेख से भी अनुमत होती है । यथा—

'योगाचार विभूत्या यः तोषयित्वा महेश्वरम् ।
चक्रे वैशेषिकं शास्त्रं तस्मैकणभुजेनमः ॥

'नवयंषट्पदार्थवादिनो वैशेषिकादिवत्' इस सांख्य सूत्र के 'महद्दीर्घवद्वा ह्रस्वपरिमण्डलाभ्याम्' इस वेदान्त सूत्र के और 'कर्म के तत्र दर्शनात्' इस पूर्व-मीमांसा सूत्र के देखने से ज्ञात होता है कि यह दर्शन सांख्य मीमांसा वेदान्त दर्शनों से प्राचीन है। न्याय भाष्यकार के लेखानुसार न्याय-दर्शन से भी प्राचीन है। इसमें दस अध्याय हैं। कणाद द्वापर में विद्यमान थे। शिलान्न खाकर तपस्या किया करते थे।

महाभारत उद्योग पर्व के अनुसार अम्बा उलूक के आश्रम में गई थी। कणाद का एक नाम उलूक भी था। ह्यूनचाङ्ग के शिष्य कहवाई ने उलूक को महाभारतकाल से पूर्ववर्ती पंच शिख का समकालिक माना है॥

प्रशस्तपादः कृतवानक्षपादाऽपराभिधः ।
प्रशस्तपाद-भाष्यं च न्यायदर्शनमेवच ॥२॥

हिमालयजन्मा-महर्षि गोतम (अक्षपाद) ने कणाद सूत्रों का प्रशस्तपाद नामक भाष्य, तथा न्याय-दर्शन लिखकर तर्कवाद का सूत्रपात किया, इसमें अनादिसिद्ध-बौद्ध जैन और जैमिनी के भी मतों का खण्डन किया गया है। गोतम का नाम— ऋग्वेद-संहिता तथा उपनिषदों में भी उपलब्ध होता है। गोतम, महर्षि-अङ्गिरा के प्रपौत्र थे। अहल्या आपकी धर्मपत्नी और पुत्र शतानन्द था। आपका निश्चित समय त्रेता युग से आरम्भ कर द्वापर के अन्त तक है। महाभारत के शान्ति पर्व में— व्यास जी ने लिखा है—

'न्यायतन्त्राण्यनेकानि तैस्तैरुक्तानि यद्यपि ।
न्यायतन्त्रंहिकात्स्न्र्येन गोतमो वेद तत्त्वतः ॥

वैदिक दर्शनों में न्याय दर्शन का स्थान सर्वोच्च है। श्रुति में भी—'आत्मावारेश्रोतव्योमन्तव्य: लिखा है यहां मन्तव्य शब्द से न्याय शास्त्र का ही ग्रहण है। उदयन ने भी लिखा है—'न्यायचर्चेयमीशस्य मनन व्यपदेशभाक्' याज्ञवल्क्य ने यह भी कहा है—यस्तर्केणानुसंधत्ते स धर्मं वेद-नेतर: ॥ इससे न्याय शास्त्र की धर्मोपयोगिता सिद्ध होती है। क्योंकि न्याय में वर्णित षोडश पदार्थ ज्ञान से मोक्ष प्राप्त होता है—

'पदार्थतत्त्व विज्ञाता यत्रकुत्राश्रमेवसन् ।
जटीमुण्डीशिखीवापि मुच्यतेनात्रशंसय: ॥

कणाद श्चाक्षपादश्चधन्यौ मान्यौनकस्यवै ।
तर्केणैव कृतोयाभ्यां मोक्षधर्मस्य निर्णय: ॥ ३॥

महर्षि कणाद और महर्षि गोतम, दोनों ही धन्यवादार्ह हैं क्योंकि इन्होंने पदार्थ तत्त्व ज्ञान द्वारा ही मोक्ष धर्म का निर्णय किया है। न्याय और वैशेषिक दोनों ही समान तन्त्र हैं। इन दोनों के मत में ईश्वर निराकार सर्वज्ञ सर्वव्यापक और जगत् का निमित्त कारण है। जीव प्रति शरीर भिन्न विभु और नित्य है। पृथिव्यादि पंच भूतों के परमाणुओं से जगत् की उत्पत्ति होती है आत्मादि सात अथवा षोड़श पदार्थों के धर्मपूर्वक तत्त्व ज्ञान से जीव का मोक्ष होता है, उसका पुनरागमन संसार में नहीं होता जैसाकि कहा है—'नसपुनरावर्तते' ॥

चन्द्रगुप्तस्य मौर्यस्य प्रधानसचिवो गुरुः ।
श्रीवात्स्यायनचाणक्यो न्यायभाष्यमरीरचत ॥४॥

मौर्य सम्राट् चन्द्रगुप्त के प्रधानमन्त्री तथा गुरु वात्स्यायन प्रसिद्ध नाम चाणक्य ने न्याय सूत्रों का भाष्य लिखा। इनके अनेक नाम थे— विष्णु-गुप्त और कौटिल्य नाम से ये प्रख्यात हैं। न्याय सूत्र के भाष्य में जो आन्वीक्षिकी का लक्षण दिया है वही अर्थशास्त्र में दिया है अतः न्याय भाष्यकार ही अर्थशास्त्र का भी प्रणेता था। चणक नामक एक ग्राम के निवासी होने से ये चाणक्य कहलाये। मुद्रा-राक्षस के अनुसार पंचतन्त्र-कार विष्णु शर्मा चाणक्य का सहपाठी था। वह नीतिशास्त्रज्ञ था, और कामन्दकीयनीतिसारकर्ता कामन्दक चाणक्य का साक्षात् शिष्य था। मञ्जुश्रीमूलकल्प-जैन ग्रन्थ में लिखा है कि चाणक्य दीर्घजीवींथा, वह तीन राज्य पर्यन्त जीता रहा अति दीर्घ आयु भोगकर बिन्दुसार के राज्य में मृत्यु को प्राप्त हुआ। सुबन्धु कवि ने उसका और्ध्वदेहिक संस्कार किया। चाणक्य नामक वात्स्यायन का समय पाणिनि के अनन्तर है क्योंकि उसने न्याय-भाष्य में पाणिनि के कई सूत्र उद्धृत किये हैं। नवीन मतानुसार विक्रम से लगभग चार सौ वर्ष पूर्ववर्त्ती पाणनि था इसका समय विक्रम से ३२२ वर्ष पूर्व है॥

दिङ्नाग नास्तिक गिरां कृत्वा तर्केण खण्डनम्।
उद्योतकर आचार्यो न्यायवार्तिकमातनोत् ॥५॥

उद्योतकर आचार्य ने—बौद्ध पण्डित दिङ्नाग के प्रमाण-समुच्चय ग्रन्थ का (जो न्याय भाष्य का खण्डनकर्ता है) खण्डन कर न्यायवार्तिक ग्रन्थ लिखा। उद्योतकर भारद्वाज गोत्री पण्डित था। सुबन्धु कवि ने

'न्यायस्थितिमिवोद्योतकरस्वरूपाम्, उद्योतकर का स्थिति समय विक्रमीय षष्ठ शतक उत्तरभागतक है। यही समय धर्मकीर्ति का है। उद्योतकर 'न्यायभाष्यकार वात्स्यायन में बड़ी श्रद्धा रखता था, उसने वात्स्यायन को न्यायसूत्रकार अक्षपाद तुल्य प्रतिभाशाली माना है यथा—

'यदक्षपादप्रतिभो भाष्यंवात्स्यायनो जगौ।
अकारिमहतस्तस्यभारद्वाजेव वार्तिकम् ॥

इसलिए न्याय भाष्य पर जो आक्षेपदिङ्नाग ने किये थे उन सबका सहेतुक खण्डन उद्योतकर ने अपने न्याय वार्तिक में करके भाष्योक्त-पदार्थ को यथार्थ कहा, और दिङ्नाग के आक्षेपों को कुतर्क सिद्ध किया। यथा—

'कुतार्किकध्वान्त निरासहेतोर्विरच्यतेऽयं मयका निबन्धः ॥

धर्मकीर्तिं खण्डयित्वा वार्तिकाक्षेपकारकम् ।
न्यायवार्तिकतात्पर्यं मिश्रवाचस्पतिर्व्यधात् ॥६॥

मिश्रवाचस्पति ने न्यायवार्तिक तात्पर्य पर आक्षेपकर्तृ बौद्ध पण्डित धर्मकीर्ति के आक्षेपों का निराकरण कर न्यायवार्तिक पर तात्पर्य टीका लिखी। धर्मकीर्ति का ग्रन्थ बौद्ध-संगति और न्याय बिन्दु है। सुबन्ध कवि ने भी धर्मकीर्ति के इस ग्रन्थ का अपनी वासवदत्ता में स्मरण किया है। यथा—

बौद्धसंगति मिवालंकारभूषिताम् ।

मिश्रवाचस्पति, सर्वतन्त्र स्वतन्त्र विद्वान् था। इसकी निवासभूमि

मिथिला प्रान्त थी । 'न्याय सूची निबन्धोऽयमकारि सुधियां मुदे । श्री वाचस्पति मिश्रेणवस्बङ्क वसुवत्सरे ॥ इस अपने लेखानुसार ८९८ विक्रमाब्द में यह जीवित था । इसने सब दर्शनों पर ग्रन्थ खिखे हैं ॥

जयन्तोविस्तृतंग्रन्थंकृतवान्न्यायमञ्जरीम् ।
भासर्वज्ञोऽथ विबुधो न्यायसारमरीरचत् ॥७॥

न्यायमञ्जरी भट्ट जयन्त ने लिखी, और न्यायसार पण्डित भासर्वज्ञ ने लिखा । जयन्त, कादम्बरी-कथासारकार अभिनन्द का पिता था, और वाचस्पति का मित्र था, जयन्त, वृत्तिकार नाम से भी प्रसिद्ध है । यह काश्मीर देश निवासी भारद्वाजगोत्री गौड पण्डित था । समय विक्रमीय-नवमशतक है भासर्वज्ञ के सम्बन्ध में पूर्णतया ज्ञात नहीं परन्तु समय इसका यही नवमशतक है । यह ग्रन्थ योग्य होता हुआ भी प्रचलित नहीं हुआ ॥

तात्पर्यपरिशुद्धिंचोदयनः किरणावलिम् ।
आत्मतत्त्व विवेकं च विदधे कुसुमाञ्जलिम् ॥८॥

मैथिल विद्वदग्रणी-उदयनाचार्य ने न्यायवार्तिकतात्पर्यटीका-तात्पर्यपरिशुद्धि, प्रशस्तपादभाष्य टीका—किरणावली, आत्मतत्त्वविवेक और न्याय कुसुमाञ्जलि ग्रन्थ लिखे । एक छोटा ग्रन्थ लक्षणावली भी लिखा है । उसमें इन्होंने अपना समय १०४१ वि० दिया है । यह इनका सर्वप्रथम ग्रन्थ प्रतीत होता है, 'तर्काम्बराङ्क प्रमितेष्वतीतेष शकान्ततः । वर्षषूदयनश्चक्रे सुबोधां लक्षणावलीम् ॥ इसमें [illegible]

वि० तक है। हमारी निम्न उक्ति सोलह आने सत्य है—

येनोत्पाटयानीश्वरस्य मूलंस्थापित ईश्वरः।
तस्योदयनवीरस्य कः स्तुतिनकरिष्यति ॥९॥

जिस उदयनाचार्य ने अनीश्वरवाद को जड़ से खण्डित करके ईश्वर-स्थापना की उसकी कौन स्तुति नहीं करेगा ॥

कौन प्रसीदति जनो विलोक्य किरणावलिम् ।
कुसुमाञ्जलिमाघ्राय कस्यचेतोनतृप्यति ॥१०॥

इसकी किरणावली को पक्ष में सूर्य किरणावलि को देखकर कौन प्रसन्न नहीं होता। और इसकी न्यायकुसुमाञ्जलि को आघ्राय (पढ़कर) पक्ष में कुसुमाञ्जलि को सूंघकर कौन सहृदय तृप्त नहीं होता। किरणावली प्रशस्तपाद-भाष्य की सर्वश्रेष्ठ टीका है। प्रशस्तपादका आशय उदयन ने ही प्रकटित किया। कुसुमाञ्जलि में पांच स्तवक हैं इनमें क्रमशः अनीश्वरवादी-चार्वाक, जैन, बौद्ध, सांख्य और मीमांसकों का सयुक्तिक खण्डन कर ईश्वर स्थापित किया है। किरणावली की सर्वोत्तम टीका वर्द्धमान का प्रकाश है। वर्धमान गङ्गेशोपाध्याय का पुत्र था। उसने लिखा है—

'यस्तर्कतन्त्रशतपत्रसहस्त्ररश्मिर्गङ्गेश्वरः सुकवि कैरवकाननेन्दुः।
तस्यात्मजोऽतिगहनांकिरणावलितां प्राकाशयत्कृतिमुदेवुधवर्धमानः॥

यही पद्य किंचित्परिवर्तन करके वर्धमान ने अपनी कुसुमाञ्जलि टीका के प्रारम्भ में दिया है—

'यस्तर्कतन्त्रशतपत्रसहस्ररश्मिर्गङ्गेश्वरः सुकवि कैरवकाननेन्दुः ।
तस्यात्मजोऽतिविषमंकुसुमाञ्जलितंप्राकाशयत्कृतिमुदे वुधवर्धमानः ॥'

वर्धमान का निश्चित समय विक्रमीय एकादश शतक उत्तर भाग है ॥

करणावली पर पद्म नाभ भट्टाचार्य की भी टीका है उसने लिखा है—

'उपदिष्टागुरुचरणैर स्पृष्टा वर्धमानेन ।
किरणावल्यामर्थाः तन्यन्ते पद्मनाभेन ॥

टीकांप्रशस्तभाष्यस्य कन्दलींश्रीधरोऽकरोत् ।
न्यायलीलावतीग्रन्थ माचार्योवल्लभस्तथा ॥११॥

भट्ट श्रीधर ने प्रशस्तपादभाष्य की टीका न्याय कन्दली बनाई । श्रीधर, दक्षिण राढापुरी का निवासी था । इसने अपनी कन्दली 'त्र्यधिक-दशोत्तरनवशतशाकाब्दे न्याय-कन्दली रचिता । इस पद्य के अनुसार १०४८ विक्रमाब्द में बनाई ।

मैथिल वल्लभाचार्य, कन्दलीकार से कुछ पीछे का है क्योंकि वल्लभा-चार्य ने कन्दली का उल्लेख किया है । यह वल्लभाचार्य, संभवतः सप्त-शतीकार गोवर्धनाचार्य का भ्राता बलभद्राचार्य रहा होगा । शप्तशती में लिखा है—

'उदयनवलभद्राभ्यांसप्तशतीशिष्यसोदराभ्यांमे ।
द्यौरिव रविचन्द्राभ्यां प्रकाशिता निर्मलीकृत्य ॥

कन्दली श्रीधरस्येयं तार्किकानन्दकन्दली ।
न्यायलीलावती कस्य [illegible] ॥१२॥

श्रीधर की न्यायकन्दली नैयायिकों की आनन्द कन्दली है और वल्लभाचार्य की लीलावती सत्यमेव नैयायिकों की वल्लभाप्रिया है। शिवादित्य की सप्तपदार्थी भी इसी प्रकार की है इन सब ग्रन्थों में वैशेषिक और न्याय सिद्धान्तों का समन्वय कर दिया गया है ॥

महोपाध्यायगंगेशोन्यायग्रन्थशिरोमणिम् ।
तत्त्वचिन्तामणिं चक्रे परिष्कारपरिष्कृतम् ॥१३॥

नव्यन्यायावतार मैथिल पण्डित गङ्गेशोपाध्याय ने न्याय और वैशेषिक दर्शन का सार ग्रहण करके तत्त्वचिन्तामणि ग्रन्थ लिखा। न्यायग्रन्थों में बौद्धों ने अनेक स्थलों में दोष दिखलाये जिससे न्यायशास्त्र कठिन हो गया, बौद्धों के उन सब विचार शून्य तर्कों को गङ्गेश ने खण्डित किया जैसा कि गङ्गेश ने स्वयं लिखा है—

'तन्त्रे दोषगणेन दुर्गमतरे सिद्धान्तदीक्षागुरुः ।
गङ्गेशस्तनुते मितेन वचसा श्रीतत्त्वचिन्तामणिम् ॥

गङ्गेश, न्याय में तो गोतममूर्ति थे ही परन्तु मीमांसा के भी वे प्रकाण्ड विद्वान् थे। उनके पुत्र वर्धमान ने लिखा है—

'न्यायाम्भोजपतङ्गाय मीमांसापारदर्शिने ।
गङ्गेश्वराय गुरवे पित्रेऽत्रभवतेनमः ॥

खाद्यखण्डन में श्री हर्ष ने चिन्तामणि की बड़ी प्रशंसा की है।

गङ्गेश का स्थिति समय विक्रमीय एकादशशतक है ॥

गंगेशेनोद्धृता वाणी काणादी गौतमी तथा ।
बौद्धवागन्धकूपेषु पतिता मणिभासया ॥१४॥

गङ्गेश ने बौद्ध वचन रूपी अन्ध कूप में पड़ी हुई कणाद और गोतम की वाणी को अपनी तत्त्व चिन्तामणि रूपी मणि के प्रकाश से बाहर निकाला अर्थात् उनके कुतर्कों को खण्डित करके उसको विशुद्ध सिद्ध किया ॥

तत्त्वचिन्तामणेर्व्याख्यालोकं पक्षधरोऽकरोत् ।
अधीत्य हरिमिश्राख्यात्पितृव्यात्स्वगुरोस्तथा ॥१५॥

तत्त्व-चिन्तामणि की सर्वप्रथम टीका जयदेवापर नामक पक्षधर मिश्र ने की । यह स्वपितृव्य हरिमिश्र का शिष्य था ॥

पीयूष-वर्ष और जयदेव नाम से इसी ने चन्द्रालोक और प्रसन्न-राघव नाटक लिखा । अतः यह कवितार्किक था । अपने आलोक के आरम्भ में इसने स्वयं लिखा है—

'अधीत्य जयदेवेन हरिमिश्रात्पितृव्यतः ।
तत्त्वचिन्तामणे रित्थमालोकोऽयं प्रकाशितः ॥

गङ्गेश के पुत्र वर्धमान का शिष्य कोई यज्ञपति था, उसका शिष्य हरिमिश्र और उसका शिष्य था पक्षधर । पक्षधर, विदर्भ कुण्डिनपुर का रहने वाला था, इसका समय चतुर्दश शतक है ॥

अधीत्यवासुदेवाख्यात्सार्वभौमादविलक्षणम् ।
दीधितिं कृतवान् विद्वान्रघुनाथशिरोमणिः ॥१६॥

चिन्तामणि-परिष्कारकर्तृ वासुदेव सावभौम भट्टाचार्य के शिष्य रघुनाथ तार्किक शिरोमणि ने तत्त्व चिन्तामणि की दूसरी टीका दीधिति बनाई। रघुनाथ, महाप्रभुचैतन्यकासतीर्थ्यथा और नवद्वीप (नदियापुर) का निवासी था। इसने अपनी दीधिति के सम्बन्ध में लिखा है—

'सर्वोन्यायमधीते कुरुते कुतुकान्निवन्धमप्यत्र।
अस्य तु किमपिरहस्यं केचिद्विज्ञातुमीशते सुधियः॥
'विदुषांनिवहैरिहैकमत्त्या यददुष्टं निरटङ्कियच्चदुष्टम्।
मयिजल्पति कल्पनाधिनाथे रघुनाथेमनुतां तदन्यथैव॥'

रघुनाथ का समय १६वां शतक है। यही समय गौर हरि-चैतन्य महाप्रभु का है। रघुनाथ ने उदयनाचार्य के आत्म तत्त्व विवेक की भी टीका लिखी है॥

माथुरीं मथरानाथस्तर्कवागीश आतनोत्।
जागदीशीं जगदीशः तर्कालंकार संज्ञकः॥१७॥

रघुनाथ शिरोमणि के शिष्य-मथुरानाथ ने चिन्तामणि की रहस्य टीका लिखी। मथुरानाथ वंगदेशीय नैयायिक था। यह इतना न्याय-विद्याव्यसनी था कि वृद्धावस्था में भी न्याय का पठन पाठन स्तोत्रवत् किया करता था, यह देखकर एक संन्यासी ने कहा—'तर्क कर्कश विचार चातुरी का तुरीयमनसाविभाव्यते। आतुरीभवति यत्रमानसम्, मथुरानाथ ने तत्काल ही उत्तर दिया—'धातुरीप्सितमपाकरोतिकः॥ कणादरहस्य और कणाद-सूत्रोपस्कार कर्ता मैथिल शंकर मिश्र, मथुरानाथ का प्रतिद्व था। मथुरानाथ का समय भी षोड़श शतक है। बंगाली पण्डित जगदीश

तर्कालंकार ने दीधिति की व्याख्या जागदीशी लिखी । जगदीश, काशी निवासी शब्दार्थ-मञ्जरीकार-भवानन्द का शिष्य था । इसी जगदीश भट्टाचार्य ने १७१० वि० में 'शब्दशक्ति प्रकाशिका' लिखी है, प्रसिद्धि है कि 'जगदीशस्य सर्वस्वं शब्दशक्ति प्रकाशिका' जगदीश अत्यन्त निर्धन होने पर भी प्रति-ग्रह विमुख एवं निरपेक्ष विद्वान् था । इसके कई ग्रन्थों पर हमारे मित्र गौड पं० शिवदत्त न्यायाचार्य की टीकाएं हैं । जगदीश का स्थिति समय सप्तदश शतक है ॥

भट्टाचार्यचक्रवर्ती करोतिस्म गदाधरः ।
गादाधरीं शक्तिवादं व्युत्पत्तिवाद मेवच ॥१८॥

गदाधर भट्टाचार्य ने दीधिति की टीका गादाधारी, और व्युत्पत्तिवाद तथा शक्तिवाद आदि अनेक ग्रन्थ लिखे । यह विद्वान्, रत्नकोषकार हरिराम तर्कालंकार का शिष्य था । रत्नकोशकार का मत मुक्तावली-कार ने खण्डित किया है । वंगदेशीय गदाधर का समय सप्तदश शतक उत्तर भाग है । गदाधर के सभी ग्रन्थों का विद्वत्समाज में आज बड़ा आदर है ॥

गदाधरेण सदृशीतर्ककर्कशवैदुषी ।
नासीदस्तिच कस्मिश्चिद्भविष्यति तुका कथा ॥१९॥

गदाधर भट्टाचार्य के तुल्य कर्कश तर्क पाण्डित्य न किसी में अब तक हुआ न है और आगेहोने की तो क्या संभावना । सुनते हैं—गदाधर लेखक तो बहुत बड़ा था, परन्तु वक्ता नहीं था । अब [illegible]र में

शास्त्रार्थं करने अद्वैत-सिद्धिकार मधु सूदन सरस्वती आये तब गदाधर भट्टाचार्य कांपने लगा। 'नवद्वीपंसमायाते मधुसूदन पण्डिते। पण्डिता विनताः सर्वे कातरश्च गदाधरः ॥

न्यायपञ्चाननः श्रीमान् विश्वनाथ महोदयः।
न्यायमुक्तावलीं न्यायसूत्रवृत्तिं च निर्ममे ॥२०॥

वङ्गदेशीय न्यायपञ्चानन विश्वनाथ भट्टाचार्य ने गङ्गेशोपाध्याय की तत्त्व-चिन्तामणि का सार ग्रहण करके न्याय सिद्धान्त-मुक्तावली और न्यायसूत्र वृत्ति लिखी। समय इसने स्वयं लिखा है—'रसवाणतिथौ शकेन्द्रकाले वहुले काम तिथौ शुचौ सिताहे। अकरोन्मुनि-सूत्रवृत्ति मेतां ननुवृन्दा विपिने स विश्वनाथः ॥ यह वृत्ति वृन्दावन में १५५६ शाक १६९१ विक्रमाब्द में लिखी गई थी, यह पद्य इसकी हस्तलिखित प्रति में प्राप्त हुआ है।

विश्वनाथ के पिता विद्यानिवास भट्टाचार्य, और अनुजभ्राता रुद्र भट्टाचार्य भी अच्छे नैयायिक थे ॥

न्यायग्रन्थ सहस्राणां सर्वेषां न्यायशास्त्रिणाम्।
तात्पर्यं यत्र सोऽर्थोऽत्र विश्वनाथेन रक्षितः ॥२१॥

परः सहस्र न्याय ग्रन्थों का और सभी नैय्यायिकों का मुख्य तात्पर्य लेकर यह ग्रन्थ विश्वनाथ ने बनाया है ॥

अन्नंभट्टोरचितवान् तर्कसंग्रहमुत्तमम्।
तट्टीकां दीपिकां चैव छात्रव्युत्पत्तिहेतवे ॥२२॥

आन्ध्र पण्डित तिरुमल के पुत्र अन्न भट्ट ने तर्क संग्रह और छात्र-

हितार्थ उसकी दीपिका टीका लिखी। अन्नंभट्ट काशी में पढ़कर विद्वान् हुआ था। 'काशीगमनमात्रेण नान्नंभट्टायते द्विजः। अपिगङ्गाजल स्नाना-न्नाधः केशः कुशायते ॥ अर्थात्—काशी में जाने मात्र से ही कोई विद्वान् नहीं होता अपितु श्रम से, अन्नं भट्ट ने पाणिनि सूत्रवृत्ति मिताक्षरा, ब्रह्म-सूत्र व्याख्या, और महाभाष्य-प्रदीपोद्योतन, आदि ग्रन्थ भी लिखे हैं। इसके बड़े भाई रामकृष्ण भट्ट ने सिद्धान्त कौमुदी की रत्नाकर टीका लिखी है जो बड़ी दिव्य है। अन्नंभट्ट का समय विक्रमीय सप्तदश शतक उत्तर भाग है ॥

मुक्तावल्यादिनकरीव्याख्यां दिनकरोऽकरोत् ।
तट्टीका रामरुद्रेण रामरुद्री विनिर्मिता ॥२३॥

काशीनिवासी दिनकर भट्ट ने मुक्तावली की दिनकरी टीका लिखी, यह भारद्वाज महादेवतार्किक का पुत्र था। इसका दूसरा नाम दिवाकर था। इसने दिवाकर नाम से 'पूर्णाब्धिसप्तैक मितेप्रवर्षे १७४० विक्रमाब्द में वृत्तरत्नाकर की 'आदर्श' टीका लिखी थी। लगभग यही समय दिन-करी निर्माण का होगा। दिनकरी पर भट्टरामरुद्र की रामरुद्री टीका है। भट्टरामरुद्र, दाक्षिणात्य रामेश्वर भट्ट का पुत्र था जिसके सम्बन्ध में कविवर हरिहर ने अपने हरिहर-सुभाषित में लिखा है—

'हृद्याः सन्तु शतं विद्याः काव्यादव्याहतं यशः।
निपीत दर्शन ग्रामे देहि रामेश्वरे दृशम् ॥

रामरुद्र का स्थिति समय अष्टादशशतक उत्तर भाग है। इसकी रामरुद्री की पूर्ति काशीस्थ पं० राजेश्वर शास्त्री द्राविड़ ने की है ॥

चक्रे सुदर्शनाचार्यो व्युत्पत्तिशक्तिवादयोः ।
वात्स्यायनीयभाष्यस्य टीकाः छात्रोपकारिकाः ॥२४॥

पंचनदीय पण्डित सुदर्शनाचार्य शास्त्री ने व्युत्पत्तिवाद शक्तिवाद तथा न्यायभाष्य की छात्रोपयोगी टीकाएं लिखीं। टीकाएं ऐसी ही होनी चाहियें। पहले टीकाकार अपने स्वतन्त्र विचार लिखा करते थे अब वह समय नहीं रहा प्रत्येक शास्त्र का ह्रास समय है।

सुदर्शनाचार्य, नैयायिक-सीताराम शास्त्री तथा म० म० गङ्गाधर शास्त्री का शिष्य था। यह प्रतिभाशाली विद्वान् था। १९८१ विक्रमाब्द में इसका स्वर्गवास हुआ यह काशीं और वृन्दावन में रहा करता था॥

धन्यः सुदर्शनाचार्यः कृतीनां यस्य दर्शनात् ।
काठिन्यं न्यायभाष्यादेर्दूरीभवति तत्क्षणम् ॥२५॥

सुदर्शनाचार्य शास्त्री, धन्यवाद के पात्र हैं जिसकी टीकाओं से व्युत्पत्तिवाद शक्तिवाद और न्याय भाष्य की कठिनता दूर हो जाती है॥

न्याय मुक्तावली टीका रचिता मूल चन्द्रिका ।
मयैवन्यायसूत्राणां वृत्तिः काठिन्यभित्तिभित् ॥२६॥

आजकल के अल्पश्रमी छात्रों के हितार्थ न्याय मुक्तावलि और न्याय दर्शन की सरल टीकाएं मैंने लिखीं। नव्य न्याय प्राचीन न्याय की रक्षा के लिए बना था। परन्तु दुःख है कि वह प्राचीन न्याय को

भी अपनी कठिनता के कारण साथ ही लेकर विलीन सा हो गया। 'गतावेद विद्या गतं धर्मशास्त्रं गतं रे गतं रे गतं न्याय शास्त्रम्। इदानीं तनानां जनानां प्रवृत्तिः सुवन्ते तिङन्ते कराचित्कुदन्ते ॥

भुंगारका ग्रामवासी प्रवासी देहलीपुरः।
श्रीवामदेवोपाध्यायः न्यायवोधमरीरचत् ॥२७॥

पं० वामदेव शास्त्री ने न्याय शास्त्र का सार न्याय-वोध ग्रन्थ लिखा ॥

काणाद न्याय मतसारः

विशेषस्य पदार्थस्य तमसो विनिरूपणात्।
वैशेषिकं समाख्यानं दर्शनस्यास्यचाभवत् ॥२८॥

औलूक्यमपि नामास्य लिखितं माधवादिभिः।
उलूकः सन्महेशानः शास्त्र मेतदुपादिशत् ॥२९॥

द्रव्यादिभिः सप्तभिर्यत् पदार्थैं रस्यतत्वतः।
वाह्यस्य जगतो लक्ष्यं समीक्षाकरणं मतम् ॥३०॥

पदार्थानां च साधर्म्यवैधर्म्यज्ञानतश्चयत्।
आत्मज्ञानं भवत्यत्र तत्तत्त्वज्ञान मुच्यते ॥३१॥

निष्कामकर्मएवैत द्दर्शनेधर्मपूर्वकम् ।
तत्त्वज्ञानोत्पादकंवै भूत्वाभवतिमोक्षकृत् ॥३२॥

न्यायदर्शनसिद्धान्ते तिस्रः सत्ताः सदास्थिराः ।
जीवोजगत् महेशश्च चतुर्थं नास्तिकिंचन ॥ ३३ ॥

जगत्सृष्टिः महेशस्य साच वास्तविकीमता ।
नैवशक्तोति भवितुं मिथ्याकालत्रयेऽपिसा ॥३४॥

दृश्यमानस्य जगतः परमाणुर्हिकारणम् ।
ईश्वरोऽनुमयागम्यो निमित्तं कारणंमतम् ॥३५॥

मिथ्याज्ञानेन जायन्ते दोष जन्म प्रवृत्तयः ।
मिथ्याज्ञानस्य नाशोहितत्त्व-ज्ञानेन जायते ॥३६॥

प्रमाणादि पदार्थानां षोड़शानां यथार्थतः ।
ज्ञानादेव मोक्ष प्राप्तिर्लक्ष्यमस्य परात्परम् ॥३७॥

॥ इति विवुधरत्नावली नाम्नि संस्कृतेतिहासे चतुर्थः अध्यायः ॥

पंचमः अध्यायः

यानिप्रणीतवान् सांख्यसूत्राणि कपिलोमुनिः ।
तेषां विज्ञान भिक्षुर्वै भाष्यंप्रवचनंव्यधात् ॥१॥

गङ्गासागर संगम-निवासी महर्षि कपिल ने सांख्य सूत्र लिखे । पूर्वोक्त दोनों दर्शनों की अपेक्षा सांख्य दर्शन प्राचीन है । उपनिषदों में सांख्य सिद्धान्त प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होते हैं । यह दर्शन द्वैतवादी है । इसमें प्रकृति और पुरुष दो मूल तत्त्व हैं, जिनके पारस्परिक संबंध से जगत् प्रकटित होता है । प्रकृति जड़ है पुरुष चेतन है । सांख्य का सिद्धान्त है सत्कार्यवाद, अर्थात् कार्य कारण में अव्यक्त रूप से रहता है । इसमें कच्छप के अङ्गों का आविर्भाव और तिरोभाव रूप ही उत्पत्ति और प्रलय माना है । तत्त्व समास-साँख्यसूत्र प्राचीन है वह ईश्वरवादी है । परन्तु वर्तमान सांख्यसूत्र जिस पर विज्ञान भिक्षु का भाष्य है वह निरीश्वरवादी है । वह सम्भवतः कपिल की शिष्य परम्परा में से किसी ने बनाया होगा । है वह भी प्राचीन, परन्तु शंकराचार्य, वाचस्पति मिश्र और माधवाचार्य ने उसका एक भी सूत्र उद्धृत नहीं किया । वेदों में भी सांख्य योग का वर्णन है । 'सांख्य योगादिगम्यम् । (श्वेताश्वतर) 'अष्टौ प्रकृतयः षोड़श विकाराः' (गर्भोपनिषत्) सांख्य मत में पच्चीस तत्त्वों के [illegible] है जैसा [illegible] भाष्य में लिखा है—

'पञ्चविंशतितत्त्वज्ञो यत्रकुत्राश्रमेवसन् ।
जटीमुण्डी शिखीवापि मुच्यते नात्रशंसयः ॥

सांख्य शास्त्र का ज्ञान सर्वोच्च ज्ञान माना है जैसा कि प्रसिद्ध है— 'नास्ति सांख्य समं ज्ञानम्' यद्यपि सांख्य दर्शन में मुक्ति के लिये ईश्वर को नहीं माना तथापि मुक्तात्माओं ने ईश्वर की स्तुति की है। बौद्धों के ऊपर साँख्य का ही प्रभाव पड़ा है। गोतम बुद्ध के मौलिक सिद्धान्त, सांख्योपज्ञ ही हैं। वैदिक कर्मकाण्ड की गौणता ईश्वर का नास्तित्व, जगत् की परिणाम नित्यता, अहिंसा, ये सब सिद्धान्त बुद्ध ने सांख्य से ही लिये हैं। सांख्य सूत्रों पर विज्ञान भिक्षु ने भाष्य लिखा है इसमें विज्ञान भिक्षु ने सांख्य शास्त्र का वेदान्त शास्त्र से सामञ्जस्य करने का सफल प्रयास किया है। विज्ञान भिक्षु का निवास काशी में रहा, स्थिति समय षोड़श शतक का उत्तर भाग है॥

कपिलं ह्यादि विद्वांसं केप्रशंसन्ति नोवुधाः ।
येनाविद्योदधौ मग्नं सांख्यनावोद्धृतं जगत् ॥२॥

आदि विद्वान् भगवान् कपिल की प्रशंसा कौन नहीं करता जिसने अविद्या समुद्र में डूबे हुए जगत् को साँख्य नौका से बाहर निकाल दिया। कपिल, मनुपुत्री देवहूति के पुत्र थे। भगवद्गीता में लिखा है 'सिद्धानां कपिलो मुनिः। श्रीमद्भागवत के चौबीस अवतारों में भी इन की गणना है कपिल का स्थिति समय सत्ययुग है॥

सर्वार्थस्य प्रकाशेन शास्त्रयोः सांख्ययोगयोः ।
विज्ञानभिक्षोः विज्ञानं केननैव प्रशस्यते ॥३॥

सांख्य और योगशास्त्र के सभी रहस्यों को अपनी व्याख्याओं द्वारा

स्पष्ट कर देने से विज्ञान भिक्षु का विज्ञान किस विद्वान् से प्रशंसनीय नहीं है। विज्ञान भिक्षु ने योग शास्त्र पर भी 'योग सार संग्रह' तथा 'योगभाष्यवार्तिक' आदि ग्रन्थ लिखे हैं जो अत्यन्त सरल हैं।।

श्रीमदीश्वर कृष्णेन याः कृताः सांख्यकारिकाः ।
तासां भाष्यं माठरेण गौड़पादेन निर्ममे ।।४।।

आचार्य ईश्वर कृष्ण ने साँख्य कारिका सप्तति लिखी। आसुरि कपिल के साक्षात् शिष्य थे उनके शिष्य पंचशिख ने 'षष्टितन्त्र' लिखा, इसीकी शिष्य परम्परा में ईश्वर कृष्ण हुए। ईश्वर कृष्ण का समय विक्रम का प्रथम शतक है। इस ग्रन्थ का इतना प्रचार हुआ कि परमार्थ पण्डित ने षष्ठ शतक में चीनी भाषा में इसका अनुवाद किया। माठर ने विक्रम के तृतीय शतक में इनकी वृत्ति और आचार्य शंकराचार्य के परम गुरु गौड़पाद ने इनका भाष्य लिखा। गौड़पाद अद्वैतवाद के सर्वप्रथम आचार्य थे। इनकी माण्डूक्य-कारिका प्रसिद्ध है। गौड़पाद कुरुक्षेत्र प्रान्त के निवासी सप्तम शतक में थे ।।

सर्वतन्त्रविदा वाचस्पतिना तत्त्व-कौमुदी ।
श्रीनारायणतीर्थेन विहिता सांख्यचन्द्रिका ।।५।।

मैथिल वाचस्पति सर्वतन्त्र स्वतन्त्र पण्डित थे। इन्होंने सांख्य-कारिकाओं पर अद्भुत व्याख्या सांख्य तत्त्व कौमुदी लिखी। इस पर अनेक टीकाएं हैं काशी-निवासी वंशीधर पण्डित की तथा हरद्वार

निवासी स्वामी वाल-रामोदासीन की टीकाएँ सर्वश्रेष्ठ हैं। तत्त्व-कौमुदी का निर्माण समय ८८६ विक्रम के आस-पास है।

स्वामी नारायण तीर्थ ने कारिकाओं पर सांख्य-चन्द्रिका सरल टीका लिखी। स्वामी जी ने वेदान्त के संक्षेप-शारारिक पर भी बड़ी सुन्दर टीका लिखी है। ये १७१५ वि० में काशी में निवास किया करते थे॥

मनांसि कुमुदानीव बोधयन् सांख्यशास्त्रिणाम् ।
वाचस्पतिप्रबन्धोऽयं चन्द्रमा इव दीप्यते ॥६॥

मिश्रवाचस्पति की सांख्य तत्त्व कौमुदी सांख्यशास्त्रियों के मनों को चन्द्रिका कुमुदों की तरह प्रसन्न करने वाली है॥

भावागणेशो व्यदधात्सांख्यतत्त्वप्रदीपनम् ।
क्षेमानन्देनविहितं सांख्यतत्त्वविवेचनम् ॥७॥

भावागणेशने सांख्य-तत्त्व-प्रदीपन और क्षेमानन्द ने सांख्य तत्त्व विवेचन ग्रन्थ लिखे। भावागणेश विज्ञान भिक्षु का शिष्य था। क्षेमानन्द का समय १७९५ विक्रमाब्द है॥

सद्वृत्तिः सांख्यसूत्राणामनिरुद्धेन निर्मिता ।
सांख्यसूत्रवृत्तिसारं महादेवः प्रणीतवान् ॥८॥

सांख्य सूत्रों की श्रेष्ठ वृत्ति अनिरुद्ध पण्डित ने लिखी। यह वृत्ति

प्रमेयबहुला है। अतएव कठिन भी है इस वृत्ति पर काशी के म० म०

प्रमथनाथ तर्क भूषण ने सरल टीका लिखी है। साँख्यसूत्र वृत्ति सार महादेव ने लिखा। यह महादेव संभवतः नैयायिक दिनकर भट्ट का पिता था॥

यो योगः प्रतिभातिस्म भगवन्तं पतञ्जलिम्।
तस्यैव भगवान् व्यासो भाष्यजातमवर्तयत् ॥६॥

महर्षि पतञ्जलि को योग द्वारा जो ज्ञान प्राप्त हुआ उसका विस्तृत विवेचन अपने सूत्रों द्वारा प्रकटित किया। इस याग के आठ अङ्ग पतञ्जलि ने बतलाये हैं।

यम. नियम. आसन. प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा. ध्यान. अथच समाधि। समाधि-चित्तवृत्ति निरोध बतलाया है। समाधिस्थ कैवल्य स्थिति का अनुभव करने लगता है। 'अभ्यास वैराग्याभ्यां चित्तनिरोधः, भगवान् ने भी भगवद्गीता में यही लिखा है—'अभ्यासेनतु कौन्तेय, वैराग्येण च गृह्यते। 'ईश्वरप्रणिधानाद्वा' योगाभ्यास द्वारा परमात्मा का साक्षात्कार करना परम धर्म माना है—'अयन्तु परमोधर्मो यद्योगे-नात्मदर्शनम्'। योगी और परमात्मा का अभेद प्रकार यह है—

'यथाग्निरग्नौ संक्षिप्तः समानत्व मनुव्रजेत्।
तथात्मा साम्यमभ्येति योगिनः परमात्मना॥

इन योग सूत्रों के निर्माता पतञ्जलि महाभाष्यकार पतञ्जलि से बहुत प्राचीन हैं। इसीलिए इस पर वेद व्यास ने भाष्य लिखा। और 'एतेन योगः प्रत्युक्तः' इस ब्रह्मसूत्र में पातञ्जल-योगदर्शनका खण्डन किया है।

'योगेनचित्तस्य पदेन वाचां मलं शरीरस्यचवैद्यकेन ।

इस पद्य लेखक को नामैक्य से भ्रम हुआ है। हां व्याकरणमहा-भाष्यकार ने एक योग दर्शन काव्य लिखा है जिसका वर्णन हम काव्य प्रकरण में देंगे। सांख्य और योग दोनों समानतन्त्र हैं। यथा—'सांख्य योगौपृथग् बालाः प्रवदन्ति न पण्डिताः। पुराण और ब्रह्म सूत्र निर्माता व्यास जी ने ही इस पर योग-भाष्य लिखा है यह निश्चित है व्यासदेव यद्यपि अमरव्यक्ति हैं तथापि उनका लोक में स्थिति समय जनमेजयतक है। कल्हण से भी प्राचीन एक राजतरङ्गिणी मिली है। उसमें जनमेजय के कनिष्ठ भ्राता हिरण्यदेव का तथा रामदेव का निश्चित राज्य समय कलि वर्ष १३२ से २०१ तक है॥

हिरण्यगर्भो योगस्य तत्त्वं वेद यथार्थतः।
पतञ्जलिर्वा व्यासोवा विदुर्नान्ये तु पण्डिताः ॥१०॥

याज्ञवल्क्य स्मृति के अनुसार योग तत्त्व ज्ञाता केवल ब्रह्मा हैं। उनसे द्वितीय श्रेणी में पतञ्जलि और व्यासादि हो सकते हैं॥

वाचस्पतिर्भाष्यटीकां तत्त्ववैशारदींव्यधात् ।
यतिर्विज्ञानभिक्षुश्च सरलं भाष्यवार्तिकम् ॥११॥

योग भाष्य के निगूढ़ अर्थों को अभिव्यक्त करने के लिये सर्व तन्त्र वाचस्पति ने तत्त्व वैशारदी टीका लिखी। और विज्ञान भिक्षु ने योगभाष्य ग्रन्थियों को सुलझाने के लिये योगवार्तिक लिखा। यह वार्तिक ग्रन्थ अत्यन्त सरल है॥

भाष्य गूढ़ार्थ निष्णात धियोर्मिश्रयतीन्द्रयोः ।
कंनरञ्जयते धीरं व्याख्यानद्वयमद्वयम् ॥१२॥

भाष्य मर्मज्ञ वाचस्पति मिश्र और विज्ञानयतीन्द्र की व्याख्यायें किस विद्वान् को प्रसन्न नहीं करतीं ॥

चकार भोजराजः स्वां वृत्ति सूत्रेष्वनुत्तमाम् ।
भावागणेश नागेश सदाशिव बुधास्तथा ॥१३॥

महाराज भोज ने योगसूत्रों पर भोजवृत्ति लिखी । इस धारानरेश भोज का दानपत्र १०८२ वि० का उपलब्ध है । भावागणेश विज्ञान-भिक्षु का शिष्य था । नागेश प्रसिद्ध वैय्याकरण था उसका समय अष्टादश शतक है । सदा शिवेन्द्र सरस्वती प्रसिद्ध योगिराज था । इसका जन्म स्थान करूर नगर के पास था परन्तु यह रहता था चोल देश में इसका स्थिति समय अष्टादशशतक उत्तरभाग है ॥

भोजराज स्त्वनुपमो योगसूत्रार्थ वोधने ।
गणेशादथ नागेशादधिकस्तु सदाशिवः ॥१४॥

भोजराज, योगसूत्रार्थ वोधन में अनुपम हैं । और आगे के तीनों व्यक्ति उत्तरोत्तर प्रतिभा पूर्ण थे ॥

योगचिन्तामणिः चक्रे शिवान-देनयोगिना ।
रामानन्देन विदुषा योग सूत्र मणिप्रभा ॥१५॥

शिवानन्द योगि ने योग-चिन्तामणि लिखी । शिवानन्द का समय

अष्टा दश शतक है यह काशी में रहा करता था। रामानन्द ने योग सूत्रों की व्याख्या 'मणिप्रभा' लिखी। इसका भी समय अष्टादशशतक है। यह भी काशी निवासी तथा ब्रह्मसूत्र-रत्नप्रभाकार-गोविन्दानन्द का शिष्य था ॥

रामानन्द शिवानन्दौ योगतत्त्व-विशारदौ ।
स्वं स्वं मणिं दर्शयित्वा कंनरञ्जयतोनरम् ॥१६॥

रामानन्द और शिवानन्द, योग शास्त्र में शिरोमणि थे। इन्होंने अपनी अपनी मणि से सबको आनन्दित किया ॥

श्री मत्सायण दुग्धाब्धि कौस्तुभेन मनीषिणा ।
माधवेन प्राणायि सर्वदर्शन संग्रहः ॥१७॥

चतुर्वेद भाष्यकार सायणाचार्य के पुत्र माधव ने सर्वदर्शन-संग्रह ग्रन्थ लिखा। इसका समय पंचदशशतक है। सर्व दर्शन संग्रह पर म० म० वासुदेव अभयङ्कर की टीका सरल है 'षड्दर्शन समुच्चय' भी द्रष्टव्य है ॥

सांख्ययोगमतसारः ।

सांख्य दर्शन सिद्धान्ते त्रीणि दुखानि सन्ति हि ।
आध्यात्मिकाधिभौतिकआधि दैविक नामतः ॥१८॥

अविद्या कारणं ह्येषां यया युक्तः पुमानिह ।
[illegible]

स्वरूपं नैव जानानः कर्तारं मन्यते निजम् ।
जटी मुण्डी शिखीवापि यत्र कुत्राश्रमे वसन् ॥२०॥

ज्ञात्वा स्वंवास्तवं रूपं मुच्यते कर्तृतादितः ।
भोक्तृत्वभावना प्यस्य तत्क्षणादेव नश्यति ॥२१॥

ततः स जन्मकर्मादिचक्रान्मुक्तोभवन्निह ।
दुःखत्रयाद् विमुक्तःसन् परमान्पोति पुरुषम् ॥२२॥

पातञ्जलंयोग शास्त्रं सांख्य शास्त्रस्यपूरकम् ।
पुंसः केवल्यविज्ञानं योगलक्ष्यंमतं वुधैः ॥२३॥

कैवल्यंच विवेकेन तत्त्वाभ्यासजएवसः ।
तत्वाभ्यास बोधनाय योगशास्त्र विनिर्मितिः ॥२४॥

योगश्चि त्तवृत्तिरोधः योगशास्त्रेप्रकीर्तितः ।
चित्तवृत्ति निरोधोहि वायोरिव सुदुष्करः ॥२५॥

तत्त्वज्ञानाच्च वैराग्या दीश्वर प्रणिधानतः ।
चित्तरोधः प्रभवति मुंसर शसिनी ॥२६॥

पंच विंशति तत्त्वेभ्योऽतिरिक्तं तत्त्व मीश्वरः ।
सच क्लेषादिरहितः तत्र चित्तं विमुक्तये ॥२७॥

अथ षष्ठः अध्यायः

कर्मकाण्ड प्रचाराय व्यासशिष्य-शिरोमणिः ।
कृतवान् पूर्वमीमांसादर्शनं जैमिनिर्मुनिः ॥१॥

महर्षि जैमिनिने वैदिक कर्मकाण्ड के प्रचारार्थ तथा वेदों में दृश्यमान विरोधों के परिहारार्थ पूर्वमीमांसा दर्शन लिखा। मीमांसा का विषय है—धर्म निर्णय, भट्टपाद ने अपने श्लोकवार्तिकमें लिखा है—'धर्माख्यं विषयं वक्तुं मीमांसायाः प्रयोजनम्. वेदविहित कर्म करना धर्म है वेद विरुद्ध कर्म करना अधर्म। वेद नित्य हैं, अपौरुषेय हैं। जगत् कर्म प्रधान है 'कर्मेतिमीमांसाकाः। कर्म से उत्पन्न होता है धर्म और अधर्म "उभाभ्यां मनुष्यलोकः। सबसे श्रेष्ठ धर्म है यज्ञ 'स्वर्गकामोयजेत' 'यज्ञेन-यज्ञमयजन्त देवास्तानिधर्माणि प्रथमान्यासन्। 'धर्मान्न प्रमदितव्यम्। धर्म मार्ग से कदापि विरुद्ध न चले। 'यतोऽभ्युदयनिःश्रेयस सिद्धिः सधर्मः। जिसके द्वारा ऐहलौकिक अभ्युदय तथा पारलौकिक निःश्रेयस (मोक्ष) प्राप्त हो वह धर्म है। बौद्धदार्शनिकों ने कर्म काण्ड पर अनेक आक्षेप किये थे उन सब का समाधान मीमांसकों ने किया है। जैमिनी का स्थिति समय व्यासजी के ही लगभग तक है। जिसकी चरमावधि-कलिका द्वितीय शतक है। इनकी जन्मभूमि उत्तर प्रदेश थी ॥ इनका जैमिनीयाश्वमेधपुराणभीद्रष्टव्य है। पंचतन्त्र के अनुसार जैमिनी की मृत्यु किसी हाथी द्वारा हुई ॥

तद्भाष्यं शवर स्वामी चक्रे शावरनामकम् ।
चतुर्वेदार्थ चतुरः सूत्रगूढार्थ संविदे ॥२॥

भट्टदीप्त स्वामी के पुत्र शवर स्वामी ने मीमांसा दर्शन पर अपना शावर भाष्य लिखा । इससे पूर्व इस दर्शन पर महापद्मनन्द समकालिक उपवर्ष पण्डित की वृत्ति थी । उसका शवर ने कई स्थलों में उल्लेख किया है—'यथाह भगवानुपवर्षः । शवर ने राजा हर्षवर्धनकृत नाम लिंगानु शासनकोष की व्याख्या लिखी थी । अतः शवर का समय सप्तमशतकीय सम्राट् हर्षवर्धन के ही लगभग है । स्वामी शवर से पूर्व भर्तृहरि की भी वृत्ति इस पर है । शवर ने उसका नामोल्लेख कहीं पर नहीं किया । शंकराचार्य ने अपने वेदान्त-शांकर भाष्य में शवरस्वामी का उल्लेख किया है । 'इतएवाकृष्य शवरस्वामिना ॥

वेदविद्याविदग्धस्य मीमांसापारदृश्वनः ।
शवर स्वामिनो नाम को न जानाति पण्डितः ॥३॥

वेदविद्या के अपूर्व पण्डित-मीमांसक शिरोमणि, शवर स्वामि का पवित्र नाम किस पण्डित ने नहीं सुना होगा ॥

प्रभाकरेण विहिता वृहती स्वमतानुगा ।
अथ शालिकनाथेन वृहतीसार पंचिका ॥४॥

चोलदेशीय प्रभाकर, शवरस्वामि का शिष्य था । शवर ने इसकी विद्वत्तापर [illegible] 'गुरु' की [illegible] थी । प्रभाकर ने अपने गुरु के भाष्य की वृहती टीका लिखी । और शालिक नाथ ने वृहती की

प्रकरण पंचिका, लिखी प्रभाकर का समय सप्तमशतक है । इसका मत ६९६ के चालुक्य प्रथम विक्रम के धर्माध्यक्ष हरिस्वामि ने शतपथ भाष्य में दिया है ।। अथवा सूत्राणि यथाविध्युद्देश इतिप्रभाकराः ।।

भट्टयज्ञेश्वर सुतो भट्टपादकुमारिलः ।
श्लोकवार्तिकमातेने तन्त्रवार्तिऽक मप्यथ ।।५।।

कुमारिल भट्ट ने शावरभाष्यपर श्लोक-वार्तिक तथा तन्त्र-वार्तिक लिखा । भट्टकुमारिल, तैलङ्ग देश के निवासी थे । इन का जन्म ७८९ वि० में हुआ था । जैन धर्म के प्रावल्य से लुप्त वैदिक धर्म को इन्होंने पुनर्जीवित किया, जैसा कि शंकर दिग् विजय में लिखा है—

'कुमारिल मृगेन्द्रेण हतेषु जिनहस्तिषु ।
निष्प्रत्यूहमवर्धन्त श्रुतिशाखाः समन्ततः ।।

वेदों में इनकी अकाटय श्रद्धाथी । ये ईश्वर को भी नहीं मानते थे कहते हैं कि शरीरधारी ईश्वर सर्वज्ञ नहीं हो सकता । 'शरीरादेर्विना-चास्य कथमिच्छापि सर्जने । ये वेदों को स्वतः आविर्भूत मानते हैं ईश्वर-कृत नहीं मानते । इनका मत है—'वेदानामी श्वराज्जन्म केवलं श्रुतिषु श्रुतम् । मानान्तरोपल व्धेर्थेरच नातुनमीयत्ते ।। मीमांसा में अनीश्वरवाद, इसी से आरम्भ हुआ है परन्तु वह वास्तव में इसको भी अभीष्ट नहीं ।

'भगवदनभ्युपगमनं दैवतचैतन्य निह्नवश्चैषाम् ।
कर्मश्रद्धा वर्धक तत्प्राधान्य प्रदर्शनायैव ।।

तभी इसने श्लोकवार्तिक में आपदेव ने न्यायप्रकाश में, और लौगा-क्षिन ग्रंथ संग्रह में ईश्वर विषयक मंगलाचरण किया है । जैमिनी तो

ईश्वरवादी ही है, 'परं जैमिनिमुंख्यत्वात्, । भट्टपाद कुमारिल ने वार्तिक में कई वैदिक कथाओं का रहस्य बड़ी विद्वत्ता से प्रकटित किया है। जैसे—अहल्यानाम अहनि लीयते' इस व्युत्पत्ति से रात्रि का और उसका जार=क्षयकर्ता इन्द्र से=परमैश्वर्यशाली सूर्य माना है। इसी प्रकार प्रजापतिपद से प्रजापालनाधिकारी सूर्य, और सरस्वती को ऊषामान कर ऊषा के पीछे दौड़ना सिद्ध किया है। द्रौपदी के पांच पति के सम्बन्ध में लिखा है—'द्रौपद्यासीन्महालक्ष्मी वंहु भुक्ता न दुष्यति, ।। कात्यायन, बौधायन, आश्वलायन, आपस्तम्ब, षड्गुरु शिष्य, कणाद और सायण आदि विद्वानों ने मन्त्र और ब्राह्मण दोनों को समकक्ष वेद माना है। वेद के ब्राह्मण भाग में कुछ पशु यज्ञों का वर्णन है जिनकी धर्म के साथ उपपत्ति करना कठिन है और कुछ इतिहास हैं। भट्टपाद ने यज्ञीय हिंसा के सम्बन्ध में पूर्ण विचार करके ब्राह्मण ग्रन्थों को वेद ही माना है। भट्टपाद कहते हैं—प्रत्येक कर्म के साध्य और साधन दो भाग होते हैं, साध्य विषय में हिंसा निन्दित है, यथा-श्येन यज्ञ। क्योंकि इसका उद्देश्य शत्रुवध है। परन्तु साधनांश हिंसा निन्दित नहीं। राजधर्म में हत्यारे को फांसी देनी पड़ती है, वह हिंसा नहीं धर्म है। इसी प्रकार यज्ञ में पशुहिंसा पापजनकतापेक्षया पुण्यजनक है यही बात महाभाष्य में 'कूपखानक न्याय से सिद्ध की है। शंकर दिग् विजय के अनुसार भट्टपाद, और स्वामी शंकराचार्य जी का समागम प्रयाग में हुआ था। अतः भट्टपाद का स्थितिसमय ८५० विक्रमाद्वतक निश्चित है. भट्टपाद की वैदिक सेवा स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य है ।।

यद्यग्रहीष्पन्नो जन्म भट्टपादो भुवस्तले ।

यदि भट्टपाद पृथिवी पर अवतरित न होते तो भारतीय श्रुतिस्मृति विहित धर्म नाम मात्र शेष रह जाता ॥

मीमांसानुक्रमणिकां मिश्रमंडन आतनोत् ।
भावनाया विवेकंच विवेकंच विधे रपि ॥७॥

सुप्रसिद्ध मण्डन मिश्र ने मीमांसानुक्रमणिका विधि विवेक और भावना विवेक ग्रन्थ लिखे। मण्डन मिश्र-कुमारिलभट्ट का ही शिष्य था, पीछे शंकराचार्यजी का शिष्य बनकर सुरेश्वराचार्य-कहलाया, मण्डन का दूसरा नाम विश्वरूपथा। इस नाम से इसने याज्ञ बल्वयस्मृति टीका लिखी थी, मिताक्षराकारने लिखा है—'विश्वरूप विकटोक्ति विस्तृतम्'। इसकी स्त्री शारदा बड़ी भारी विदुषी थी। और शिष्यथा-संक्षेपशारीरककर्ता सर्वज्ञात्म मुनि। मण्डन मिश्र का समय नवम शतक है। 'स्वतः प्रमाणं परतः प्रमाणं कीराङ्गना यत्र गिरं गिरन्ति। द्वारस्थ नीड़ान्तरसंनिरुद्धं जानीहि तन्मण्डन पण्डितौकः ॥ ऐसा शंकर दिग्विजय में लिखा है ॥

धन्यः स मण्डनो विद्वान् गेहिनी यस्य शारदा।
मध्यस्थाभूच्च शास्त्रार्थे सर्वशास्त्र विशारदा ॥ ८॥

एक समय वह भी था जब जगद्गुरु आद्य शंकराचार्य और मण्डन मिश्र के शास्त्रार्थ में मण्डन की स्त्री शारदा जो सर्व शास्त्र विशारदा थी मध्यस्थवनी थी और भी गार्गी मदालसा आदि ब्रह्मज्ञान युक्ता हुई। आज वे ही भारताङ्गनाएं विदेशी तथा म्लेच्छ भाषा अंग्रेजी के पीछे पड़ी हुई हैं—ठीक लिखा है—'पुरायत्र स्रोतः पुलिनमधुना तत्र ॥

महाविद्वान् मिश्रपार्थसारथिः शास्त्रदीपिकाम् ।
न्यायरत्नाकरं न्यायरत्नमालां तथाऽ करोऽत् ॥९॥

मैथिल पण्डित पार्थ सारथि मिश्र ने शास्त्र दीपिका, श्लोक वार्तिक

कीटीका न्यायरत्न-माला ग्रन्थ लिखे। शास्त्र दीपिका भाट्ट मतका प्रामाणिक ग्रन्थ है। पार्थ सारथि का समय-द्वादश शतक है। इसकी शास्त्र दीपिका पर सोमनाथ की मयूखमाला अतीव विशाल टीका है ।।

जैमिनीय न्यायमालां भारतींतीर्थं आतनोत् ।
जैमिनीय न्यायमाला विस्तरमार्यं माधवः ।।१०।।

स्वामी भारतीर्थ ने जैमिनीय न्यायमाला, और उनके शिष्य माधवाचार्य ने जैमिनीय न्यायमाला विस्तर ग्रन्थ लिखा। माधवाचार्य मद्रास प्रान्त के उलूपी ग्राम के निवासी थे। यह विस्तर महाराज वुक्कको आज्ञा से माधव ने लिखा था। इन दोनों का समय चतुर्दश शतक अन्तिम भाग तथा पंचदश पूर्व भाग है।

भाट्टचिन्तामणि गागा भट्टेन विदुषाकृतः ।
खण्डदेवेन विदधे रुचिरा भाट्टदीपिका ।।११।।

गागाभट्ट ने मीमांसा सूत्रों की सरल टीका भाट्टचिन्तामणि लिखी। यह विश्वेश्वरा पर नामक गागाभट्ट, निर्णय सिन्धुकार कमलाकर भट्ट का भ्रातुष्पुत्र था। और रहता था काशी में १७२१ विक्रमाब्द में छत्रपति शिवाजी का रायगढ़ में राज्याभिषेक इसी ने करवाया था। इसके शिष्य-खण्ड देवने भाट्ट सिद्धान्तों के प्रकाशनार्थ-भाट्टदीपिका ग्रन्थ लिखा—

विश्वेश्वरं नमस्कृत्य खण्डदेवः सतांमुदे ।
कुरुते [illegible] संक्षिप्तां भाट्टदीपिकाम् ।।

पण्डितराज जगन्नाथ के पिता का मीमांसाशास्त्र का गुरु यही खण्ड-देव था, पण्डितराज ने रसगङ्गाधर में स्पष्ट लिखा है कि मेरे पिता पेरुभट्ट ने मीमांसाशास्त्र 'देवादेवाध्यगीष्ट स्मरहर नगरे' अर्थात् खण्ड देव से पढा था। जगन्नाथ के साहित्य शिष्य नागेश भट्ट ने भी रसगङ्गा धरटिप्पण गुरु मर्मप्रकाश में यही लिखा है 'देवात्खण्डदेवात्, ॥

मीमांसाशास्त्र पाण्डित्य प्राप्तये भाट्टदीपिका।
भाट्टचिन्तामणीनूनं द्रष्टव्या वेकदाबुधैः ॥१२॥

मीमांसाशास्त्र के प्रगाढ़ पाण्डित्य प्राप्ति के लिये भाट्टदीपिका और भाट्ट चिन्तामणि विद्वानों का अवश्य द्रष्टव्य है ॥

आप देवेन मीमांसा-प्रकाशः सुप्रकाशितः।
मीमांसा परिभाषाच विहिता कृष्णयज्वना ॥१३॥

आप देव ने-मीमांसान्याय प्रकाश लिखा। आपदेव, मध्य प्रदेश का निवासी था। इसका समय भी विक्रमीय सप्तदशशतक है। इसके विद्वान् पुत्र ने न्याय-प्रकाश की 'भाट्टालंकार' विद्वत्ता पूर्ण टीका लिखी है। जिसका नाम अनन्तदेव था। मीमांसा परिभाषा लघुकाय ग्रन्थ है पर अत्यन्त उपयोगी है यह पण्डित कृष्ण यज्वाने लिखी थी, इन दोनों का समय भी सप्तदशशतक उत्तर भाग है ॥

भट्ट शंकर आतेने मीमांसा-सारसंग्रहम्।
लौगाक्षिभास्करोधीमानर्थसंग्रहमेवच ॥१४॥

भट्टशंकर ने 'मीमांसासार संग्रह' लिखा। यह शंकरभट्ट कमलाक

भट्ट का पितृव्य था। इसका निवास भी काशी और समय सप्तदशशतक है। लौगाक्षि भास्कर ने अत्यन्त सरल 'मीमांसार्थ-संग्रह लिखा। यह ग्रन्थ अतीवोपयोगी है। लौगाक्षि, दक्षिण गोदावरी प्रान्त का रहने वाला था। इसका समय विक्रमीय अष्टादश शतक है॥

मीमांसासारमाहतुं कृतभूरिपरिश्रमः।
शंकरः सुप्रशंसार्हस्तथा लौगाक्षिभास्करः ॥१५॥

मीमांसाशास्त्र का सार शंकर ने महान् परिश्रम से खींचा। और लौगाक्षि इसमें सर्वाधिक सफल हुए॥

ज्ञानकाण्ड प्रचाराय वेदव्यासो महामुनिः।
वादरायणनाम्नाथ चक्रे वेदान्तदर्शनम् ॥१६॥

ज्ञान काण्ड के प्रचारार्थ महर्षि वेद व्यास ने वादरायण नाम से वेदान्त दर्शन (उत्तरमीमांसा) लिखा।

'ब्राम्हेण जैमिनि रुपन्यासादिभ्यः॥ भावं जैमिनिर्विकल्पामननात्। इत्यादि वेदान्त सूत्रों में जैमिनि के मत का उल्लेख होने से सिद्ध होता है कि पहले पूर्व मीमांसा दर्शन, तदनन्तर उत्तर मीमाँसा वेदान्त दर्शन लिखा गया है। वेदान्त दर्शन में चार अध्याय हैं इनमें जीव और ब्रह्म के एकत्व का प्रतिपादन किया गया है। वेदान्त सूत्र-ब्रह्मसूत्र नाम से प्रसिद्ध हैं, इन ब्रह्मसूत्रों का व्याकरणाचार्य पाणिनि ने-पाराशर्य-शिलालिभ्यां भिक्षुनट सूत्रयोः, इस अपने सूत्र में भिक्षुसूत्रों के नाम से निर्देश किया है क्योंकि वेदान्त सूत्रों को भिक्षु (सन्यासी लोग) ही प्रायः पढ़ा करते हैं।

कर्म काण्डाधिकारः सर्वेषाम् [illegible]

सूत्रों से यह बात प्रस्फुट हो जाती है। श्री धर स्वामी ने अपनी गीता की टीका में लिखा है कि-'ब्रह्मसूत्र पदैश्चैव हेतु मद्भिः विनिश्चितैः' इस श्लोक में भगवद् गीता ब्रह्मसूत्रों का निर्देश करती है अतः वेदान्त सूत्र महाभारत ग्रन्थ से प्राचीन हैं। पूर्व मीमांसा और उत्तर मीमांसा दोनों समान तन्त्र हैं। 'जैमिनी येच वैय्यासे विरुद्धांशोनि कश्चन। श्रुत्या वेदार्थ विज्ञाने श्रुति पारं गतौहि तौ ॥

ब्रह्म आदि इन्द्रिया गोचर विषयों के निरूपण में वेद ही सबसे अधिक प्रमाण है। 'प्रत्यक्षेणा नुमित्यावा यस्तूपायोन बुध्यते। एनं विदन्ति वेदेन तस्माद् वेदस्य वेदता ॥ कर्म, ज्ञान की अपेक्षा गौण है, क्योंकि 'कर्मणाचित्तशुद्धिर्न मोक्षः' ऐसा लिखा है। वास्तव में ये दोनों कर्म और ज्ञान शास्त्र समानतन्त्र हैं 'उभाम्यामेव पक्षाभ्यां यथाखे पक्षिणां गतिः। तथैव कर्म ज्ञानाभ्यां प्राप्यते शाश्वतं पदम् ॥

तत्सत्यार्थ प्रकाशाय भगवत्पादशंकरः ।
वेदान्तोपनिषद्गीताभाष्यत्रय मरीरचत् ॥१७॥

वेदान्त उपनिषत् और गीता इस प्रस्थान त्रयी पर भिन्न भिन्न आचार्यों ने अपनी अपनी दृष्टि के अनुकूल व्याख्यायें लिखी हैं परन्तु सब में श्रुति सम्मत-व्याख्या तीनों पर आद्य शंकराचार्य की है। शंकराचार्य की दृष्टि में जीव और व्रम्ह एक हैं भिन्न भिन्न नहीं और व्रम्ह सत्य है जीव और जगत् मिथ्या है। 'एकं व्रम्ह द्वितीयं न जीवो व्रम्हैव नापरः। व्रम्ह सत्यं जगन् मिथ्येत्येष शङ्कर डिंडिमः ॥इस मत में व्रम्ह के दो स्वरूप हैं—एक निर्गुण दूसरा सगुण माया विशिष्ट व्रम्ह सगुण है, वही ईश्वर है जगत का कर्ता भर्ता भी वही है। निर्गुण [illegible] सच्चि-दानन्द स्वरूप है। अन्य मतानुयायी इस पार्थक्य को नहीं मानते।

यद्यपि वेदान्त मत भारत में प्राचीन समय से प्रचलित है परन्तु उसका अधिक प्रचार शांकर ग्रन्थों से हुआ है। शंकराचार्य के ग्रन्थ 'अद्वैत मत' के प्रतिपादक हैं। इनके वेदान्त भाष्य में पद पद पर श्रुति उद्धृत है, यह श्रौतभाष्य भी कहलाता है। समस्त उपनिषद् वाक्यों का इसमें समन्वय किया गया है। जिस प्रकार यज्ञादिकार्य करना त्रैवर्णिक गृहस्थ को नित्य है इसी प्रकार ब्रम्ह विचार भी सबको नित्य है। परन्तु यह विचार ईश्वर कृपा से ही हो सकता है—'ईश्वरानुग्रहादेषापुंसाम द्वैतवासना। महाभयकृत त्राणा द्वित्राणा मेव जायते ।। 'कुलं पवित्रं जननी कृतार्था वसुन्धरा पुण्यवती च तेन। अपार सच्चित्सुखसागरेऽस्मिन् लीनंपरेब्रम्हणि यस्य चेतः ।। स्वामी शंकराचार्य जी का जन्म केरल देश के कालटी ग्राम में द्रविड़ ब्राह्मण शिवगुरु शर्मा की धर्म पत्नी सुभद्रा के गर्भ से ८४५ वि० वैशाख सुदी १० मी को हुआ था। जैसा कि—'विधि नागेश वह्यब्दे विभवे मासि माधवे। शुल्कपक्षे दशम्यांतु शंकरार्योदयः स्मृतः ।।' यह सर्वमान्य सिद्धान्त है। प्रस्थान त्रय भाष्यकार आद्य शंकराचार्य का यह जन्म समय सर्वथा प्रामाणिक है क्योंकि उन्होंने अपने शांकर भाष्य में शवर स्वामी का उल्लेख किया है। कुमारिल भी शंकर का समकालीन था क्योंकि शंकर का और उसका प्रयाग में समागम शंकर दिग्विजय में वर्णित है। कुमारिल ने तन्त्र वार्तिक में 'सतांहि सन्देह पदेषु वस्तुषु-प्रमाणमन्तः करण प्रवृत्तयः' यह कालिदास का पद्य उद्धृत किया है। इन दोनों प्रमाणों से उनका समय पूर्णतया निर्धारित है। शंकराचार्य जी ने वेद विरोधियों को पराजित करके सनातन धर्म रक्षार्थ चारमठ स्थापित किये थे। पूर्व में गोवर्धनमठ, दक्षिण में श्रृंगेरीमठ, पश्चिम में—शारदा मठ और उत्तर में—ज्योतिर्मठ, जिनमें क्रमशः चार शिष्य अध्यक्षवनाए, पद्मपाद, हस्तामलक, सुरेश्वराचार्य, त्रोटकाचार्य ... परम्परा

आज भी चल रही है। शंकराचार्य का स्थिति समय ८७७ विक्रमाद्वतक है। ये ३२ वर्ष की अवस्था में वद्रिकाश्रम में समाधिस्थ हुए ॥

अष्टमेऽब्दे चतुर्वेदी द्वादशे सर्व शास्त्रवित्।
षोड़शेकृतवान्भाष्यं द्वात्रिंशेमुनिरभ्यगात् ॥

व्यासो नारायणः प्रोक्तः शंकरोऽ पिच शंकरः।
ताभ्यां सूत्रेच भाष्येच कृते किमवशिष्यते॥१८॥

भगवान् व्यास नारायण थे। और शंकराचार्य शंकरावतार थे। उनसे निर्मित सूत्र और भाष्य परम प्रामाणिक हैं अर्थात् नारायण प्रोक्त सूत्रों का तात्पर्य शंकर ही जान सकते हैं अन्य कोई नहीं ॥

अद्वैत-बोधिकां टीकामानन्दगिरिरातनोत्।
पद्मपादः पंचपाद टीकां चाथ महाद्भुताम् ॥१९॥

शंकर शिष्य पद्मपादने शंकर भाष्य चतुः सूत्री पर पंचपादिका और शंकर के ही शिष्य तोट का पर नामक आनन्द गिरिने सम्पूर्ण भाष्य पर न्याय निर्णय—लिखा ॥

पंचपादिका विवरण पर अखण्डानन्द का तत्वदीपन, और विद्यारण्य का विवरणप्रमेय संग्रह ग्रन्थ हैं ॥

भामतीं भाष्य विवृतिं मिश्र वाचस्पतिर्व्यधात्।
संक्षेप शारीरकंच सर्वज्ञात्ममुनीश्वरः ॥२०॥

शंकराचार्य ... मिश्र ने निःसन्तान होने के कारण अपनी

स्त्री के नाम से शांकरभाष्य की व्याख्या भामती लिखी। वाचस्पति मिश्र मिथिला देश वासी थे। इसका समय ८९८ विक्रमाब्द निश्चित है। भामती के अन्त में इसने अपना पर्याप्त परिचय दिया है। भामती पर अमलानन्द का कल्पतरु है। मण्डन मिश्रा पर पर्याय सुरेश्वर के शिष्य सर्वज्ञात्ममुनि ने संक्षेप शारीरक नामक ब्रह्मसूत्र की पद्यात्मक व्याख्या लिखी। सर्वज्ञ का समय नवम शतक उत्तरार्ध और दशम का पूर्वार्ध भाग है॥

व्यासो नारायणः साक्षात् शंकरोऽपिच शंकरः।
तयोराशय विज्ञाता कोऽन्यो वाचस्पतेर्भवेत् ॥२१

व्यास, साक्षात् नारायण ही थे, शंकराचार्य भी शंकरावतार थे। इन दोनों के आशय का पूर्णतया ज्ञाता वाचस्पति से अतिरिक्त कौन हो सकता है। अर्थात्-सर्वतन्त्र स्वतन्त्र वाचस्पति मिश्र भी बृहस्पति के अवतार थे॥

विनाद्वैतस्य बोधेन मुक्ति र्जन्मशतैर्ऽपिन।
स सर्वज्ञ निबन्धेन सद्यो विद्योतते हृदि ॥२२

अद्वैत ज्ञान के बिना मुक्ति का होना कदापि सम्भव नहीं, अद्वैत बोध, सर्वज्ञ के निबन्ध से बड़ी सरलता से हो सकता है। अद्वत मत ही सबसे श्रष्ठ है जैसा कि नैषध में महाकवि हर्ष ने दिखाया है—'विमतौ मतानाम द्वैत तत्व मिव सत्य तरम्॥

श्रीश्रीकण्ठो महाशैवः शैवभाष्यं प्रणीतवान्।
शिवाद्वैत प्रचाराय कर्णाटक महीसुरः ॥२३॥

शिवाद्वैतवादि महाशैव श्री कण्ठ ने ब्रह्मसूत्रों का शैव भाष्य

बनाया। श्रीकण्ठ, कर्णाटिक देशीय गोकर्ण क्षेत्र का निवासी था। इसका शंकराचार्य जीं के साथ शास्त्रार्थ हुआ था। इसने अपने भाष्य में शांकर मत का उल्लेख भी किया है। अतः इसका स्थिति समय भी नवम शतकासन्न है॥

अपारेखलु संसारे वहवः शैवपण्डिताः।
श्रीकण्ठेनसमः कश्चि द्विपश्चिन्न भविष्यति ॥२४॥

संसार अपार है। इसमें शैव पण्डित बहुत हुए और होंगे, परन्तु श्री कण्ठ के समान शैव विद्वान्-'नभूतोनभविष्यति॥

विशिष्टा द्वैत वोधाय श्रीभाष्यं वैष्णवाग्रणीः।
चक्रे रामानुजाचार्यः केशवार्य तनूभवः ॥२५॥

अद्वैत के विरुद्ध वैष्णव पण्डितों के अनेक सिद्धान्त हैं, जिनमें सर्वप्राचीन श्री रामानुज का विशिष्टा द्वैत है। इसके प्रचारार्थ उन्होंने अपना श्री भाष्य लिखा। श्री भाष्य पर—सुदर्शन सूरिकी श्रुत प्रकाशिका टीका नितान्त माननीय है। वेङ्कटनाथ ने अपने ग्रन्थों द्वारा इस मत का प्रचुर प्रचार किया। यह भाष्य ब्रह्मसूत्रों का है वे कहते हैं ब्रह्मसगुण ही होता है निर्गुण नहीं। जीव और जगत् से विशिष्ट ईश्वर एक हैं। इसीलिए इस सिद्धान्त को विशिष्टाद्वैत कहते हैं। श्रीरामानुज, मद्रास प्रान्त के थे प्रपन्नामृत में इनका जन्म १०७३ और स्थिति समय ११८४ विक्रमाद्वतक लिखा है इनका अध्ययन काञ्ची में हुआ पर ये रहत थे श्री रङ्ग में॥

रामानुजः सजयति यति विद्वच्छिरोमणिः।
यद्भाष्यंरंजयत्यन्तः सतांदुःखानिभञ्जयत् ॥२६

विद्वत् शिरोमणि श्री रामानुज यति की जय हो जिनका श्रीभाष्य भक्तों के दुःखों को समूल नष्ट कर देता है।

द्वैत वाद प्रचाराय विद्वद्वर शिखामणिः।
मध्वाचार्यो माध्व-भाष्यं ब्रह्मसूत्रेष्वरीरचत् ॥२७

श्री मध्वाचार्य ने ब्रह्मसूत्रों का माध्व-भाष्य, अपने ही नाम पर बनाया। जिन पर जय तीर्थ की विस्तृत व्याख्या है। मध्वाचार्य, दक्षिण देशीय मधिभट्ट के पुत्र थे। इनका समय ११९६ विक्रमाब्दतक है। इनके द्वैत मत में जीव और ईश्वर सदा भिन्न २ हैं कभी भी एक नहीं हो सकते। इनके मत में 'स्वसुखानुभवो मुक्तिः भक्तिः तस्याश्च साधनम्। भक्ति बिना न को ऽप्यत्र मुक्ति प्राप्नोति मानवः ॥

निम्बार्क भाष्यमातेने निम्बार्कः सर्वतन्त्रवित्।
द्वैताद्वैत प्रचाराय भास्कराचार्य नामभृत् ॥२८॥

भास्कराचार्य नामक निम्बार्क ने ब्रह्मसूत्रों का निम्बार्क भाष्य लिखा इस पर श्रीनिवासाचार्य की विशाल टीका हैं जिसका नाम वेदान्त-कौस्तुभ है। इनका मत द्वैता द्वैत है। इस मत में जीव और ईश्वर दोनों भिन्न भिन्न होते हुए भी एक हैं। ये कर्णाटक देशीय महेश्वरोपाध्याय के पुत्र थे इनका निश्चित समय ११७१ विक्रमाब्द हैं।

शुद्धाद्वैत प्रचाराय-वैष्णवानां शिरोमणिः ।
बल्लभाचार्यं आतेने अणुभाष्य मनुत्तमम् ॥२९॥

शुद्धा द्वैत मत प्रचारार्थ, वैष्णव शिरोमणि वल्लभाचार्य ने ब्रह्मसूत्रों पर 'अणुभाष्य लिखा इस भाष्य की पूर्ति वल्लभ के पुत्र विठ्ठल नाथ ने की है। वल्लभाचार्प माया वाद को नहीं मानते केवल अद्वैत को ही मानते हैं, इसलिए उनका मत शुद्धाद्वैत कहलाता है। इन सब के मत में जीव और ईश्वर सदा पृथक् बने रहते है दोनों की भिन्नता कदापि नष्ट नहीं होती। श्री वल्लभाचार्य, तैलङ्ग देशीय थे। इनका जन्म १५३५ विक्रमाब्द में हुआ था ये गोकुल में रहा करते थे॥

खाद्य खण्डन मांतेने श्रीहर्षः कवितार्किकः ।
तच्छिष्यानन्दपूर्णेन तट्टीका रचिताद्ऽभुता ॥३०॥

अद्वैत वेदान्त के स्तम्भ, कान्य कुब्ज देशीय श्री हर्ष मिश्र ने खाद्य खण्डन ग्रन्थ लिखा। खाद्य खन्डन में हर्ष ने अपने पिता के विजेता उदय-नाचार्य का खण्डन किया है। खण्डन के संबंध में इसने लिखा है— 'धीरायथोक्तम पिकीर वदेत दुक्त्वा लोकेषु दिग् विजय कौतुक मातनु-ध्वम्।'' श्रीहर्ष, कन्नौज के राजा विजय चन्द्र का सभासद् था, जिसका समय एकादश शतक निश्चित है। हर्ष मिश्र के शिष्य आनन्द पूर्ण ने खाद्य खण्डन की विद्या सागरी टीका लिखी। आनन्द पूर्ण का 'वेदान्त विद्या सागर' ग्रन्थ भी मौलिक है॥

वेदान्त शास्त्र साहित्य शास्त्रयोः प्रतिभान्वितः ।
श्रीहर्ष सदृशो विद्वान्नभूतो न भविष्यति ॥३१॥

वेदान्त और साहित्य शास्त्र का श्रीहर्ष जैसा प्रतिभाशाली विद्वान् पृथ्वी पर न हुआ और न होगा।

चित्सुखी रचिता श्रीमत् चित्सुखेन विलक्षणा ।
विद्यारण्यैः पञ्चदशी माधवापरनामकैः ॥३२॥

स्वामी चित्सुखाचार्य ने चित्सुखी नामक ग्रन्थ बनाया । श्रीचित्सुख, भागवत और विष्णु पुराण के व्याख्याकार सुप्रसिद्ध स्वामी श्रीधर का गुरू था । यह बात श्रीधर ने अपनी विष्णु पुराण की व्याख्या में स्पष्ट शब्दों में लिखी है । चित्सुख का स्थिति समय त्रयोदश शतक उत्तर भाग है । इसने न्याय मत खण्डन, खाद्य खण्डन के ही आधार पर किया है । चित्सुखी पर परम हंस प्रत्यग्रूप की नयन प्रसादिनी नामक अतीव सुन्दर टीका है । माधवाचार्यों पर नामक—विद्यारण्य स्वामी ने वेदान्त का सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ—पंचदशी लिखा । संन्यास लेने के अनन्तर माधवाचार्य ने अपना नाम विद्यारण्य रक्खा था । शंकर दिग् विजय ग्रन्थ की रचना इसी ने की है । इसके संन्यास गुरु भारती तीर्थ थे । विद्यारण्य, शंकराचार्य की गद्दी पर भी आसीन हुए थे । 'मया पंचा शीते रधिकमपनी ते तु वयसि' यह पद्य चर्पटमन्जरी का है । चर्पटमंजरी, इसी शंकराचार्य ने बनाई थी ॥

वेदान्तमुक्तावल्याख्यं ग्रन्थं चक्रे प्रकाशवित् ।
वेदान्तपरिभाषां च धर्मराजाध्वरीसुधीः ॥३३॥

स्वामी प्रकाशानन्द ने वेदान्त-मुक्तावलि ग्रन्थ लिखा । प्रकाशा नन्द विद्यारण्य स्वामी का परम सुहृत् था, —अतः उसका समय वही चतुर्दश शतक है । इसने लिखा है—'कुलंपवित्रं जननी कृतार्था बसुन्धरा पुण्यवती च तेन । अपारसच्चित्सुख सागरेऽस्मिन् लीनं परे ब्रह्मणियस्यचेतः ॥ धर्मराजाध्वरी ने वेदान्त परिभाषा लिखी धर्मराजाध्वरी काञ्ची का रहने

वाला था इसने तत्त्व चिन्तामणि की टीका भीं लिखी है। वेदान्त परि-भाषा पर- इसी के पुत्र की शिखामणि टीका है। इसका समय-पंचदश शतक है, धर्मराजाध्वरी वेङ्कटनाथ का शिष्य था ॥ वेदान्त-परिभाषा पर वामदेव शास्त्री की सरला टीका है ॥

वेदान्त तत्त्व विज्ञाने मान्या पंचदशी यथा।
तथा वेदान्त बोधाय वेदान्त-परिभाषिका ॥३४॥

जैसे वेदान्त के मौलिक तत्वों के ज्ञान के लिये पंचदशी मान्य है उसी प्रकार वेदान्त परिभाषा भी है,

चक्रेऽप्पय्यस्तु वेदान्तसिद्धान्तेलेशसंग्रहम्।
सिद्धान्तविन्दु मद्वैत सिद्धि च मधुसूदनः ॥३५॥

काशी निवासी द्रविड़ पं० अप्पदीक्षितने 'सिद्धान्त-लेश संग्रह ग्रन्थ लिखा। यह ग्रन्थ वेदान्त के विभिन्न मतों के ज्ञान के लिये अत्यन्त महत्त्वपूर्ण तथा उपयोगी है।

अप्पदीक्षित ने अमलानन्द के भामती टीका कल्पतरु पर भी परिमल टीका लिखकर गूढ़ तत्त्वों को खोला है। अप्पय दीक्षित का समय विक्र-मीय १७१४ निश्चित है। स्वामी मधुसूदन अद्वैतवाद केस्तम्भ थे, इन्होंने सिद्धान्त बिन्दु और अद्वैत सिद्धि आदि कई प्रौढ़ ग्रन्थ लिखे हैं। इनकी 'अद्वैत सिद्धि' खाद्य खण्डन की शैली का अद्भुत ग्रन्थ है। अद्वैत-सिद्धि की टीका मधुसूदन सम कालिक गौड़ ब्रह्मानन्द की ब्रह्मानन्दी है। मधु सूदन का जन्म कोटालिपाड़ा बङ्गाल में हुआ था गदाधर भट्टाचार्य के [illegible] इन्होंने खूब पढ़ा था ॥

अद्वैतसाधने यद्वत्सफलो मधुसूदनः ।
तथाप्पदीक्षितो नूनं सिद्धान्ते लेश-संग्रहे ॥३६॥

जिस प्रकार अद्वैत साधन में मधुसूदन स्वामी सफल हुए हैं ठीक उसी प्रकार वेदान्त सिद्धान्त संग्रह में अप्य दीक्षित जी । मधुसूदन जी ने अपनी अद्वैत सिद्धि में अप्पय दीक्षित का स्मरण एवं ग्रन्थोद्धरण किया है । मधुसूदन जी ने अन्य भी अद्वैत रत्न रक्षण, भगवद् गीता टीका मधुसूदनी, प्रस्थान भेद, भक्ति-रसायन, आदि अनेक ग्रन्थ लिखे हैं । हिन्दी के प्रसिद्ध कवि तुलसी दास ने अपनी रामायण लिखकर इनको दिखाई थी । तब इन्होंने यह सम्मति दी थी- 'संसार कानने ह्यस्मिन् जङ्गमः तुलसीतरुः । यदस्य मञ्जरीभाति रामभ्रमर भूषिता ॥ अतः मधुसूदन जी का समय १७१० के लगभग तक है ॥

व्यासोपाह्वः सदानन्दः चकार महदद्भुतम् ।
वेदान्तसार मद्वैतसिद्धि-सिद्धान्तसारकम् ॥३७॥

सदानन्द व्यास ने महान् अद्भुत ग्रन्थद्वय-वेदान्त सार और अद्वैत सिद्धि-सिद्धान्तसार लिखे । वेदान्तसार अद्वैत तत्व की मुख्य मुख्य बातों से युक्त-वास्तव में ही सार ग्रन्थ है । इसमें माया ईश्वर जीव और जगत् का परिचय कराकर 'तत्वमसि' तथा 'अहं ब्रह्मास्मि का विस्तृत विवेचन दिया गया है । वेदान्त का यह ग्रन्थ-अणोरणीयान्महतो महीयान् है । सदानन्द के शिष्य ने इस वेदान्तसार की टीका सुबोधिनी १७४५ वि० में लिखी थी अतः सदानन्द का समय वि० सं० १७२० के आसपास नि[illegible] है । यह [illegible] व्यास काशी में ही रहा करता था ॥

काश्मीरिक यतिश्रेष्ठः सदानन्दो महामतिः ।
अद्वैतब्रह्मसिद्धिं वै चकार परमोत्तमाम् ॥३८॥

कश्मीर के महात्मा सदानन्द ने अद्वैतब्रह्मसिद्धि ग्रन्थ लिखा। यह सदानन्द स्वामी, सदा नन्द व्यास से पचास वर्ष पीछे के हैं। यह ग्रन्थ भी बड़ा ही सुन्दर बना है। हमारी दृष्टि में हमारा यह कथन तथ्य है-

नैकोऽपिजीयते हन्त सदानन्दोनकेनचित् ।
अद्वैततत्वनिर्यासे सदानन्दद्वयी किमु ॥३६॥

अद्वैत साधन में एक ही सदानन्द अजेय है दो का तो कहना ही क्या ॥

स्वाराज्य सिद्धिमकरोद् भास्करानन्द देशिकः ।
विमलानन्द आतेने वेदान्ते सारसंग्रहम् ॥४०॥

काशी के परम प्रसिद्ध यतीन्द्र स्वामी भास्करानन्द ने स्वराज्य सिद्धि नामक अतीव श्रेष्ठ ग्रन्थ लिखा। भास्करानन्द बड़े ही योगिराज थे। इनका समय विक्रमीय एकोनविंश शतक है। स्वामी विमलानन्द ने वेदान्त सार संग्रह ग्रन्थ लिखा। ये हृषीकेश में गङ्गा तट पर एक कुटी में रहा करते थे। अपने पूज्य पितृव्य पं० शिरोमणि शिव दत्त जी के साथ जाकर हमने भी अपनी छात्रावस्था में इस महात्मा के दर्शन किये थे। दर्शनार्थियों की अपार भीड़ लगी रहती थी यह बात १९६५ विक्रमाब्द की है ॥

सदानन्दीयवेदान्तसारटीका कृता मया ।
मदनुग्रहपात्राणां छात्राणां बोधकाम्यया ॥४१॥

अपने प्रिय छात्रों को सम्यक्तया वेदान्त शास्त्र का बोध कराने के लिये सदानन्द के वेदान्तसार की टीका मैंने लिखी । जो मुद्रित होकर भार्गव भूषण प्रेस काशी से प्रकाशित हुई है ॥

पूर्वोत्तारमीमांसामतसार

जैमिनीयं महाशास्त्रं मीमांसात्वेनभण्यते ।
सम्प्रदायोह्ययं वेदमूलकः सर्वतोऽधिकः ॥४२॥

स्वतः प्रमाणं नित्यश्च वेदो मीमांसकैर्मतः ।
नेश्वरेणाकृतः एषसिद्धान्तः तत्रवर्तते ॥४३॥

आविर्भावः सृष्टिकाले वेदानांनैवनिर्मितिः ।
सहैव सृष्टया प्रलय स्तिरोभावोननाशकः ॥४४॥

स्वर्गश्चनरकश्चापि मन्येऽस्मिन्मतेद्वयम् ।
यान्तिस्वर्गं पुण्यकृतोनरकं त्वथपापिनः ॥४५॥

यज्ञादिकर्म करणात्प्रसन्नादेवताः फलम् ।
[illegible] कर्मैवचेश्वरः ॥४६॥

वेदान्तदर्शनंसर्वदर्शनानां शिरोमणि ।
तस्याप्यद्वैतसिद्धान्तः सर्वोपरि विराजते ॥४७॥

एतन्मतस्य भगवच्छङ्करोह्यवसाधकः ।
तन्मतं लिख्यते चाद्य यत स्तत् श्रुतिमूलकम् ॥४८॥

सच्चिदानन्दरूपंतत् ब्रह्म ज्ञानं च मन्यते ।
ज्ञानेन न विना तेन सहैक्यंजातु लभ्यते ॥४६॥

परिछिन्नोऽप्ययंजीवो ज्ञानेनापरिछिन्नताम् ।
प्राप्यतद्र पतामेति द्वैतभावोविनश्यति ॥५०॥

वस्तुतोऽपितयोर्द्वैतं व्यवहाराय मन्यते ।
पारमार्थिक दृष्टयातु एकमेवनतौद्वयम् ॥५१॥

आरंभ बादका आश्रयण कर न्याय वैशेषिकने-स्थूल जगत् का विश्लेषण किया है । अतः लौकिक बुद्धिगम्य ही पदार्थों की कल्पना न्याय और वैशेषिक में दी गई है । सांख्य योग की पदार्थ कल्पना, न्याय वैशषिक से सूक्ष्म है । क्योंकि सांख्य योग में योगानुभव के द्वारा ही पदार्थों का साक्षात्कार करना निरूपित है । कर्मकाण्ड वेदान्त की कल्पना इससे भी अधिक सूक्ष्मता रखती है इस प्रकार छ दर्शनों का क्रमिक विकाश हुआ । इन सबका लक्ष्य है 'ईश्वर प्राप्ति' 'नृणामेकोगम्यः त्वमसिपय सामर्णवइव ॥

सप्तमः अध्यायः

अथतत्रभवांश्चक्रे वाल्मीकि र्मुनिपुङ्गवः ।
रामायणं महाकाव्यं चतुर्वर्ग फल प्रदम् ॥१॥

धर्म अर्थ काम और मोक्ष के देने वाले आदि-काव्य रामायण को महर्षि वाल्मीकि ने बनाया। इस महा-काव्य को चतुर्विंशति साहस्री संहिता कहा है क्योंकि इसमें २४ हजार श्लोक हैं। कुछ विद्वान् इनमें क्षेपक श्लोक भी मानते हैं वह गलित (गलत) है क्योंकि काव्य में कहीं भी एकता का अभाव दृष्टि गोचर नहीं होता। रामायण के संस्करण भी बहुत हुए हैं उनमें उत्तरी भारत का देवनागरी संस्करण ही मान्य है इसमें प्रायः अनुष्टप् छन्द के श्लोक प्रयुक्त हुए हैं, कहते हैं—वाल्मिकि का निषादकृत क्रौंचवध विषयक शोक ही श्लोक रूप में परिणत हो गया,

'समाक्षरैश्चतुर्भिर्यः पादैर्गीतौ महर्षिणा ।
सोऽनु व्याहरणाद्भूयः शोकः श्लोक त्वमागतः ॥

यह अनुष्टुप् है बाल्मिकि आदि कवि माने जाते हैं—'जाते जगति वाल्मिकौ कवि रित्यभिधाऽभवत्। वैदिक-कवि ब्रह्मा हैं—'कविं पुराण मनुसा सितारम्। इन दोनों के संबन्ध में लिखा है—[illegible] । लोक श्लोक विधात्रो

र्यंयो भिदा ले श मात्रेण। आदि कवि महर्षि वाल्मिकि त्रेता युग में हुए, और अपने लिखे अनुसार जाति के ब्राह्मण थे। 'अहंपुरा किरातेषु किरातैः सह वर्धितः। जन्म मात्रं द्विजत्वं मे पापाचाररतस्य च ॥

महाभारत ग्रन्थ-राम कथा से ही परिचित नहीं है, अपितु वह वाल्मीकि के रामायण ग्रन्थ से भी सम्य क्तया परिचित है महाभारत के वन पर्व की कथा-वाल्मिकी का संक्षिप्त संस्करण है। यही नहीं वाल्मीकि और उनके निबन्ध का साक्षात् वर्णन भी महाभारत में है यथा- अपि-चायंपुरा गीतः श्लोको वाल्मिकिनाभुवि। नहन्तव्याः स्त्रि यइति यद्ब्र-वीषि प्लवङ्गब ॥ भारतीय संस्कृति के संस्कारक रामायण को संसारभर के कवियों ने अपना उपजीव्य बनाया है क्योंकि संस्कृत के महा काव्यों की रचना इसी को आगे रखकर हुई है अलंकार शास्त्र में महाकाव्य का लक्षण इसी पर आधारित है। यही नहीं धर्म दृष्टि से भी यह ग्रन्थ स्वर्ग सोपान है। किंवहुना इसके संबन्ध में ब्रह्मवाक्य हैं--'यावत्स्थास्यन्ति गिरयः सरितश्चमहीतले। तावद् रामायण कथा लोकेषु प्रचरिष्यति ॥

श्रोत्रांजलिपुटैःपेयं चक्रे रामायणमृतंम्।
यस्तं बन्देमुनिवरं कवि धुर्यंच बल्मीकिम् ॥२॥

जिस मुनिवर्य कवि धर्य वाल्मीकि ने रामायण रूपी महामृत वितरित किया वे विश्व बन्द्य हैं। रामायण पर लगभग तीस टीकायें हैं जिनमें सर्वाधिक लोकप्रिय टीका नागेश भट्ट के शिष्य राम राजा की तिलक है ॥

अष्टादश पुराणानि वेदव्यासो महामुनिः।
भारतं कृष्णगाथा भियुतं भागवतं तथा ॥३॥

ब्रह्मवैवर्तं, लिङ्ग स्कन्द, वराह, कूर्म, मत्स्य, गरुड और ब्रह्माण्ड ये अठ्ठारह पुराण हैं वेदव्यास ने चारों वेद अपने चार शिष्यों को पढ़ाने के अनन्तर पुराण और महाभारत लोम हर्षण को और भागवत अपने पुत्र शुकदेव को पढ़ाया शतपथ पुराणों का हिन्दु संस्कृति का विस्तृत एवं पूर्ण चरित्र-चित्रण लक्षश्लोकात्मक महाभारत है जिस के सम्बन्ध में निम्न उक्ति सर्वथा तथ्य हैं धर्मेवार्थेचकामेच मोक्षेचभरतर्षभ । 'यदि हास्ति तदन्यत्र यत्रे हास्तिन कुत्र चित् ॥

'त्रिभिर्वर्षैः सदोत्थायी कृष्णद्वेपायनोमुनिः ।
महाभारतमाख्यानं कृतवानिदमद्भुतम् ॥

'योविद्याच्चतुरो वेदान् साङ्गोपनिष दो द्विजः ।
नचाख्यानमिदं विद्या न्नैवसस्या द्विचक्षणः ॥

'अर्थ शास्त्रमिदं दिव्यं धर्म शास्त्र मिदमहत् ।
कामशास्त्र मिद प्रोक्तं व्यासेनामित बुद्धिना ॥

इतिहासोत्तमादस्माञ्जायन्ते कवि वुद्धयः ।
पञ्चभ्यइवभूतेभ्यो लोकसंविधयस्त्रयः ॥

भारतं चेक्षुदण्डंच समुद्रंचापि वर्णय ।
पादमेकं प्रदास्यामि—'पर्वं पर्व रसाधिकम् ॥

महाभारत-पंचम वेद माना जाता है, यह धर्मज्ञान का विश्वकोष है धर्म ही भारतीय संस्कृति का प्राण है ।

'नजातुकामान्नभयान्न लोभाद्धर्मं त्यजेज्जीवितस्यापिहेतोः ।
धर्मो नित्यः सुख दुःखेत्वनित्ये जीवोनित्यो हेतुस्य त्वनित्यः ॥

'उर्ध्वबाहु विरौम्येष नचकश्चिच्छृणोतिमे ।
धर्मादर्थश्च कामश्च स किमर्थं न सेव्यते ।।

इत्यादि महान् से महान् उपदेश इसमें आमूलचूल भरे पड़े हैं। महाभारत की सर्व प्रथम कथा सर्पदमन (सर्पीदम) में जनमेजय के सर्पयाग में की गई थी। रामायण और महाभारत की तुलना करने से स्पष्ट प्रतीत हो जाता है कि महाभारत रामायण के अनन्तर बना रामायण में आर्यों की संस्कृति एवं सभ्यता अपने विशुद्ध रूप में वर्णित है परन्तु महाभारत में उससे भिन्न रूप में विद्यमान है। कृष्ण चरितामृत से भराहुआ श्रीमद्भागवत ग्रन्थ पाण्डित्य की कसौटी माना जाता है। 'विद्यावतां भागवते परीक्षा, यह तथ्यवाद है अर्थवाद नहीं है, भागवत समस्त श्रुतियों का सार है यही नहीं भागवत-रसमाधुरी का भी अगाध श्रोत है, भागवत का श्री कृष्ण पूर्ण ब्रह्म परमात्मा है। 'एते चांशकलाः पुंसः (विष्णो) कृष्णस्तु भगवान्स्वयम् (विष्णुः) डा० भाण्डार करने इसको नवमशतक का ग्रन्थ माना है और अन्य वोपदेवकृत मानते हैं, ये दोनों मत मूर्खता से परिपूर्ण हैं। वोपदेव ने तो भगवत का सार लेकर हरिलीलामृत, तथा मुक्ताफल ग्रन्थ की रचना की है। हरिलीलामृत, भागवत के अध्यायों की सूची है और मुक्ताफ में अनेक पद्य, भागवतक हैं भागवत पुराण के माहात्म्यानुसार श्री कृष्ण के वैकुण्ठ पधारने के ३० वर्ष बाद शुकदेव ने परीक्षित को भागवत कथा सुनाई थी ।।

कृतार्थोऽभूच्चतुर्वक्त्रः कृतार्थोवाल्मीकि मुनिः ।
लोकश्लोक विदि व्यासे जाते सति भुवस्तले ।।४।।

लोक ... भगवान् वेदव्यास के भूतल पर

अवतरित होने से लोक विधाता ब्रह्मा, और श्लोक विधाता आदि कवि वाल्मीकि, दोनों कृत कृत्य हो गये क्योंकि व्यासजी ने दोनों का ज्ञान लोगों को करवाया।

'जयति पराशरसूनुः सत्यवती हृदयनन्दनो व्यासः।
यस्यास्य कमलगलितं वाङ्‌मयममृतं जगत् पिवति ॥

जनमेजय के सर्पयाग में (जो कुरुक्षेत्र मध्यवर्ति सपीदम नगर में हुआ था) वेदव्यासजी और उनके पुत्र शुकदेव जी दोनों विद्यमान थे। व्यास जी की लोक में स्थिति कलि की दो शती तक निश्चय है मैसूर से महाराज जनमेजय का लेख मिला है, एकका समय युधिष्ठर संवत् ८९ है और दूसरा जनमेजय के कनिष्ठ भ्राता हिरण्यदेव के पुत्र रामदेव का कलिसंवत् १३२ से २०१ तक का लेख मिला है। कह्लण और वराहमिहिर के मतानुसार ६५३ कलिवर्ष बीतने तक कुरु और पाण्डव विद्यमान थे। इससे जनमेजय का समय विक्रम से २८९० वर्ष पूर्वतक सिद्ध होता है। यही समय पवित्र कुरुक्षेत्र निवासी महर्षि वेदव्यास जी का है, वेदव्यास चिरंजीवी थे वे द्वापर से आरम्भ करके कलि के द्वितीय शतकतक प्रत्यक्ष रहे होंगे.

'यावदधिकारम वस्थिति राधिकारिकाणाम्'।
यहवेदान्तसूत्र व्यासादि के सम्बन्ध में यही निर्णय करता है ॥

पाणिनिर्मुनिरातेने काव्यं जाम्ववतीजयम्।
जाम्ववत्या जयोयत्र कृष्णा द्वारा प्रदर्शितः ॥५॥

भगवान पाणिनि ने जाम्ववती विजयनामक काव्य बनाया। जिसका

विषय कृष्ण द्वारा जाम्ब वती का विजय है। कुछ विद्वान् इस पाणिनि को वैय्याकरण पाणिनि नहीं मानते वे नितान्त भ्रान्त हैं यह वही वैय्याकरण मूर्धन्य पाणिनि हैं। महाकवि राजशेखर ने स्पष्ट शब्दों में लिखा है—

'नमः पाणिनयेतस्मै येनरुद्र प्रसादतः
आदौव्याकरणं प्रोक्त मनुजाम्वतीजयम् ॥

संस्कृत साहित्य में सर्वप्रथम महाकाव्य लिखने का श्रेय भी महर्षि पाणिनि को ही प्राप्त हुआ यह कितने महत्त्व की बात है। इस काव्य का द्वितीय नाम पाताल-विजय भी है काव्यालंकारकेटीकाकार नमि साधु ने इस काव्य से—'सन्ध्यावधूं गृह्य करेण भानुः, पद्यांश उद्धृत किया है। अमर कोशटीकाकार रायमुकुट ने 'पयः पृषन्तिभिः स्पृष्टा वान्ति वाताः शनैः शनैः। पद्यांश–जाम्ववती विजय का बतलाया है। पुरुषोत्तम ने, अपनी भाषावृत्ति में जाम्ववती विजय के पद्य उद्धृत किए हैं। शरणदेव ने अपनी दुर्घट वृत्ति में इस काव्य के अठ्ठारवें सर्ग से एक पद्य उद्धृत किया है—

"त्वयासहार्जितं यच्च यच्च सख्यं पुरातनम्।
चिराय चेतसिपुनः तरुणीकृतमद्यनै" ॥

इससे अवगत हाता है कि यह काव्य न्यून से न्यून अट्ठारह सर्गों का ता अवश्यमेव था महाभाष्य कारने पाणिनि को स्पष्ट शब्दों में 'तद-कीर्तितमा चरितं कविना, कवि कहा है। और दाक्षी पुत्र तथा शालातुर ग्रामनिवासी कहा है। भट्ट सोमेश्वर ने हरचरित में लिखा है कि पाटलि

पुत्र निवासी नन्द समकालिक वर्ष उपाध्याय से पाणिनि ने विद्याध्ययन किया था। राजशेखर ने भी इसका समर्थन किया है—'अत्रोप वर्ष वर्षा विह पाणिनि पिङ्गला विह व्याडिः। वररुचि पतञ्जली इह परीक्षिताः ख्यातिमुपजग्मुः॥ पाश्चात्य ऐतिहासिक पाणिनि को ईशा से ४०० वर्ष पूर्व का बतलाते हैं॥

कात्यायनो वररुचिः स्वर्गारोहणनामकम्।
निर्माय रुचिरं काव्यं स्वर्गमानीतवान्भुवि॥६॥

कात्यायन गोत्रीय वररुचि ने स्वर्गारोहण नामक काव्य लिख कर भूतल में स्वर्ग को आनीत किया। यही वररुचि पाणिनीय वार्तिककार वररुचि हैं। भाष्यकार पतञ्जलिने—'वाररुचं काव्यं का उल्लेख अपने महा भाष्य में किया है। सम्राट् समुद्र गुप्त ने अपने कृष्णचरित में लिखा है—'न केवलं व्याकरणं पुपोष दाक्षी सुतस्येरित वार्तिकैर्यः। काव्येऽपि भूयोऽनुचकार तंवैकात्यायनोऽसौ कवि कर्म दक्षः॥ राजशेखर ने वररुचि के इस काव्य का नाम कण्ठा-भरण लिखा है वह गलित है। कण्ठाभरण के कर्त्ता तो शांख्यायन हैं सम्राट् समुद्र गुप्त ने लिखा है

'सांख्यायनाय कवये नमोऽस्तु कण्ठाभरणकर्त्रे।
काव्यंयस्यरसाढयं कण्ठाभरणं सदा विदुषाम्॥

कथा सरित्सागर के अनुसार इस वररुचि कात्यायन का समय भी ईशा से चारसौ वर्ष पूर्व है। भाष्यकार ने 'प्रियतद्धितादाक्षिणात्या' लिखकर इसको दक्षिण देश का निवासी कहा है अन्य प्रमाणों से भी यह [illegible] है इसके सूत्रों का

कातन्त्र व्याकरण में प्रयोग किया गया है। प्राकृत-प्रकाश में महाराष्ट्री पैशाची सौरसेनी और मागधी इन चार भाषाओं का विचार है ॥

व्याडिः चक्रे महाकाव्यं वलदेवचरित्रकम्
पाणिनीय वचो व्याख्या संग्रहस्य करश्चयः ॥७॥

व्याड़ि ने महाकाव्य बलदेव-चरित्र लिखा। ये वही व्याड़ि हैं जिन्होंने पाणिनीय व्याकरण पर लक्षपाठात्मक संग्रह ग्रन्थ लिखा है। महाभाष्य-कार ने व्याडि के संग्रह-ग्रन्थ का उल्लेख किया है। और सम्राट् समुद्र गुप्त ने इसके दोनों ग्रन्थों का षड्गुरु शिष्य ने अपनी अनुक्रमणिका में व्याडि को पाणिनिका मातुलपुत्र लिखा है। अतः पाणिनिका स्थिति समय ही व्याडि का स्थिति समय है ॥

स्वप्नवासवदत्तादिनाटकानि प्रणीतवान् ।
नाटकीय कला भिज्ञोभासः कविकुलाग्रणीः ॥८॥

नाटकों के आदि कवि भास ने स्वप्न वासव दत्तादि त्रयोदश नाटक लिखे। भास, संस्कृत नाटककारों में सर्वप्रथम माने गये हैं। कालिदास ने मालविकाग्निमित्र की प्रस्तावना में अपने समय में भास को प्रख्यात कीर्ति माना है। वाणने हर्षचरित में 'सूत्रधारकृतारम्भैर्नाटकैर्बहुभूमिकैः। सपताकैर्य शोलेभे भासोदेवकुलैरिव ॥ लिखा है। राजशेखर ने उनके प्रसिद्ध नाटक स्वप्न वासवदत्त का उल्लेख किया है।

'भासनाटकचक्रेऽपि छेकैः क्षिप्तेपरीक्षितुम् ।
स्वप्नवासवदत्तस्य दाहकोडभून्नपावकः ॥

इन नाटकों में अनेक ऐसे अर्थ हैं जो ...

व्याकरण का अभी पूर्ण प्रचार नहीं हुआ था। तबभी अपने यज्ञफल नाटक में भासने-पाणिनीय व्याकरण का और लक्षश्लोकात्मक संग्रह ग्रन्थ का स्पष्ट उल्लेख किया है—'ससूत्रार्थ संग्रहं व्याकरणम्। यद्यपि यही लेख वाल्मीकीय रामायण में भी है तब उसी के आधार पर व्याड़ि ने अपने ग्रन्थ का नाम 'संग्रह' रक्खा होगा और वह व्याकरण ऐन्द्र' रहा होगा। कौटिल्य के अर्थ शास्त्र में दो श्लोक उद्धृत हुए हैं उनमें से एक भासकृत प्रतिज्ञायौगन्धरायण का है—'नवंशरावंसलिलस्यपूर्णम्' इत्यादि, भास अपने नाटकों के भरत वाक्यों में लिखता है कि हमारा राज सिंह सागरपर्यन्त एकातपत्राङ्क भूमि को शासित करे। उदयन के पश्चात् इतनी भूमि को शासित करने वाला राजसिंह महापद्म नन्द था उसी के समकालीन वररुचि ने अपने उभयाभिसारिका नाटक में एक बहुत बड़े विशाल राज्य का वर्णन किया है। अतः भास कौटिल्य से किंचित्पूर्व वर्त्तीथा अर्थात् विक्रम से कम से कम साढ़े तीन सौ वर्ष पूर्व अवश्यमेव था। भासका स्वप्न-वासवदत्त, नाटय कला का जीता-जागता उदाहरण है। भास, राम, और कृष्ण दोनों का भक्त था, परन्तु-'वाङ्मयेषुमधुरा हरिगाथा तत्र कृष्ण चरितान्यमृतानि, के अनुसार उसने सर्व प्रथम कृष्ण का बालचरित सवन्धित—बालचरित नाटक लिखा था। कालि-दास ने भासका पर्याप्त अनुकरण किया है यथा—'सेयंयाति शकुन्तला पतिगृहं सर्वै रनुज्ञायताम्' यह शाकुन्तलपद्य, 'सेयंशक्रिपोर शोकवबनिका भग्नेति विज्ञाप्यताप्त्, इस अभिषेक नाटक स्थपद्य की और विश्वासो-पगमाद भिन्नगतयः शब्दंसहन्तेमृगाः, यहशाकुन्तल पद्य, 'विस्त्रब्धं हरिणाः चरन्त्यचकिता देशागत प्रत्ययाः, इस स्वप्रनाटक पघ की घनिष्ठ समता रखता है। शूद्रककामृच्छकटिक नाटक तो भासके दरिद्रचारुदत्र का परिष्कृत संस्करण है।

भासोहासः कवित्त्वस्य जयदेवो यदुक्तवान् ।
तत्सत्यं कोन मनुते कविकर्म सुबुद्धिमान् ॥९॥

महाकवि भास, कविता कामिनी के हास हैं, जयदेव की इसतथ्योक्ति को कौन काव्यचातुरीधुरीण सोलह आने सत्य नहीं मानते हैं ॥

श्रीवत्सराजचरितं नाटकंकृतवान्महत् ।
सुबन्धुर्विन्दुसारस्य मौर्यस्य नृपतेः कविः ॥१०॥

हेमचन्द्र के परिशिष्ट पर्व से ज्ञात है कि बिन्दुसार का सभाकवि और मन्त्री सुबन्धु था। वृहत्कथा कोश में भी यही लिखा है। उसने वत्स-राजचरित नाटक लिखा। दण्डी की अवन्ती सुन्दरी कथा से यह भी ज्ञात है कि किसी कारणवश बिन्दुसार ने सुबन्धु को बन्दी कर लिया था। 'सुबन्धुः किल निष्क्रान्तो बिन्दुसारस्य बन्धनात्। सुबन्धु कवि बिन्दुसार के बन्धन से मुक्त हो गया। चन्द्रगुप्त पुत्र बिन्दुसार की मृत्यु २१६ वि० पूर्व हुई थी यही समय सुबन्धु का है। ध्वन्यालोककी लोचन टीका में अभिनव गुप्त ने इस वत्सराज-चरित नाटक का नाम लिखा है। सम्राट् समुद्र गुप्त कृत कृष्णचरित में भी सुबन्धु के इस वत्स राज चरित का उल्लेख है ॥

अस्यवैदुष्यमालोक्य वत्सराजस्तु कश्चन ।
पंचग्रामान्ददौ चास्मै निजांभगिनिकांतथा ॥११॥

सुबन्धु की विद्वता को देखकर किसी वत्सराज ने सुबन्धु के लिये अपनी बहन और पांच ग्राम भेंट दी ॥

चित्तदोषहरं काव्यं योगदर्शन नामकम् ।
पतञ्जलिमुनिश्चके महाभाष्यकरश्च यः ॥१२॥

चित्त दोष हारक योग दर्शन नामक काव्य मुनिवर पतञ्जलि ने बनाया जो पतञ्जलि महाभाष्य कर्ता थे। भरद्वाज शिष्य अग्निवेश कृत याज्ञ वल्वय सहपाठी चरक मुनि प्रति संस्कृत-चरक संहिता पर वार्तिक इसी पतञ्जजि ने लिखे थे। देखिये रामभद्र प्रणीत पतञ्जलि चरित्र, 'वैद्यक शास्त्रे च वार्तिकानिततः' लिखा है। हमने पीछे चरक-संहिता का प्रति-संस्कर्ता पतञ्जलि लिखा है वह ठीक नहीं। नागेश और समुद्र गुप्त के चरके लेखका तात्पर्य भी 'चरकोपरि होगा। पतञ्जलि का समय पुष्य मित्र का राज्य काल है। गार्गी संहिता में लिखा है कि यवनों ने मथुरा को जीत कर मगध पर आक्रमण किया भाष्यकार पतञ्जलि ने भी लिखा है—अरुणत् यवनः सोकतमरुणात् यवनोमध्य-मिकाम्' यह यवन नि-सन्देह मिलिन्द (मिनेन्डर) था इसको मगध पर आक्रमण के समय शुङ्ग-महाराज पुष्य मित्र ने हराया था। यह समय विक्रम सं० से ५३ वर्ष पूर्व था इसके अनन्तर पुष्य मित्र ने अश्वमेघ यज्ञ किया जिसका वर्णन हरिवंश पुराण में मिलता है। पतञ्जलि ने भी महाभाष्य में दिया है 'पुष्यमित्रोयजते, 'इह पुष्पमित्रंयाजयामः' इन वाक्यों से ज्ञात होता है स्वयं पतञ्जलि इस यज्ञ में सम्मिलित रहे होंगे, 'पुष्य मित्र का पुत्र अग्नि मित्र भी जो उस समय विदिशा में राज्य करता था आकर यज्ञ में सम्मिलित हुआ था। पुष्य मित्र और अग्नि मित्र शुङ्ग वंश के ब्राह्मण राजा थे। इनके राज्यत्व काल में भारतीय-संस्कृति चरम सीमा पर पहुंची और संस्कृत भाषा पुनः राष्ट्र भाषा बनी।

ब्राह्मण होने के नाते उनके लिये संस्कृत और संस्कृति की उन्नति करना स्वाभाविक था बौद्ध भिक्षु उनसे बड़े जलते थे, भाष्यकार ने 'येषांशाश्वतिको विरोधः' सूत्र का उदाहरण 'श्रमण ब्राह्मणम्' दिया हैसमुद्र गुप्त ने भी लिखा हैं—'बुद्धि वीर्ये वले नास्य सौगताश्च प्रसेहिरे' (अग्निमित्र शूद्रक के बुद्धि और वीर्य बल को बौद्ध न सह सके। तिब्बत के तारानाथ ने लिखा है किं पुष्य मित्र और अग्नि मित्र ने हजारों बौद्ध मठ जलवा दिये थे। पुष्य मित्र का स्थिति समय विक्रम सं० से ५० वर्ष पूर्व था। क्षीर स्वामी ने लिखा है—'शूद्रक स्त्वग्नि मित्राख्यः, अर्थात्-शूद्रक अग्निमित्र था, त्रैलोक्य प्रज्ञप्ति में अग्नि मित्र का राज्य काल ६० वर्ष का लिखा है। सम्राट् समुद्र गुप्त ने अपने कृष्ण चरित में शूद्रक को विक्रमसंवत्प्रवर्तक और नाटक द्वय कारकमाना है॥

(संवत्प्रवर्तक अग्निमित्र शूद्रक विक्रमादित्यः)

वार्तिकं रूपके द्वे च हर्षशूद्रकविक्रमः।
मातृगुप्तश्च तट्टीकां कृतवानिति शुश्रुमः ॥१३॥

अग्निमित्र और हर्षापर नामक शूद्रक विक्रमादित्य ने नाटय-शास्त्र पर वार्तिक और दो रूपक लिखे। काव्य मीमांसा में राजशेखर ने शूद्रक (अग्निमित्र शूद्रक) सात वाहन (हाल सात वाहन) और साहसाङ्क (समुद्र गुप्त) को कवि और राजा माना है। गौड़वहों में भी अग्निमित्र को कवि लिखा है। यद्यपि ये दोनों ग्रन्थ वार्तिक और तट्टीका अनुपलब्ध हैं तथापि इनके उद्धरण पर्याप्त संख्या में प्राप्त होते हैं। सागरनन्दी ने

नाटकलक्षण में लिखा है—श्रीहर्ष विक्रम नराधिप मातृगुप्त गर्गा

इमकुट्टनखकुट्टकवाद राणाम् । एषांमतेन भरतस्यमतं विगाह्य घुष्टं मया समनुगच्छत रत्नकोषम् ।। यह वही दानवीर शूद्रक हर्ष विक्रम है जिसने मातृगुप्त को काश्मीर राज्य दिया था । सम्राट् समुद्र गुप्त ने भी लिखा है—

'मातृ गुप्तो जयति यः कविराजो न केवलम् ।
काश्मीर राजोऽप्यभवत्सरस्वत्याः प्रसादतः ।।

हमारी सम्मति में नाटककार कालिदास और मातगुप्त अभिन्न व्यक्ति हैं । अग्नि मित्र ही शूद्रक और हर्ष विक्रम है पुष्य मित्र के राज्य का यह दक्षिणी प्रदेश का शासक था । विक्रम सं० से २७ वर्ष पूर्व यह विदिशा में राज्य करता था, क्षीर स्वामी ने लिखा है—'शूद्रक स्त्वग्नि मित्राख्यः' और 'शूद्रको नाम वीराणा मधिपः सिद्धि मापयः । त्रिषु वर्ष सहस्त्रेषु त्रिशंत्याचाधिकेषुच । भविष्यं विक्रमादित्य-राज्यं सोऽथ प्रलप्स्यते ।। इस स्कन्द पुराण के अनुसार इसने वि० सं० से २७ वर्ष पूर्व मुरुण्डस्वाति को मार कर 'विगृह्य स्वातिनासह (अवन्तिकथासार) अपने भुजबल से उज्जयिनी राज्य हस्तगत किया और वहां रहने लगा । विक्रम सं० से एक वर्ष पूर्व षोड़ाश क्षत्रपने शक सेना सहित सिन्ध से आकर उज्जयिनी को घेर लिया अग्नि मित्र शूद्रक ने मालव-गण की सहायता से शकों को हरा कर भगा दिया । उज्जयिनी से भगकर शक कुछ मथुरा की ओर चले गये और कुछ तक्षशिला की ओर । युग-पुराण में शुङ्ग काल में ही शकों का आक्रमण करना लिखा है । यह शक पराजय अग्नि मित्र के नेतृत्व में मालवगण ने किया था, 'मालवानांजयः' ऐसे अनेक लेख मिल हैं । इस विजय के हर्षोपलक्ष में [illegible]

नाम हर्ष रक्खा और एक संवत् चलाया जिसका नाम कृतया मालव, रक्खा गोण्डोफर्स के १०३ से आरम्भ कर ४८१ तक के कृत नाम से १४ लेख मिले हैं। श्री मालव गणाम्नाते प्रशस्ते कृत संज्ञिते इत्यादि, मालवनाम से आठच्सोलक के मिले हैं पीछे चालुक्यों के तथा चण्ड महासेन के ८६८ के लेख में मालव सं० का नाम विक्रम सं० लिखा मिला है। 'वसुनवअष्टौ वर्षा गतस्य कालस्य विक्रमाख्यस्य, सुमतितन्त्र में युधिष्ठिराब्द के बादयहीमालवाब्द शूद्रकाब्द नाम से लिखा है। शूद्रकाब्द क्यों कृतसंवत् कहाया, देखिये सम्राट् समुद्रगुप्त का कृष्ण चरित—

'पुरन्दरवलोविप्रः शूद्रकः शस्त्र शास्त्रवित्।
वत्सरं स्वं शकान् जित्वा प्रावर्तयत वैक्रमम्॥
धनुर्वेदंचौर शास्त्रं रूपके द्वे तथाऽकरोत्।
सविपक्ष विजेताऽभूच्छास्त्रैशस्त्रैश्च कीर्तये॥
बुद्धिवीर्ये वरे नास्य सौगताश्च प्रसेहिरे।
स तस्तारारि सैन्यस्य देहखण्डैरणे महीम्॥
धर्मायराज्यंकृतवान् तपस्विव्रतमाचरन्।
सतांमतः सोऽश्वमेधं कृतवानुरु विक्रमः॥
उपवेश्य निजं पुत्रं देवमित्रं निजासने।
वार्धके मुनिवृत्त्यैव नयन्कालंवनंययौ॥
आत्मवर्णः कविस्तस्य कालिदास इतिश्रुतः।
दुष्यन्तभूपति कथां नाटकेनिबबन्ध यः॥
शाकुन्तलातिरिक्तानि रूपकाणि स निर्ममे।
वस्तुरम्य दर्शयन्ति त्रीण्यन्यानि लघूनिच॥

तत्कथांकृतवन्तौयौ कवी रामिलसोमिलौ ।
तस्यैवसदसि स्थित्वा सम्मानं वह्वा प्नुप्ताम् ॥

मृच्छकटिक नाटक शूद्रक की कृति मानी जाती है उसमें इस का वर्णन देखिये—' द्विरदेन्द्र गतिश्चकोरनेत्रः परिपूर्णेन्दुमुखः सुविग्रहश्च । द्विजमुख्यतमः कविर्वभूव प्रथितः शूद्रक इत्यगाधसत्वः ॥ ऋग्वेदं सामवेदं गणितमथकलां वैशिकी हंस्ति शिक्षां ज्ञात्वाशर्वप्रसादाद् व्यपगततिमिरे चक्षुषी चोपलभ्य । राजानंवीक्ष्यपुत्रं परम समुदयेनाश्वमेधेनचेष्टा लब्ध्वा-चायुः शताब्दं दशदिनसहितं शूद्रकोऽग्निं प्रविष्टः ॥ समरव्यसनी प्रमादशून्य ककुदं वेदविदांतपोधनश्च । परवारणवाहु युद्ध लुब्धः क्षितिपालः किल-शूद्रकोवभूव ॥

यहां अग्निमित्र शूद्रक की आयुः सौ वर्ष की लिखी है, ऐतिहासिक गार्डन साहव के अनुसार पुष्यमित्र के पाटलि पुत्र पर मिनेन्डर का आक्रमण विक्रम सं० से ५३ वर्ष पूर्व हुआ था, उसके एक वर्ष बाद पुष्यमित्र ने अश्वमेधयज्ञ किया उसके एक दो वर्ष बाद पुष्यमित्र मृत्यु को प्राप्त हो गया उस समय अग्नि मित्र की आयुः ४० वर्ष की रही होगी ६० वर्ष पीछेतक अग्निमित्र और जीवित रहा उसने भी एक अश्वमेध किया विदिशा के अतिरिक्त आठ वर्ष उसने पाटलिपुत्र में भी राज्य कर अपने पुत्र वसुमित्र (सुमित्र) को दे दिया था। और अग्निमित्र उज्जयिनी में रहने लगा अग्निमित्र के दो पुत्र थे वसुमित्र (सुमित्र) और मित्रदेव (पाठान्तर) (देवमित्र) हर्षचरित्र के अनुसार देवमित्र ने १० वर्ष राज्य करने के बाद वसुमित्र को मार दिया था। अग्निमित्र के सभ्य नाटकत्रयकर्ता कालिदास तथा रामिल सोमिल कवि थे। [illegible] अग्निमित्र का वर्णन

शूद्रक नाम से ही किया है, विक्रमपदवीधारण करना वाण को ज्ञात न होगा क्योंकि उसका चलाया संवत् मालव संवत् ही कहलाता था। सम्राट् समुद्रगुप्त को और सुमति तन्त्रकार को इसका विक्रम पदवी धारण करना ज्ञात था। राजतरङ्गिणीकार ने लिखा है—

'तत्रानेहस्युज्जयिन्यां श्रीमान् हर्षा पराभिधः।
एकच्छत्रश्चक्रवर्ती विक्रमादित्य इत्यभूत्॥

म्लेच्छोच्छेदाय वसुधां हरेरवतरिष्यतः।
शकान्विनाश्य येनादौ कार्य भारोलघूकृतः॥

नाना दिगन्तराख्यातं गुणवत्सुलभंन्टपम्।
तंकविर्मातृ गुप्ताख्यः सर्वास्थानस्थ मासदत्॥

'तत्रानेहसि' सेध्वनित होता है कि वह पहले विदिशा में रहता था, क्योंकि वाणादि ने उसकी स्थिति विदिशा में ही मानी है। वेतालपचीसी का शूद्रक यही था, वहां भी इसकी आयुः सौ वर्ष की लिखी है। वहां का वीरवर मालविकाग्निमित्र का वीरसेन था। 'युधिष्ठिरो विक्रमशालि-वाहनौ, इस श्लोक में शूद्रक को विक्रमादित्य नाम से पुकारा है। मृच्छ-कटिक में 'द्विजमुख्यतमः कविर्बभूव' चकार सर्वंकिल शूद्रकोनृपः, लब्ध्वाचायुः शताब्दंदशदिन सहितं शूद्रकोऽग्नि प्रविष्टः, लेखों से और रुद्रोराजा[illegible] के वर्णन से सिद्ध होता है कि शूद्रक से ५०६० वर्ष वाद यह नाटक किसी अन्य व्यक्ति ने परिवर्धित किया होगा। किसने किया यह निश्चित कहना तो कठिन है परन्तु साध्य है—भर्तृमेण्ठ ने गुणग्राही शूद्रक की कीर्ति को अमर बनाने के लिये यह नाटक उसके वर्णन [illegible]

तत्कथांकृतवन्तौयौ कवी रामिलसोमिलौ ।
तस्यैवसदसि स्थित्वा सम्मानं वह्लवा प्नुप्ताम् ।।

मृच्छकटिक नाटक शूद्रक की कृति मानी जाती है उसमें इस का वर्णन देखिये—' द्विरदेन्द्र गतिश्चकोरनेत्रः परिपूर्णेन्दुमुखः सुविग्रहश्च । द्विजमुख्यतमः कविर्बभूव प्रथितः शूद्रक इत्यगाधसत्वः ।। ऋग्वेदं सामवेदं गणितमथकलां वैशिकी हंस्ति शिक्षां ज्ञात्वाशर्वप्रसादाद् व्यपगततिमिरे चक्षुषी चोपलभ्य । राजानंवीक्ष्यपुत्रं परम समुदयेनाश्वमेधेनचेष्टा लब्ध्वा-चायुः शताब्दं दशदिनसहितं शूद्रकोऽग्नि प्रविष्टः ।। समरव्यसनी प्रमादशून्य ककुदं वेदविदांतपोधनश्च । परवारणवाहु युद्ध लुब्धः क्षितिपालः किल-शूद्रकोवभूव ।।

यहां अग्निमित्र शूद्रक की आयुः सौ वर्ष की लिखी है, ऐतिहासिक गार्डन साहव के अनुसार पुष्यमित्र के पाटलि पुत्र पर मिनेन्डर का आक्रमण विक्रम सं० से ५३ वर्ष पूर्व हुआ था, उसके एक वर्ष बाद पुष्यमित्र ने अश्वमेधयज्ञ किया उसके एक दो वर्ष बाद पुष्यमित्र मृत्यु को प्राप्त हो गया उस समय अग्नि मित्र की आयुः ४० वर्ष की रही होगी ६० वर्ष पीछेतक अग्निमित्र और जीवित रहा उसने भी एक अश्वमेध किया विदिशा के अतिरिक्त आठ वर्ष उसने पाटलिपुत्र में भी राज्य कर अपने पुत्र वसुमित्र (सुमित्र) को दे दिया था । और अग्निमित्र उज्जयिनी में रहने लगा अग्निमित्र के दो पुत्र थे वसुमित्र (सुमित्र) और मित्रदेव (पाठान्तर) (देवमित्र) हर्षचरित्र के अनुसार देवमित्र ने १० वर्ष राज्य करने के बाद वसुमित्र को मार दिया था । अग्निमित्र के सभ्य नाटकत्रयकर्ता

शूद्रक नाम से ही किया है, विक्रमपदवीधारण करना बाण को ज्ञात न होगा क्योंकि उसका चलाया संवत् मालव संवत् ही कहलाता था। सम्राट् समुद्रगुप्त को और सुमति तन्त्रकार को इसका विक्रम पदवी धारण करना ज्ञात था। राजतरङ्गिणीकार ने लिखा है—

'तत्रानेहस्युज्जयिन्यां श्रीमान् हर्षा पराभिधः।
एकच्छत्रश्चक्रवर्ती विक्रमादित्य इत्यभूत्॥

म्लेच्छोच्छेदाय वसुधां हरेरवतरिष्यतः।
शकान्विनाश्य येनादौ कार्य भारोलघूकृतः॥

नाना दिगन्तराख्यातं गुणवत्सुलभंन्टपम्।
तंकविर्मातृ गुप्ताख्यः सर्वास्थानस्थ मासदत्॥

'तत्रानेहसि' सेध्वनित होता है कि वह पहले विदिशा में रहता था, क्योंकि बाणादि ने उसकी स्थिति विदिशा में ही मानी है। वेतालपचीसी का शूद्रक यही था, वहां भी इसकी आयुः सौ वर्ष की लिखी है। वहां का वीरवर मालविकाग्निमित्र का वीरसेन था। 'युधिष्ठिरो विक्रमशालिवाहनौ, इस श्लोक में शूद्रक को विक्रमादित्य नाम से पुकारा है। मृच्छकटिक में 'द्विजमुख्यतमः कविर्बभूव' चकार सर्वंकिल शूद्रकोनृपः, लब्ध्वाचायुः शताब्दंदशदिन सहितं शूद्रकोऽग्नि प्रविष्टः, लेखों से और रुद्रोराजा [illegible] के वर्णन से सिद्ध होता है कि शूद्रक से ५०६० वर्ष बाद यह नाटक किसी अन्य व्यक्ति ने परिवर्धित किया होगा। किसने किया यह निश्चित कहना तो कठिन है परन्तु साध्य है—भर्तृमेण्ठ ने गुणग्राही शूद्रक की कीर्ति को अमर बनाने के लिये यह नाटक उसके वर्णन आदि से परिवर्धित किया संग्रह ग्रन्थों में [illegible]

वाञ्जनंनभः। यह पद्य विक्रमादित्य और भर्तृ मेण्ठ नाम से उद्धृत हैं भर्तृमेण्ठ दाक्षिणात्यथा उसकी छाप नाटक में है, नाटक का वभूव, परोक्षता सिद्ध करता है, किलेत्यैतिह्ये अर्थात् शूद्रक सौवर्ष १० दिन की आयुभोगकर जीतेजी तुषाग्नि में प्रविष्ट हुआ था यह सब शूद्रक ने किया, शूद्रक से ६० वर्ष पीछे ही रुद्रदामा भी राज्य कर रहा था वह मेण्ठ का समकालिक रहा होगा। कुछ यह भी कहते हैं कि रुद्र से यहां रुद्रदामा विवक्षित नहीं है शकारका भाषण अस्तव्यस्त होता है।

इसी विक्रम शूद्रक का सभाकवि रामिल अपने गुरु शंकरेन्द्र स्वामी को शूद्रका परनामक हर्ष विक्रम का कृपा पात्र बतलाता हैं—

'हर्षक्षोणिपतेश्च हर्षमतुलं दृष्टैवयेतानिषुः।
धीरांस्तान् गुरुशंकरेन्द्रयमिनः चित्तेस्मरन् रामिलः॥

(मणि प्रभानाटक) भर्तृमेण्ठका भी गुरु यही शंकरेन्द्र स्वामी था। 'ख्यात श्रीशंकरेन्द्र प्रचुरतर कृपालब्ध साहित्य विद्यः।

सद्यः साधूक्ति सम्मौद्यपि पर कविता मर्षिणोमातृगुप्तात्॥

यह श्री हर्षापरनामक अग्निमित्र शूद्रक विक्रम, विदिशा मालव मथुरा कन्नोज और कश्मीरादि प्रान्तों पर राज्य करता था, इसका चलाया हुआ यह मालव संवत्-मथुरा कन्नोज आदि प्रान्तों में चलता रहा, पीछे चालुक्य प्रथम विक्रम से विक्रम संवत् कहा जाने लगा, अग्निमित्र शूद्रक विक्रम; धर्मार्थराज्य किया करता था। उसने सारी प्रजा को करों से मुक्त कर दिया था। शूद्रकजय, विक्रान्त-शूद्रक, शूद्रक कथा, बीर शूद्रक ये ग्रन्थ इसी पर आधारित हैं श्री कल्हण ने राजतरङ्गिणी में

हर्षनाम स्कन्द गुप्त का लिख दिया है यह बड़ी भूल है मातृ गुप्त और हर्ष का स्मरण तो स्कन्द गुप्त के पडदादा समुद्रगुप्त ने किया है किसी शिला लेख में भी स्कन्द गुप्त का हर्षनाम कहीं नहीं मिला। दूसरे रूपक के संबन्ध में अभी बड़ा मतभेद है कुछ विद्वान् पद्म प्राभृतभाण को शूद्रक का दूसरा रूपक कहते हैं। परन्तु यह कहना ठीक नहीं क्योंकि उसमें विषमशील विक्रम शातवाहन के मित्र धूर्तमूलदेवका वर्णन है कातन्त्र व्याकरण का प्रचार और वाशिष्ठी पुत्र का नामोल्लेख है। अतः पद्मप्राभृतरूपक अग्नि मित्र शूद्रक विक्रम की कृति नहीं हो सकती हां, यह कृति द्वितीय शूद्रक इन्द्राणी गुप्त (मत्स्य के प्रथम पुलुमावी) की रही होगी। 'इन्द्राणीगुप्त' इत्यासीत् यमाहुः शूद्रकं बुधाः [अवन्ति कथासार] मत्स्य और कलियुगराजवृतान्त के अनुसार इस प्रथम पुलुभावी का राज्य ३६ वर्ष का था।

'पुलोम श्री सातकर्णिः षट् त्रिशद्भवितासमाः।

वाशिष्ठी पुत्रनाम्नायः शासनेषु प्रयुज्यते ॥ हर्ष चरित के अनुसार इसने दूत द्वारा चकोरनाथ (चकोर सातकर्णि) को मरवा डाला था। चकोर सातकर्णि कौन था? प्रथम वाशिष्ठी पुत्र, देखिये कलियुग राजवृत्तान्त—

'चकोरशातकर्णिश्च षण्मासान्भोक्ष्यते महीम्।
वाशिष्ठी पुत्रनाम्नायः प्रख्यातिंभुवियास्यति ॥

प्रथम वाशिष्ठी पुत्र के स्वल्प राज्य करने का यही कारण रहा होगा।

श्रीवल्लभ के कथनानुसार शूद्रक का ...

था, हाल सात वाहन के गाथा कोश में भी शूद्रक विक्रमादित्य की दान महिमा वर्णित है—

'संवाहन सुखरसतोषितेन ददता तव करेलक्षम् ।
चरणेन विक्रमादित्य चरितमनुशिक्षितंतस्याः ॥

अभी हमने कहा था कि इसी शूद्रक हर्ष विक्रम ने मातृगुप्त को काश्मीर का राज्य दिया था, देखिये 'कश्मीरानेव काव्यं किमपिक वयितुर्दत्तवानप्रमत्तम् । रक्षादत्त-प्रहर्षप्रकृति कृति शताध्मातहर्षः सहर्षः ॥ कल्हण की भूल पीछे वतला दी है दूसरी यह है कि इस हर्ष को वह शकारि नहीं मानता और स्वयं लिखता है—'शकान् विनाश्य येना दौकार्यभारोलघूकृतः, जो पाश्चात्य कीथ आदि शूद्रक को ऐतिहासिक व्यक्ति नहीं मानते वे नितान्त भ्रान्त हैं । सरजोन्स विलियम और पीटर्सन ने इस विक्रम को माना है ॥

**मालविकाग्निमित्रंच अभिज्ञान शकुन्तलम् ।
तथा विक्रमोर्वशीयं कालिदासो विनिर्ममे ॥१४**

काश्मीरिक महाकवि कालिदास ने मालविकाग्निमित्र विक्रमोर्वशीय तथा अभिज्ञान शाकुन्तल नाटक लिखे । यह कालिदास निःसन्देह शुङ्ग अग्निमित्र शूद्रक विक्रमादित्य का सभा कवि था, क्योंकि मालविकाग्नि मित्र का सम्पूर्ण नाट्य कथानक विदिशा पर अवलम्बित है । यही समुद्र गुप्त ने भी कृष्ण चरित्र में लिखा है । मालविकाग्नि मित्र से भी स्पष्ट प्रतीत होता है कि कालिदास शुङ्ग अग्नि मित्र का सभा कवि था, क्योंकि अग्नि मित्र का जो चरित्र पुराणों में भी वर्णित नहीं वह

कालिदास ने इस नाटक में लिखा है रानियों की पारस्परिक स्पर्धा, राजा की कामुकता, महारानी धारिणी की धीरता तथा निः सीम प्रेमआदि, द्वितीयनाटक विक्रमोर्वशीय है इसका नाम करण तथा 'अनुत्सेकोहि विक्रमालङ्कारः, लिखना अपने आश्रय दाता अग्निमित्र शूद्रक का विक्रमा दित्य पदवी धारण करना सुतरां सिद्ध करता हैं। तीसरा नाटक अभिज्ञान शाकुन्तल है। यह नाटक भारतीय नाटकों में शिरोमणि है पाश्चात्य विद्वानों तक ने इसकी मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। तभी यह प्रसिद्धि है—'काव्येषुनाटकंरम्यं नाटकेषु शकुन्तला। २५ ई० के भीटा के एक मुद्राचित्र में एक राजा हरिण का शिकार करता हुआ दीखता है यह चित्र निःसन्देह अभिज्ञान शाकुन्तल पर आधारित है। यह चित्र मिला भी है शुङ्गसाम्राज्य की सीमा के अन्तर्गत और १६३७ संवत् की एक अभिज्ञान शाकुन्तल की हस्तलिखित प्रति में—'आर्येरसभा वदीक्षागुरोः विक्रमादित्यस्य साहसाङ्कस्या भिरूपभूयिष्ठेयंपरिषत्' लिखा मिला है, आगे-गणशतपरिवर्तैः लिखा है। कथासरित्सागर के सप्तम तरंगका पाटलिपुत्र विक्रमादित्य भी यही अग्नि मित्र शूद्रक विक्रमादित्य है। अन्यथा सोमदेव ने गड़बड़ की है। मालविकाग्निमित्र नाटक का अन्तिमपद्य-'संपत्स्यतेनखलुगोप्तरि नाग्निमित्रे, तो स्पष्ट ही कालिदास को अग्निमित्रका सभा कवि सिद्ध कर रहा है। जो विद्वान् नाटककार कालिदास को चन्द्रगुप्तन्द्वितीय विक्रमादित्य का सभाकवि सिद्ध करने का विफल प्रयास करते हैं वे सर्वथा भ्रान्त हैं।

शाकुन्तल कवेरग्रे सम्पूर्णाः कविसूक्तयः।
ग्लानिलभन्ते सूर्यस्य कुमुदिन्यो यथाऽमलाः ॥१५॥

अभिज्ञान शाकुन्तल नाटककार महाकवि कालिदास के सामने अन्य

सम्पूर्ण कवियों की सूक्तियां इस प्रकार मन्द पड़ जाती हैं जैसे सूर्य के सामने कुमुदनियां ॥

(शाकप्रवर्तकगोतमीपुत्रसातवाहनविक्रमादित्यः)

गाथाकोशंकलितवान् सातवाहनविक्रमः ।
महाकवि गुंणाढयश्चविचित्रार्थां वृहत्कथाम् ॥१६॥

कुन्तलशातकर्णि गोतमीपुत्र सातवाहन राजा ने गाथा कोश संकलित किया,इस कोश में तीनसौ गाथाएं संकलित हैं सभी शृंगार रस से ओतप्रोत हैं। गाथा कोश की समाप्ति देखिये—'इतिश्रीमत्कुन्तलजनपदान्तर्गत प्रतिष्ठान-पत्तनाधीश, सातकर्णोपनामक दीपकर्णात्मज, मलयवती प्राणप्रिय, कलाप-प्रवर्तक शर्ववर्मधीसख, कविवत्सल हालाघुप नामक सातवाहन निर्मितः गाथाकोशोवसानमगात् इति ॥ कामसूत्र में लिखा है—'कर्तर्याकुन्तलः सातकर्णिः सातवाहनो महादेवीं मलयवतीं जघान'। काव्यमीमांसा में भी—'श्रूयते कुन्तलेषु सातवाहनो नाम राजा येन प्राकृत भाषा भाषणात्म कोन्तः पुरे प्रवर्तितोनियमः, सरस्वती-कण्ठाभरण में भोजराज लिखते हैं—'केऽभूवन्नाढ्यराजस्य काले प्राकृत भाषिणः। केनश्रीसाहसाहङ्कस्यकालेसंस्कृतभाषिणः ॥ टीकाकाररत्नेश्वर लिखता है आढ्यराजः सातवाहनः, साहसाङ्कः विक्रमादित्यः। यह कोश संभवतः श्रीपालित ने लिखा होगा क्योंकि इसमें शालिवाहन (सातवाहन) की भी प्रशंसावर्णित है—'आपन्नानिकुलानि द्वावेवजानीत उन्नतिं नेतुम्। पार्वत्याहृदयदयितोऽथवा शालिवाहन नरेन्द्रः ॥ उस समय में अपनी प्रशंसा अपने आप करना संभव नही जान पड़ती, इस बात

श्रीपालितोलालितः' यह श्रीपालित निःसन्देह गोतमी पुत्र शातकर्णि का सचिव विष्णुपालित था, तब यह कुन्तलसातकर्णि सातवाहन निःसन्देह महेन्द्र शातकर्णि का पुत्र-कुन्तलशातकर्णि गोतमीपुत्र विषम शील विक्रमादित्य था। इसके गाथा कोश में से कुछ गाथाएं लेकर और कुछ पीछे की लेकर आढ्य (आहाड़) राजा गुहिलोत १०२८ सं० के शालिवाहन ने गाथासप्तशती संकलित की थी। ये गाथायें लगभग सौ कवियों की हैं। जिनमें से ३०-३२ के लगभग हमारे परिचित हैं जो तीसरे शतक से १० वें शतक तक के हैं, श्री गौरीशंकर हीराचन्द्र ओझाने इस शालिबाहन का खोज निकाला है वे कहते हैं हर्ष चरित का आढ्यराज तो हर्षवर्धन था, परन्तु सरस्वतीकण्ठाभरण का आढ्यराज यही १०२८ सं० का शालिवाहन था। हाल सातवाहन नाम की जो कविताएं हैं वे सब पहली हैं किन्तु जो कविताएं शालिवाहन के नाम की हैं, वे इसकी हैं, पहली लगभग तीनसौ थीं सब मिलाकर सातसो हो गईं। टीकाकारों ने यह भेद नहीं जाना उन्होंने दोनों को ही हालनाम से उल्लिखित कर दी हैं। सोमदेव ने कथा सरित्सागर में महेन्द्र शातकर्णि का नाम महेन्द्रादित्य लिख दिया है; यह बड़ी भूल है। महेन्द्रादित्य कुमारगुप्त प्रथम की उपाधि थी नाम नहीं था ४ सौ वर्ष पुरानी बृहत्कथा में इसका नाम नहीं आ सकता, कथा-सरित्सागर का महेन्द्र शैवथा, और कुमारगुप्त भागवत था, अतः कथा सरित् का महेन्द्रादित्य महेन्द्र सातकर्णि ही था कुमार गुप्त की स्त्री का नाम अनन्त देवी था और कथासरित्के महेन्द्र की स्त्री सौम्यदर्शना थी। सोमदेव ने कथा सरित् सागर के सम्बन्ध में लिखा है—'यथामूलं तथैवैतन्न मनागप्यतिक्रमः। कथा संक्षेप विस्तार मात्रं भाषा च भिद्यते॥

अर्थात् मैंने अपना कथा सरित्सागर बृहत्कथा के बिलकुल अनुकूल लिखा है परन्तु है यह उसकी मिलावट। कथासरित्सागर का विषम शीललम्बक इसी गोतमी पुत्र सातकर्णि सातवाहन विक्रम पर आधारित है। क्षीर स्वामी ने लिखा है—

'विक्रमादित्यः साहसाङ्कः शकान्तकः।
शूद्रकस्त्वग्निमित्राख्यः हालः स्यात्सातवाहनः॥

अर्थात्—शूद्रक विक्रमादित्य तो निःसन्देह अग्निमित्र था। परन्तु सातवाहन विक्रमादित्य हाल होगा। आन्ध्रों की संशोधित सूची के अनुसार विक्रम सं० १३४ में महेन्द्र दीपकर्णि (शातकर्णि) सारे भारत पर राज्य कर रहा था, उज्जयिनी भी उसी के राज्य में थी, तब म्लेच्छों ने अर्थात् शकों ने भारत पर आक्रमण किया वह शक निःसन्देह सिन्धु देश का राजा कड़फिसिज द्वितीय था। महेन्द्र शातकर्णि की आज्ञा पाकर गोतमी पुत्र सातवाहन वीर विक्रमादित्य ने उसको करूर प्रदेश में पराजित कर उज्जयिनी में लाकर छोड़ दिया। यही वर्णन ज्योतिर्विदाभरण में है।

'येनास्मिन् वसुधातले शकगणान्सर्वादिशः संगरे।
हत्वापंचनव प्रमान्कलियुगे शाकप्रवृत्तिः कृता॥

'योरूमदेशाधिपतिं शकेश्वरं जित्वा गृहीत्वोज्जयिनीं महाहवे।
आनीयसंभ्राम्य मुमोचतंत्वहोसविक्रमार्कः समसह्यविक्रमः॥

हेमचन्द्र ने अपने कोश में और विलसन साहब ने सिन्ध को रूम देश माना है। चीनी पुस्तकों में भी ठीक इसी समय कड़फिसिज द्वितीय (कप्फस) का भारत पर पूर्व शक सेनाओं सहित आक्रमण करना

लिखा है। इसी गोतमी पुत्र शातकर्णि सातवाहन विक्रम ने ससेन कड़ फिसिज (कप्फस) को हराकर शाक संवत् चलाया था। प्रसिद्ध ऐतिहासिक अल्वेरूनी लिखता है कि—"शकाब्द विक्रम संवत् से १३५ वर्ष बाद चला, यह संवत् शकों के पराजय से आरम्भ हुआ प्रतिष्ठान से आकर विक्रमादित्य (गोतमी पुत्र शातवाहन) ने मुल्तान और लोनी के पास करूर (करोड़) प्रदेश में इस शक को जीता यही शक नाश का अब्द ज्यौतिषियों द्वारा प्रयोग में लाया जाता है यह विक्रमादित्य संवत् वाले विक्रमादित्य से कोई दूसरा था॥" सातवाहन की माता गोतमी वालश्री से शेषनाग ने नर रूप धारण कर के संयोग किया था जिससे गोतमीपुत्र उत्पन्न हुआ, एक दिन इसको एक सात राक्षस उठा कर ले गया और कहीं वन में डाल गया, शिकार खेलने के लिए महेन्द्र सातकर्णि वन में गया उसको यह मिल गया, घर पर लाकर अपनी स्त्री सौम्यदर्शना को दे दिया बड़ा होने पर अपना उत्तराधिकारी सम्राट् बना दिया। लोक प्रसिद्ध विक्रमादित्य यही था राजतरङ्गिणी में लिखा है—

'संत्यज्य विक्रमादित्यं सत्वोद्रिक्तं च शूद्रकम्।

कल्हण इसी को असली विक्रमादित्य मानता है, और अग्निमित्र शूद्रक को वह सत्त्वोद्रिक्त शूद्रक कहता है। डा० जायसवाल गोतमीपुत्र को प्रथम विक्रमादित्य मानता है वह भ्रान्ति है। प्रथम विक्रम तो शूद्रक था। असली विक्रमादित्य सातवाहन को मानकर ज्यौतिषी अपने ग्रन्थों में शालिवाहन शाक का प्रयोग करते हैं शलिवाहन यही सातवाहन था। बेतालपच्चीसी सिंहासन बत्तीसी इसी पर आधारित हैं। प्रतिष्ठान का त्रिविक्रमसेन भी यही है। इसने पुनः शक राज्य संस्थापक चष्टन को हराकर उज्जयिनी अपनी राजधानी बनाई थी। गोतमीपुत्र के सिक्कों पर एक तरफ खड़ा हुआ हाथी

सौराष्ट्र का राज्य दे दिया था। और उसकी प्रार्थना से उसकी पौत्री रुद्रदामा ([illegible]) की पुत्री से अपने पुत्र वाशिष्ठी पुत्र का वैवाहिक सम्बन्ध कर लिया था। मत्स्य पुराण का प्रथम पुलुमावी इसका पुत्र था। गोतमी पुत्र ने वाशिष्ठी पुत्र को अपने जीते जी प्रतिष्ठान का राजा वना दिया था, पुराणों में आन्ध्र राजाओं के राज्यकाल बहुत आगे पीछे हो गए हैं और बहुत पौर्वापर्य विपर्यास है। मत्स्यपुराण में गौतमी पुत्र का राज्यकाल २१ वर्ष का है ब्रह्माण्ड में २६ का है। वायु और भागवत में गोतमी पुत्र की जगह गोमती पुत्र है। कुन्तल सातकर्णि का ८ वर्ष का राज्यकाल है गोतमी पुत्र ने ८ वर्ष प्रतिष्ठान में राज्य किया होगा बाकी उज्जयिनी में, पुराणों में एक व्यक्ति के भिन्न-भिन्न दोबारा नाम दे दिये हैं, गौतमीपुत्र निःसन्देह हाल शातवाहन था, जैन पं० भद्रवाहू ने एक लेख दिया है—

'भरुकच्छपुरेऽत्रासीद् भूपतिर्नरवाहनः (नहपानः) ।
इतःप्रतिष्ठानपुरे नृपतिः शातवाहनः ॥
बलमित्र विहीनं तं जधान नरवाहनम् ॥

एक अन्य लेख मिला है उसमें लिखा है— नहपान ने भरुकच्छ (भड़ोच) में ४१ से ४६ तक राज्य किया, अन्त में उसको गोतमी पुत्र ने मार डाला'' डा० भाण्डारकर के मतानुसार इसमें १ का अङ्क छूट गया है यह प्राचीन शकाब्द १४१ से १४६ तक जानना चाहिये अर्थात् विक्रमाब्द १६१ में गोतमीपुत्र या उसकी आज्ञा से वाशिष्ठी पुत्र ने नहपान को मारा होगा। उसका राज्य लेकर सातवाहन गोतमीपुत्र ने अपने गुरु शर्ववर्मा को दिया। देखिये कथासरित्सागर— राजार्हरत्न-निचयैश्च स शर्ववर्मा सम्मानितो गुरुरिति प्रणतेन राज्ञा। स्वामीकृतश्च

विषये भरुकच्छनाम्नि ॥ वाशिष्ठी-पुत्र पुलु मावी के राज्य के १९वें वर्ष का शिलालेख—"राजराजस्य, गोतमीपुत्रस्य, ब्राह्मण श्रेष्ठस्य, हिमवन्मेरुमन्दर पर्वत समान सारस्य, असिक (प्रतिष्ठान) अश्मक (विदिशा) अपरान्त विदर्भ आकर (पूर्वीमालव) अवन्ति (उज्जैन) राजस्य, मलय महेन्द्र सह्य चकोर पर्वतपतेः, क्षत्रियमान-मर्दनस्य, शक यवन पल्हव निषूदनस्य, क्षहरातवंश-निरवशेषकरस्य, सातवाहन कुलप्रतिष्ठापनकरस्य, अनेक युद्धेषु विजित शत्रु संघस्य, रामकृष्ण भीमार्जुन समबलस्य, अनवरतजलार्द्र दक्षिणकरस्य, आगम-निलयस्य, त्रिसमुद्रतोयपीतवाहनस्य, धर्मसेतोः" गोतमीपुत्र सातवाहन विषमशील विक्रम की प्रधान स्त्री मलयवती थी और दूसरी वाशिष्ठी रही होगी जिसका पुत्र पुलुमावी वाशिष्ठी पुत्र था। मत्स्यपुराण में तथा कलियुगराज वृत्तान्त में उसका राज्यकाल ३६ वर्ष का लिखा है—वाशिष्ठी पुत्र का पुत्र शकरानी से उत्पन्न शकसेन था। 'अष्टाविंशति वर्षाणि शकसेनो भविष्यति। यमाहुर्माढरीपुत्रं शिवस्वातिमहाजनाः। ई० १३९ वि० १९६ में विद्यमान टालेमी ने अपने को वाशिष्ठी पुत्र पुलुमावी का समकालीन लिखा है यह लेख कम महत्त्व का नहीं है। आन्ध्रों का अन्तिम विशिष्ट राजा यज्ञ श्री शातकर्णि था जिसका पुत्र शक्तिश्री (शक्तिकुमार) था। गुणाढ्य ने भूत भाषामयी वृहत्कथा लिखी। इसने अपनी वृहत्कथा सातवाहन को अर्पित की थी॥

अश्वघोष इतिख्यातः शूरः कवि कुलाग्रणीः।
सौनन्द बुद्ध चरिते महाकाव्ये प्रणीतवान् ॥१७॥

महाकवि महान् दार्शनिक अश्वघोषा पर नामक शूर कवि ने बुद्ध चरित और सौन्दरानन्द काव्य लिखे। शूर सुवर्णाक्षी का पुत्र अयोध्या निवासी ब्राह्मण कवि था। यह ब्राह्मण जाति में ...

है कि कट्टर बौद्ध होते हुए भी इसने अपने ग्रन्थ संस्कृत भाषा में लिखे, सम्राट् समुद्रगुप्त के लेखानुसार इसने नौ ग्रन्थ लिखे थे। कुषाणकड़ फिसिज द्वितीय के उत्तराधिकारी गान्धार-पेशावर के प्रसिद्ध सम्राट् कनिष्क का यह सभा पण्डित था, कनिष्क ने कश्मीर में एक महती बौद्ध सभा करवाई थी उसमें अश्वघोष को सभापति चुना था, प्रसिद्ध सिद्ध नागार्जुन अश्वघोष का शिष्य था। नवीन ऐतिहासिक कनिष्कक का समय विक्रम सं० २२० तक मानते हैं ॥

कर्णकीर्तिमहाकाव्यं पाञ्चालक्षितिपः कविः ।
हरिचन्द्रो रचितवान् निजकीर्तिकरं भुवि ॥१८॥

पाञ्चाल देश के राजा हरिचन्द्र ने कर्णकीर्ति नामक गद्य महाकाव्य लिखा। इसका समय तृतीय शतक था, सम्राट् समुद्रगुप्त ने भी इसका उल्लेख किया है। सूक्तिसंग्रहों में भी इसका वर्णन उपलब्ध होता है 'विशुद्धोक्तिः शूरः हरति हरिचन्द्रोऽपि हृदयम्। हरिचन्द्र का कीर्तिस्तम्भ यही केवल एक काव्य है। दुर्भाग्यवश वह भी अनुपलब्ध है। वाण ने भी हरिचन्द्र का उल्लेख किया है 'भट्टार हरिचन्द्रस्य गद्यबन्धोनृपायते ॥

चकारशूद्रकजयं सर्गान्तानन्दमद्भुतम् ।
समुच्छलद्वीररसं कविरावन्तिकाह्वयः ॥१९॥

उज्जयिनी वास्तव्य आवन्तिक नामक कवि ने वीररस से ओत प्रोत शूद्रक विजय काव्य लिखा। समुद्रगुप्त के लेखानुसार यह कवि तृतीय शतक में था। अग्निमित्र शूद्रक विक्रम के ही विजयों पर यह काव्य [illegible] है ॥

द्वितीयः कालिदासः

कुमारसंभवं मेघदूतं च रघुवंशकम् ।
कृत्वा विस्तारयामास कालिदासो निजं यशः ॥२०॥

उज्जयिनीके हरिषेण कालिदास ने क्रमशः 'अस्तिकश्चिद् वाग्विशेषः. के अनुसार कुमार संभव, मेघदूत और रघुवंश काव्य लिखकर अपना यश दश दिशाओं में फैला दिया। यह कालिदास चन्द्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य का सचिव तथा सभा कवि था। कुछ विद्वान् यह कहते हैं कि इसी विक्रमादित्य ने मालव संवत् को विक्रम संवत् का रूप दिया था। परन्तु यह संभावित नहीं क्योंकि जब उन का गुप्त संवत् प्रचलित था तो वह दूसरा संवत् क्यों चलाता और कुमार गुप्त स्कन्दगुप्त द्वितीय-कुमारगुप्त बुधगुप्तादि के किसी भी शिला लेख में विक्रम संवत् का उल्लेख नहीं है। गुप्तों के ही अन्य नाम श्रीपार्वतीय तथा आन्ध्रभृत्य थे। देखिये—कलियुगरा० 'आन्ध्राणां संस्थिते राज्ये गुप्ता भोक्ष्यन्ति भूतलम्। श्रीपार्वतीयान्ध्रभृत्य नामानः चक्रवर्तिनः ॥

यह कालिदास निःसन्देह हरिषेण था इसमें प्रमाण है—सम्राट् समुद्रगुप्त लिखित—कृष्णचरित-'तुङ्गं ह्यमात्य पदमाप्त यशः प्रसिद्धं भत्या चिरं पितुरिहास्ति सुहृन्ममायम्। सन्धौच विग्रहकृतौ च महाधिकारी विज्ञः कुमार सचिवो नृपनीतिदक्षः ॥

काव्येन सोऽद्यरघुकार इति प्रसिद्धः ।
यः कालिदास इतिलब्ध महार्हनामा ॥

चत्वार्यन्यानि काव्यानि व्यदधाच्च लघुनिसः ।

प्राभावयच्च मां कर्तुं कृष्णस्य चरितं महत् ॥

हरिषेण कवि र्वाग्मी शास्त्र शस्त्र विचक्षणः ।
यशोऽलभत काव्यैः स्वैर्नानाचरित शोभनैः ।।

इस लेख से यह निर्भ्रान्त सिद्ध होता है कि रघुवंशादिकर्ता हरिषेण कालिदास सम्राट् समुद्रगुप्त का प्रीतिपात्र और चन्द्रगुप्त विक्रम का सचिव था, इसने रघुवंश कुमार-संभव मेघदूत ऋतुसंहार और कुन्तलेश्वरदौत्य काव्य लिखे थे । ई० ४०७ वि० ४६४ का समुद्रगुप्त विषयक लेख भी इसी हरिषेण कालिदास का है । यह कालिदास दीर्घ-जीवी था स्कन्द गुप्त विक्रम तक जीवित रहा था । इसने व्यञ्जनावृत्ति से इन गुप्त राजाओं का उदय और ह्रास वर्णित किया है । रघुकादिग् विजय अक्षरशः समुद्रगुप्त का विजय है । इन्दुमती के स्वयम्वर में मगधनरेश का वर्णन 'ज्योतिष्मती चन्द्रमसैव रात्रिः, स्पष्टतः चन्द्रगुप्त विक्रम का वर्णन है । कुमार सम्भव की रचना कुमार गुप्त के नाम पर है । रघु द्वारा हूणों का हराया जाना स्कन्द गुप्त परक है, स्कन्दगुप्त महान् वीर था, भिटारी के लेख में लिखा है—'हूणैर्यस्य समागतस्य समरे दोर्भ्यां-धरा कम्पिता । अर्थात्-हूणों से लड़ते समय जिसके बाहुवल से पृथ्वी काम्प गई थी । पितरि दिवमुपेते विप्लुतां वंश लक्ष्मीं भुजवल विजितारिर्यः प्रतिष्ठाप्यभूयः ।। इसने पिता के मरने पर विचलित राज्य लक्ष्मी को पुनः प्रतिष्ठित किया । पुरगुप्त भी स्कन्द गुप्त का ही एक नाम था न कि किसी अन्य व्यक्ति का, इस स्कन्द गुप्त विक्रम का समय ५२५ विक्रमाब्दतक था । हरिषेण कालिदास का विवाह विक्रमादित्य की पुत्री प्रियंगुमञ्जरी (विद्योत्तमा) से हुआ था । प्रियङ्गु संभवतः चन्द्र गुप्त विक्रम की द्वितीय पुत्री रही होगी । परमार्थ ने जो वि० संवत् ६१७
में विद्यमान था । वसुवन्धु और दिङ्नाग...

माना है। दिङ्नाग ने कालिदास के ग्रन्थों की कड़ी समालोचना की थी, तभी कालिदास ने—'दिङ्नागानां पथिपरिहरन् स्थूल हस्तावलेपान्, लिखना पड़ा।

समुद्रगुप्त ४४२ विक्रमाब्द में मरा था। चन्द्रगुप्त विक्रम का समय ई० ४१३ वि० ४७० तक था। कुमार गुप्त और स्कन्द गुप्त का समय ५२५ तक था, स्कन्द गुप्त के बाद प्रकाशादित्य का पुत्र नरसिंह गुप्त वालादित्य राजा हुआ, ऐसा राजतङ्गिणी और कलियुग राज वृत्तान्त में लिखा है यथा—

'स्कन्दगुप्तोऽपिनृपतिः साक्षात्स्कन्द इवापरः ॥
शासिष्यति महींकृत्स्नांपंचविंशति वत्सरान् ॥

ततोनृसिंह गुप्तश्च वालादित्य इतिश्रुतः।
पुत्रः प्रकाशादित्यस्य हरिगुप्तस्य भूपतेः ॥

नियुक्तः स्वपितृव्येन स्कन्द गुप्ते न जीवता।
पित्रैवसाकं भविता चत्वारिंशत्समा नृपः ॥

कलियुग राज वृत्तान्त के लेखानुसार नरसिंह गुप्त वाला दित्यापर नामक कुमार गुप्त द्वितीय का राज्य ५३३ तक सिद्ध होता है. इसके बाद बुधगुप्त का राज्य हुआ देखिये—गुप्तानां समतिक्रान्ते सप्त पंचाशदुत्तरे। शते समानां पृथिवीं वुध गुप्ते प्रशासति ॥ गुप्त संवत् १५७ वि० ५३४ से बुध गुप्त और तत्पुत्र भानु गुप्त का ५९० तक था। भागवत के अनुसार 'सप्ताभीरा (शिवदत्तादि) आन्ध्रभृत्यादश गुप्तराजा) गर्दभिनः गहसेनादि (गर्दभिल्ल) ततः ॥ हमने पीछे दिखाया है कि हरिषेण

कालिदास, विक्रमादित्य का सचिव था। यह विक्रमादित्य शकारि

चन्द्रगुप्त द्वितीय था। यहां शकारि का आशय शकराज का शत्रु है। अभिनन्द ने लिखा है—'शकभूपरिपोरनन्तरं कवयः कुत्र पवित्रसंकथाः। युवराज इवायमीक्षितो नृपतिःकाव्यकला कुतूहली ॥ भट्टबाण ने भी हर्ष चरित में इसकी पुष्टि की है—'अरिपुरे परकलत्रकामुकं कामिनीवेषः चन्द्रगुप्तः शकपतिमशातयत्, यह शकपति सौराष्टराज चष्टण रुद्रसिंह था। हर्षचरित का टीकाकार लिखता है—'शकाधिपतिः चन्द्रगुप्त भ्रातृ (रामगुप्त जायां ध्रुव देवीं कामयमानः चन्द्रगुप्तेन ध्रुवदेवी वेषधारिणा व्यापादितः। चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य हिन्दुधर्म का पूर्ण पक्षपाती और संस्कृत विद्या का परम प्रेमी था। उसने अपने अन्तः पुरतक की बोलचाल की भाषा संस्कृत की थी और उसके राज्यत्व काल में राष्ट्र भाषा संस्कृत थी'' पुरुषोत्तम ने हारावलीकोश में चन्द्रगुप्त विक्रम के 'संसारावर्त, कोष का उल्लेख किया है। 'साहसाङ्क कोष' भी प्राप्त होता है वह समुद्रगुप्त का होगा क्योंकि यह उपाधि समुद्रगुप्त की ही है। देखिये—'श्रीसाहुसाङ्कः कविः' महाराज भोज ने भी इस बात का समर्थन किया है—'केन श्री साहसाङ्कस्य काले संस्कृत भाषिणः।

ऐतिहासिकों का मत है कि चन्द्र गुप्त विक्रम ने शकराज को हराकर मालव देश को हस्तगत किया था और शूद्रक तथा शालिवाहन की तरह विक्रमादित्य पदवी धारण की थी। सोमदेव ने कथा सरित्सागर में ४ विक्रमों का वर्णन किया है पाटलीपुत्र का विक्रम, और दूसरा महेन्द्रादित्य का पुत्र, यदि उसको पाटलीपुत्र का विक्रमादित्य अग्निमित्र शूद्रक विवक्षित है और महेन्द्रादित्य का पुत्र सातवाहन गोतमीपुत्र, तब तो ठीक है, परन्तु यदि चन्द्र गुप्त द्वितीय और स्कन्द गुप्त विवक्षित हैं तो सोमदेव की बड़ी भूल है ४ सौ वर्ष पूर्ववर्ती वृहत्कथा में इन दोनों का नाम [illegible] क्रमः'

यह सम्मिश्रण वृहत्कथा में नहीं हो सकता। तीसरा प्रतिष्ठानका त्रिविक्रमसेन तो गोतमीपुत्र था ही, चौथा अप्रसिद्ध है। इस कालिदास ने अश्वघोष के कुछ पद्यों का अनुकरण किया है यथा—'नवंवयो दीप्तमिदं वपुश्च (बु० च०) नवंवयः कान्तमिदंवपुश्च (र० वं०) किमत्रचित्रं यदिवीतमोहः (सौ० किमत्र चित्रंयदि कामसूर्भूः (र० वं०) प्रमदाना मगतिर्न विद्यते (सौ० मनोरथानाम गतिर्नविद्यते (कु० सं०) परन्तु यह कोई दोष नहीं क्योंकि सभी कवियों का उत्तरोत्तर उपजीव्योपजीवक भाव रहा है— व्यास ने वाल्मीकि का, भास ने व्यास का, शूद्रक और कालिदास ने भास का, भारविने कालिदास का, माघ ने भारविका, भवभूति ने कालिदास का, वाणने सुबन्धु का कल्हण ने विल्हण का, जयदेव ने मुरारि का औरदण्डी ने वाण का अनुकरण किया है और ये सभी महाकवि थे ॥

सुधास्यन्दिगिरोऽभूवन् वहवः कवयोभुवि।
कालिदासस्य भाग्ये या कीर्तिः सान्यस्य नैवहि ॥२१॥

कवितामृत की वर्षा करने वाले असंख्य कवि पृथ्वी में हो गये हैं परन्तु कालिदास की 'कवि कुल गुरु, पदवी दूसरे के भाग्य में नहीं लिखी ॥

काव्यं प्रवरसेनेन सेतुवन्धमरच्यत।
सुवन्धु कविना वासवदत्ताख्यायिका कृता ॥२२॥

कुन्तल जनपदेश्वर-प्रवरसेन ने सेतुवन्ध काव्य बनाया। यह द्वितीय प्रवरसेन था। यह प्रसिद्ध है कि सेतुवन्ध की रचना में कालिदास

ने सहायता की थी। सेतुवन्ध का टीकाकार रामदास लिखता है—'चक्रे यं कालिदासः कविकुमुदविधुः सेतुनाम-प्रवन्धम्'। इस प्राकृत काव्य में महाकाव्य के सब गुण हैं। इस काव्य में १५ आश्वास हैं। इसकी प्राकृत अतीव प्रकृष्ट है दण्डी ने काव्यादर्श में लिखा है—

'महाराष्ट्रा श्रयां भाषां प्रकृष्टं प्राकृतं विदुः।
सागरः सूक्ति रत्नानां सेतुवन्धादियन्मयम् ॥

वाण ने भी इस काव्य की प्रशंसा की है।

'कीर्तिः प्रवरसेनस्य प्रयाता कुमुदोज्वला।
सागरस्य परं पारं कपिसेनेव सेतुना ॥

यह प्रवरसेन वाकाटक वंश का राजा था। चन्द्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य की पुत्री प्रभावती गुप्ता इसकी माता थी। अतः विक्रमीय पंचम शतकोत्तरार्ध में इस महाकाव्य की रचना हुई होगी। कुछ ऐतिहासिक, इस प्रभावती गुप्ता को श्रीधरसेन-यशोधर्म के पुत्र शीलादित्या पर नामक देवगुप्त की पुत्री मानते हैं। रुद्रसेन द्वितीय के रिद्धपर ताम्रपत्र में इस प्रभावती गुप्ता को चन्द्रगुप्त द्वितीय की कन्या लिखा है। भोज के शृङ्गार प्रकाश में चन्द्रगुप्त विक्रम और कालिदास का एक वार्तालाप उल्लिखित है। विक्रमादित्य पूछता है—'किं कुन्तलेश्वरः करोति। इस पर कालिदास कहता है—'पिवति मधु सुगन्धी न्याननानि प्रियाणां त्वयिविनिहितभारः कुन्तलानामधीशः ॥ चन्द्रगुप्त विक्रम सभारत्न वररुचि के भगिनीपुत्र महाकवि सुवन्धु ने गद्य काव्य जननी वासवदत्ता बनाई। सुवन्धु वाण से पहले हो चुका था, क्योंकि वाण ने लिखा है 'कवी नामगलद्दर्पोनूनं वासवदत्तया। वाण के ६७७ वि० में निर्मित

हर्षचरित में भी वासवदत्ता का उल्लेख है सुबन्धु अपने सुन्दर ग्रन्थ रचने पर भी दुःखित है, उसको इस बात का महान् शोक है कि संसार से विक्रमादित्य चला गया और काव्यों का रस भी। यथा—

'सारसवत्ता विहता नवका विलसन्ति चरति नो कंकः।
सरसीव कीर्ति शेषं गतवति भुवि विक्रमादित्ये॥

सुवन्धु का विक्रमादित्य के प्रति शोक प्रकटित करना विक्रम की सहृदयता सिद्ध करता है। यह विक्रम चन्द्रगुप्त द्वितीय विवक्षित रहा होगा। जैसे हम लोग भोज का स्मरण करते हैं, सुवन्धु की वासवदत्ता गद्य काव्य का प्रथम एवं उत्कृष्ट निदर्शन है सुबन्धु का श्लेष देखिये—

'विषधरतोऽप्यति विषमः खल इति न मृषा वदन्ति विद्वांसः।
यदयं नकुल द्वेषी न कुल द्वेषी पुनः पिशुनः॥

अर्थात्—विषधर=सर्प केवल नकुल द्वेषी होता है न कि कुलद्वेषी, परन्तु खल अपने कुल से भी विरोध रखता है। सुवन्धु ने भर्तृहरि के 'गुरुणा स्तनभारेण' पद्य का हूबहू अनुकरण वासवदत्ता में किया है, भर्तृहरि का निश्चित समय ५५० विक्रमाब्द तक है अतः सुवन्धु का समय ५५० से पहले का और ६७७ से आगे का नहीं हो सकता। सुवन्धु विक्रम सभारत्न वररुचि का भगिनीपुत्र था, इसने षष्ठ शतक के बौद्ध पं० धर्मकीर्ति के ग्रन्थ का और इसी समय के नैयायिक उद्योतकर का उल्लेख किया है॥

सुवन्धुः कविलोकस्य वन्धुरेव न शंसयः।
यत् श्लेषोक्तिमयं गद्यकाव्य-मार्गमदर्शयत्॥२३॥

महाकवि सुवन्धु अवश्यमेव कविजनों का वन्धु था। जिसने गद्य

श्रेष्ठानुप्रासयमकै रोतप्रोतं महाद्भुतम् ।
काव्यं कुमारदासोहि जानकी हरणं व्यधात् ॥२४॥

कवि कुमार दास ने श्लेष और यमकालंकारों से ओत प्रोत जानकी हरण काव्य लिखा। जानकी हरण में २० सर्ग हैं। काव्य के नाम से तो केवल जानकी हरण ही इसका विषय ज्ञात होता है, परन्तु राम कथा इसमें पूर्ण आ गई है। राजशेखर ने इसकी प्रशंसा में लिखा है—'जानकी हरणं कर्तुं रघुवंशेस्थिते सति। कविः कुमारदासश्च रावणश्च यदि क्षमः॥ कुमारदास, अवश्यमेव सिंघल (लङ्का का) राजा कुमार धातुसेन था, इसका समय महावंश ग्रन्थ के अनुसार ५२४ विक्रम संवत् है। यह मोद्गलायन उपनामक कुमारमणि राजा का पुत्र था। हरिषेण कालिदास इसके बुलाने पर सिंहल गया था किसी सुन्दरी पर मुग्ध होकर वहीं मारा गया॥

विष्णुवर्धनभूपस्य सभायां स्थितिकारिणा।
कविभारविणा कारिश्रीकिरातार्जुनीयकम् ॥२५॥

महाकवि भारवि अवन्ति सुन्दरी कथासार के अनुसार चालुक्य पुल केशी द्वितीय के भाई विष्णुवर्धन का सभा कवि था। विष्णुवर्धन का राज्यत्व काल सौराष्ट्र में ई० ६१५ वि० ६७२ के आस पास है। भारवि का भी समय यही हैं।

'सविजयतां रविकीर्तिः, कविताश्रित कालिदास-भारविकीर्तिः' इस एहोल के शिला लेख ५५६ शकाब्द ६९१ विक्रमाब्द में कालिदास के साथ भारवि का नामोल्लेख हुआ है। अतः इस समय से कुछ वर्ष

पूर्वं भारवि अवश्य विद्यमान रहा होगा। अधिक संभव यह हैं कि भारवि ६७२ के आसपास ही था, अन्यथा अन्य कवियों के साथ वाणभट्ट इसकी प्रशंसा भी अवश्य करता समकालिक होने से नहीं की होगी। किरातार्जुनीय में कालिदास के समान प्रसादगुण शालिनी कविता न होने पर भी महाकाव्यत्व इसमें सर्वोपरि है ॥

कालिदासादि काव्येषु शतेषु खलुसत्स्वपि।
भारवेरर्थगाम्भीर्यात्काव्यं काव्यशिरोमणि ॥२६॥

कालिदासादि के सैंकड़ों काव्य रहने पर भी अर्थगाम्भीर्य में महा कवि भारवि का काव्य अपना विशिष्ट स्थान रखता है।

महाकवि माघने-भारविका सब बातों में अनुकरण किया है भारवि के पद्य ७५० विक्रम की काशिका में और दुर्गवृत्ति में उद्धृत हुए हैं। अतः भारवि का समय पूर्वोक्त ठीक है। किरातार्जुनीय में अट्ठारहसर्ग हैं। इसकी कथा महाभारत से ली गई है, भारवि की कविता कैसी है देखिये 'स्फुटता न पदैरपाकृता नच न स्वीकृतमर्थगौरवम्। रचितापृथगर्थतागिरां नचसामर्थ्यमपोहितंक्वचित् ॥ विविक्तवर्णाभरणा सुखश्रुतिः, प्रसादयन्ती हृदयान्यपिद्विषाम्। प्रवर्ततेनाकृत पुण्यकर्मणां प्रसन्न गम्भीर पदासरस्वती ॥ भारवि राजनीति का भी धुरन्धर विद्वान् था, उसका काव्य राजनीति के गूढ तत्त्वो से ओतप्रोत है। देखिये द्वितीय सर्ग में भीमसेन और युधिष्ठिर का सम्वाद, यही नहीं व्यावहारिक ज्ञान की भी चरम सीमा इसमें प्रदर्शित की है।

राज्ञः श्रीधरसेनस्य वलभ्याश्च प्रशंसकः।
भर्तृहरिर्महाविद्वान् भट्टिकाव्यं प्रणीतवान् ॥२७॥

महाकवि भट्टि (भर्तृहरि) स्वामी ने भट्टि काव्य लिखा इस।

महाकाव्य में २० सर्ग हैं। व्याकरण ज्ञानार्थियों के लिये यह महाकाव्य अत्यन्त उपयोगी है। ग्रन्थकार ने लिखा है—

'काव्यमिदंविहितं मया वलभ्यां श्रीधरसेन नरेन्द्र पालितायाम्।
कीर्तिरतो भवतान्नृपस्य तस्य क्षेमकर: क्षितिपो यत: प्रजानाम्॥

अन्त में—'इति वलभी वास्तव्यस्य श्री स्वामिसूनो र्भट्टिकवे र्महा वैया करणस्य, लिखा प्राप्त होता है। अब यहां यह विचारणीय है कि यह श्री स्वामी कौन है। लघुत्रिमुनि कल्पतरु में भट्टि श्रीधर स्वामी कापुत्र लिखा है अर्थात् श्रीधरसेन का यहां सेन का संस्कृत रूप स्वामी रक्खा है यह श्रीधरसेन, गुहसेन गन्धर्वसेन का पुत्र विष्णुवर्धन यशोधर्म विक्रम था देखिये ज्योतिर्विदाभरण, 'सूर्यवंशेसमुत्पन्नो विक्रमादित्य भूपति: गन्धर्वसेनतनय:' (भविष्य) भट्टि के प्राचीन टीकाकार भरतमल्लिक ने और श्वेतवनवासी ने इस भट्टि कवि को भर्तृहरि लिखा है, यह सोलह आने सत्य है। परन्तु यह था द्वितीय भातृ हरि पहला भर्तृहरि वाक्य पदीयकार था जिसका निश्चित समय ५५० विक्रमाब्द तक है। ६५० के लगभग के स्कन्द स्वामी ने निरुक्त टीका में वाक्य-पदीय की कारिका उद्धृत की है और ६६६ में हरि स्वामी ने, हरिस्वामी दक्षिण देशीय चालुक्य प्रथम विक्रम (अवन्ति नरेश) का धर्माध्यक्ष था। सम्भवत: इसी विक्रम ने मालव सं० को विक्रम संवत् में परिवर्तित किया था न कि यशोधर्मन् ने॥

चीनी यात्री इत्सिङ्ग ने अपने भारत यात्रा विवरण में लिखा है कि—'एक वैय्याकरण भर्तृहरि ६५० ई० ७०७ विक्रमाब्द में मरा था, ऐसा मैंने भारतीयों से सुना, वह बौद्ध धर्म को भी मानता था, उसने सात वार संन्यास से गृह में प्रवेश किया, और वाक्य पदीय बनाया,

चीनी यात्री ने ऐसी किंवदन्ती सुनी थी। सुनाने वाले कोई ऐतिहासिक थोड़े ही थे उन्होंने दोनों भर्तृहरियों को मिला दिया। 'कहीं की ईंट कहीं का रोड़ा भानुमती ने कुनवा जोड़ा' 'सत्यमेव जयति नानृतम्' के अनुसार इत्सिङ्ग का भर्तृहरि द्वितीय भर्तृहरि था। वह महा वैय्याकरण भर्तृहरि तो था परन्तु वाक्य-पदीयकार नहीं था, सात वार गृह से संन्यास में प्रवेश भी प्रथम भर्तृहरि ने किया था जो हम पीछे दिखा चुके हैं। उसका बौद्ध होना प्रमाणित नहीं होता। क्योंकि प्रथम भर्तृहरि योगिराज था उसके लिये शिवभक्त होना आवश्यक है जैसा कि उसने परम भागवत होते हुए भी लिखा है—'तथापि भक्तिः तरुणेन्दुशेखरे। द्वितीय भर्तृहरि (भट्टि) मैत्रक (सूर्य) वंशी क्षत्रिय था तभी उसने सूर्यवंशी भगवान् राम का पवित्र चरित्र अपने काव्य में वर्णित किया। वलभी बौद्धों का भी केन्द्र था, भट्टि की कुछ आस्था बौद्ध धर्म में भी रही होगी जैसे उसके दादा गुहसेन की थी, कुछ विद्वान् भाग-वृत्तिकार भी भट्टि को ही मानते हैं वह भ्रान्ति है भागवृत्तिकार तो बौद्ध पं० विमल मति था। भागवृत्ति में भट्टि का खण्डन है, कथं—'आहध्वं-मारघूत्ताममितिभट्टिः। प्रमाद एवाय मितिभागवृत्तिः' (सिद्धान्त कौमुदी) वलभी में राज्य करने वाले चार श्रीधरसेन हुए हैं परन्तु श्रीधरसेन द्वितीय के ६६७ के एक शिलालेख में किसी भट्टि को कुछ भूमि देना लिखा है सम्भव है भट्टि संन्यासी हो गया हो इसके मठ के लिये कुछ भूमि दी हो इत्सिङ्ग का कहा हुआ ६५० ई० मृत्यु समय इसी भर्तृहरि से सङ्गति खाता है। यह भर्तृहरि द्वितीय श्रीधरसेन का छोटा पुत्र दीर्घायु रहा होगा। भट्टि के ही आधार पर भीम भट्ट का—रावणार्जुनीय काव्य बना है, यह काव्य भट्टि की अपेक्षा सरल तथा सुबोध है। क्षेमेन्द्र

ने अपने सुवृत्ततिलक में—'भट्टि भौमक काव्यादि काव्यशास्त्रं प्रचक्षते।

ऐसा लिखा है। बाण ने हर्ष चरित में अपने पूर्ववर्ती सभी कवियों का समीक्षण किया है—भारवि और भट्टि की समीक्षा सम्भवतः समकालिक होने से नहीं की ॥

नागानन्दं हर्षदेवः स्थाण्वीश्वर महीपतिः ।
रत्नावलीं च कृतवान् तथैव प्रियदर्शिकाम् ॥२८॥

भारत सम्राट् थानेश्वर नगराधीश हर्षदेव ने नागानन्द रत्नावलि और प्रियदर्शिका नाटक लिखे। हर्ष के राज्यत्वकाल में चीनी यात्री ह्यूनसांग भारत में आया था, उसने हर्ष को चक्रवर्ती राजा लिखा है। इसी हर्षवर्धनराजा ने एक कोश भी लिखा था जिसकी टीका मीमांसक शवर स्वामी ने लिखी थी।

'ब्याड़ेः शंकरचन्द्रयोर्वररुचेर्विद्यानिधेः पाणिनेः ।
सूक्ताल्लिङ्ग विधीन् विचार्य नृपतेः श्रीवर्धनस्यात्मजः ॥

काव्यव्याकरणादिशास्त्र निपुणोहर्षादिमोवर्धनः ।
लिङ्गानामनुशासनं रचितवानर्थ्यर्थसंसिद्धये ॥

'भट्टदीप्तस्वामिसूनुः शवरस्वामिपण्डितः ।
लिङ्गानुशासनं व्याख्यत् हर्षवर्धननिर्मितम् ॥

हर्ष बड़ा भारी दानी था, प्रतिवर्ष प्रयाग में जाकर माघ महीने में लक्षों का दान किया करता था ॥

कारणं हि कवित्वस्य न ब्रह्मकुल संभवः ।
[illegible]

कविता करने में केवल ब्राह्मण कुल में जन्म ही कारण नहीं है क्षत्रिय होने पर भी हर्ष और भोज आदि ने अपनी कविता से विश्व को आनन्दित किया। कुछ विद्वान् कहते हैं कि सम्राट् हर्षवर्धन कवि नहीं था, उपर्निर्दिष्ट तीनों कृतियां बाण ने बनाकर राजा के नाम से प्रख्यात की होंगी। यह कथन नितान्त भ्रान्त है चीनी यात्री इत्सिङ्ग ने स्पष्ट शब्दों में लिखा है कि 'सम्राट् हर्षवर्धन बड़ा भारी कवि था उसने नागानन्दादि तीन नाटक लिखे थे,। यही नहीं बाण भट्ट ने भी हर्षचरित में लिखा है कि—'काव्य कथा स्वपीतममृत मुद्वमन्तमिति। अस्य कवित्वस्य वाचोनपर्याप्त विषय इति। अर्थात् महाराज हर्ष की काव्य चातुरी धुरीणता अद्भुत है। हर्ष की कविता अति सरल तथा सुबोध है। कविवर सोढल ने अपनी उदयसुन्दरीकथा में श्री हर्ष को सरस्वती का हर्ष कहा है श्री हर्ष की मृत्यु ७०७ वि० में हुई॥

हर्षदेव सभारत्नं गद्यकाव्यमहाकविः।
बाणः कादम्बरीं चक्रे तथा हर्षचरित्रकम् ॥३०॥

सम्राट् हर्षवर्धन के सभारत्न महाकवि बाण ने कादम्बरी और हर्षचरित गद्य काव्य लिखे। कादम्बरी बाणभट्ट की सर्वोत्कृष्ट रचना है। यह आधी बाण ने और आधी उसके पुत्र पुलिन्द भट्ट ने बनाई थी। धनपाल की सूक्तिमुक्तावली में लिखा है—'केवलोऽपि स्मृतोबाणः करोति विमदान्कवीन्। किं पुनःक्लृप्त सन्धान पुलिन्द कृतसंनिधिः॥ कादम्बरी की प्रशंसा में यह पद्य अक्षरशः तथ्य है 'कादम्बरी रसज्ञाना माहारोऽपि नरोचते'। बाण का हर्ष चरित सर्वप्रथम ऐतिहासिक कृति है। 'बाणोवाक्प

...तिरपि सुतसियव। विह्लणः कह्लण रचित प्रसिद्धा ऐतिहासिकाः।

बाण, शाहाबाद (आरा) प्रान्तर्वति प्रीतिकूट ग्राम का निवासी था। अन्त में यह पवित्र कुरुक्षेत्रभूम्यन्तर्गत थानेश्वर नगर में रहने लगा था। थानेश्वर की हर्ष चरित में बाण ने बड़ी प्रशंसा की है। हर्ष चरित सर्वोत्कृष्ट आख्यायिका ग्रन्थ है। बाण भट्ट की शैली गद्य कवियों के लिये आदर्शभूत है। हमने साहित्य-बिन्दु में लिखा है—

'स्थाण्वीश्वरं कुरुक्षेत्रे प्रसिद्धं वर्तते पुरम् ।
सम्राट् हर्षस्ततोराज्यं चक्रे हर्ष प्रदो विदाम् ॥

लिखित्वा हर्ष-चरित नामकं काव्य मद्भुतम् ।
तत्सभायांगतोबाणः तच्चतस्मैन्यवेदयत् ॥

तत्काव्यामृत मापीय हेम्नोभारशतं नृपः ।
स्वसभायाः प्रधानत्वं बाणायकवये ददौ ॥

अलौकिकः कविर्बाणः कोऽपि कोविदसत्तमाः ।
गैर्वाणी स्त्रीव यद्वाणी सर्वस्य हरतेमनः ॥३१॥

हे कविवर्ग, महाकवि बाण, सत्य मेव अलौकिक कवि था, जिसकी मधुर वाणी (कविता) सुरसुन्दरी के समान चित्त को तत्काल हर लेती है। बाण श्लेषोक्ति में अनुपम था।

'सुबन्धुर्बाणभट्टश्च कविराज इतित्रयम् ।
श्लेषोक्ति काव्य निपुणाः चतुर्थो विद्यते नवा ॥

महाकवि बाण का समय सप्तमशतक निश्चित है। बाण का ही [illegible] मयूर कवि था। इन दोनों का किसी बात

पर संघर्ष हो गया दोनों ने परस्पर कुष्ठी होने का शाप दे डाला दोनों कुष्ठी हो गये किसी महात्मा के कहने से मयूर ने सूर्य शतक और बाण ने चण्डी शतक बनाकर अपने २ कुष्ठ रोग की निवृत्ति की थी ॥

गुर्जर प्रान्त वास्तव्यः कालभोज-सुहृत्तमः ।
शिशुपालवधं काव्यं चक्रे माघमहाकविः ॥३२॥

गुर्जर प्रान्त के भिन्नमाल-ग्राम के निवासी महाकवि माघ ने २० सर्गों का शिशुपालवध-काव्य बनाया । माघ के पिता दत्तक बड़े धनी मानी विद्वान् थे । पिता की दानशीलता का प्रभाव पुत्र पर भी पड़ा यह भी खूब दानी हुआ । माघ किसी भोज राजा का मित्र था । यह भोज था कालभोज-वापारावल जिसका समय अष्टम शतक है । गुर्जर प्रान्त इसी के राज्य में सम्मिलित था । माघ का दादा सुप्रभ देव किसी वर्म-लात राजा का मन्त्री था । सुप्रभदेव के समयकालेख ७०७ वि० का है अतः उसके पौत्र माघ का समय अष्टम शतक ठीक है, पूर्वोक्त-काल भोज वापारावल का ही मित्र माघ था यह प्रसिद्धि भी है, कन्नड़ी भाषा के कविराज ग्रन्थ में भी माघ का नाम है इस ग्रन्थ का निर्माण समय ८७१ वि० है । माघ ने महाभाष्य काशिका और न्यास का भी उल्लेख किया है न्यासकार का समय ७०० है इससे भी माघ का समय अष्टम शतक ही सिद्ध होता है । माघ ने भारवि का पर्याप्त अनुकरण किया है माघ वैष्णव विद्वान् था, तभी उसने अपने ग्रन्थ को—'लक्ष्मीपतेः कीर्तनमात्र चारु, लिखा है । भारविने आरम्भ में श्री शब्द का प्रयोग किया है और अन्त में लक्ष्मी शब्द का, इसी प्रकार माघ ने भी आद्यन्त में

उत्कृष्ट था, सब शास्त्रों के सिद्धान्तों का प्रतिपादन जैसा माघ ने किया है वैसा न भारवि ने किया है और न श्री हर्ष ने इसके काव्य के रचना की आधार शिला-श्रीमद्भागवत है, माघ ने भट्टि तथा नागा नन्द का भी परिशीलन किया था। आकाश से उतरते हुए महर्षि नारद का कितना भव्य वर्णन माघ में है इसी प्रकार भगवान् कृष्ण के पवित्र चरित्र का सजीव वर्णन है। माघ के कतिपयपद्य वामन और आनन्द वर्धन के ग्रन्थों में उद्धृत हुए हैं॥

कालिदासादि काव्येषु शतेषु खलु सत्स्वपि।
उपमादित्रयोपेतं माघकाव्यं महाद्भुतम् ॥३३॥

कालिदासादि परःशत कवियों के महनीय महाकाव्य रहते हुए भी माघ कवि का यह काव्य महान् अद्भुत बना किसी ने ठीक लिखा है— 'उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थ गौरवम्। नैषधे पदलालित्यं माघे सन्ति त्रयोगुणाः॥

कान्यकुब्जमहीदेवकुलाम्भोजदिवाकरः।
भट्टनारायणश्चक्रे वेणीसंहारनाटकम् ॥३४॥

कन्नोजप्रान्तीय-भूसुरशिरोमणि भट्टनारायणने वेणीसंहार नाटक लिखा। भट्टनारायण का स्थितिसमय अष्टमशतक से आगे का नहीं हो सकता क्योंकि दण्डी की अवन्ति-सुन्दरीकथा में भट्टनारायण का नाम है। बङ्गाल के राजा—आदि सूर ने भट्टनारायण को बङ्गाल में बुलाया था आदिशूर का निश्चित समय ७२८ वि० है॥

नाटके कालिदासोवै यथा मोदयतेमनः।
तथा नारायणोप्येष मोदं वितनुतेहि नः ॥३५॥

जिस प्रकार कालिदास के नाटक सब को प्रसन्न करते हैं ठीक उसी प्रकार भट्टनारायण भी अपनी नाटक कला से सबको हर्षित करते हैं।

महेन्द्रविक्रमो मत्तविलासंकृतवान्नृपः।
कादंबरी कथासार मभिनन्दस्तथैवच ॥३६॥

६५० वि० के पल्लव-नरेश सिंहविष्णु के पुत्र महेन्द्र विक्रम ने एकांकि नाटक मत्त-विलास लिखा। और नैयायिक भट्ट जयन्त के पुत्र अभिनन्द ने कादम्बरी-कथासार काव्य लिखा। अभिनन्द का समय नवमशतक है॥

विश्वविख्यात लालित्यः कविर्दण्डीप्रणीतवान्
अवन्तिसुन्दरीगाथां तथा दशकुमारकम् ॥३७॥

महाकवि दण्डी ने अवन्ति—सुन्दरी कथा, तथा दश-कुमार चरित दो गद्य काव्य लिखे। अवन्ति सुन्दरी कथा के अनुसार वीरदत्त से दण्डीं का जन्म हुआ। वाल्यपन में ही इसके माता पिता मर गये थे। ये पल्लव राजा की सभा में उसके पुत्र के पढ़ाने के लिये रक्खे गये। इसने 'अस्तिकाचित्पुरी यस्यामष्टवर्णाह्वयानृपाः'। पद्यांश से काञ्ची का वर्णन किया है। कविराज मार्ग ग्रन्थ में काव्या दर्शकी भूयसी छाया है अतः उक्त ग्रन्थ के लेखक ८१५ ई० के अमोघ वर्ष से दण्डी पहले वर्तमान था अर्थात् अष्टम शतक काल दण्डी का ठीक प्रतीत होता है। पदलालित्य दण्डी की विशेषता है तभी कहा जाता है—'दण्डिनः पदलालित्यम्, दण्डी कालिदास भर्तृहरि और वाणभट्ट के वाद का अवश्यमेव था, क्योंकि इनके ग्रन्थों से दण्डी ने पूर्ण सहायता ली है॥

दण्डयाचार्यस्य वचनं चन्दनं मलयस्य च ।
सरसं हृदि विन्यस्य कस्य चेता न तृप्यति ।।३८।।

आचार्य दण्डी के सरस वचन को और मलयाचल के चन्दन को हृदय में लगा कर कौन व्यक्ति है जो प्रसन्न नहीं हो जाता ।।

मालतीमाधवंचक्रे महावीरचरित्रकम् ।
उत्तररामचरितं भवभूतिर्महाकविः ।।३९।।

महा कवि भवभूति ने उपर्युक्त तीन नाटक लिखे। भवभूति, विदर्भ देश के पद्मपुर का रहने वाला था। और कन्नौज के राजा यशो वर्मा का सभा पण्डित था। इसके सर्वोत्कृष्ट उत्तररामचरित का एक पद्य वामन की सूत्र वृत्ति में उद्धृत हुआ है। अतः भवभूति का समय-अष्टमशतक से आगे का नहीं हो सकता डा० भाण्डार कर का भी यही मत है। भवभूति दर्शनों का भी महान् पण्डित था इसने उम्वेक नाम से कुमारिल भट्ट के श्लोक वार्तिक पर टीका लिखी थी। चित्सुखी की टीका में उक्तं-चैतदुम्बेकेन, लिखकर उम्बेक को भवभूति कहा है। खण्डन खण्ड खाद्य के टीकाकार आनन्दपूर्ण ने भी इस बात को स्वीकृत किया है। गुणरत्न जैन पण्डित ने लिखा है।

'उम्बेकः कारिकांवेति तन्त्रंवेत्ति प्रभाकरः।

भवभूति, भट्टपाद कुमारिल का शिष्य था, भवभूति ने मालती माधव में 'यस्य ज्ञाननिधिर्गुरुः' कुमारिल भट्ट को ज्ञाननिधि लिखा है। कुमारिल थे भी वास्तव में ज्ञान निधि ही, भवभूति की कविता सर्वत्र चमत्कार पूर्ण है गीर्वाण वाणी पर भवभूतिका पूर्ण अधिकार था। आप वाग्वश्य

महाकवि हैं। इसका मालतीमाधव काल्पनिक प्रकरण है। महावीर चरित पवित्र राम कथा से अलंकृत है। उत्तर राम चरित्र में—रामायण की उत्तर कथा वर्णित है, इन तीनों में उत्तर रामचरित, नाटक कला का सर्वोंच्चनिदर्शन है। यद्यपि-भवभूतिने मालती माधव के नवमाङ्क में विक्रमोवशीय और मेघदूत का स्पष्ट अनुकरण किया है तथापि भवभूति की प्रतिभा कालिदास से न्यून नहीं थी ॥

भवभूतिकवेर्वाणी प्रमाणीक्रियते समम्
कालिदासगिरा किन्तु करुणेसापरात्परा ॥४०॥

भवभूति की कविता सर्वत्र कलिदास की समता रखती है परन्तु करुणरसाभिव्यक्ति में वह परात् पर सबसे आगे बढ़ गई है तभी यह प्रसिद्धि है 'उत्तरे रामचरिते भवभूतिर्विशिष्यते ॥ चरित्र चित्रण में भव-भूति अनुपम थे। राम कहते हैं—

'स्नेहं दयांच सौख्यंच यदिवा जानकीमपि । आराधनाय लोकस्य त्यजतो नास्तिमे व्यथा ॥

वैय्याकरणमूर्धन्यो धन्यो मुररिपुःकविः ।
येनेदं नाट्यमातेनेऽनर्घराघवनामकम् ॥४१॥

महाकवि मुरारि ने अनर्घराघव नाटक लिखा। यह नाटक सप्ताङ्क है। वीर और अद्भुतरस इसमें कूट कूट कर भरा है। जैसा कि इसमें लिखा है 'तस्मैवीराद्भुतारम्भ गम्भीरोदात्तवस्तवे । जगदानन्द कन्दाय सन्दर्भाय त्वरामहे ॥ मुरारि की कविता में प्रौढता तथा वर्णन बहुलता प्रचुर मात्रा में है। कहा जाता है— देवीवाचमुपासते तु बहवः

सारंतु सारस्वतम् । जानीते नितरा मसौ गुरुकु क्लिष्टो मुरारिः कविः ॥

'मुरारिपदचिन्तायां भवभूतेस्तु का कथा ।
भवभूतिं परित्यज्य मुरारि मुररी कुरु ॥

मुरारिका समय ८०२ वि० के आसपास है। मुरारि महावैय्या-करण और मीमांसक भी था मीमांसामें 'मुरारेः तृतियः पन्थाः प्रसिद्ध है ॥

काश्मीरिकनृपावन्तिवर्म राज्य-प्रभाकरः ।
रत्नाकरो रचितवान् हरादिविजयं महत् ॥४२॥

काश्मीरिक महाकवि रत्नाकरने हरविजय—महाकाव्य लिखा। रत्नाकर काश्मीर के राजा अवन्ति वर्मा का सभा पण्डित था, जैसा कि राजतरङ्गिणी में लिखा है—'प्रथां रत्नाकर श्चागात्साम्राज्येऽवन्तिवर्मणः, रत्ना करने अपने से पूर्ववर्ती मुरारि कवि का निर्देश किया है अतः यह मुरारि से पश्चाद्वर्ती है। रत्नाकर की प्रशंसा में राजशेखर का यह पद्य अति प्रसिद्ध है—'मास्मसन्तुहि चत्वारः प्रायोरत्नाकरा इमे। इतीव-सत्कृतो धात्रा कवी रत्नाकरोऽपरः ॥ हरविजय-काव्य में ५० सर्ग हैं यह सबसे बड़ा महाकाव्य है। हम पूर्व कह चुके हैं कि रत्ना कर अवन्ति वर्मा का सभा कवि था, अवन्ति वर्मा का राज्य समय विक्र मनव-मशतक है ॥

ध्रुवदेवीचन्द्रगुप्तं मुद्राराक्षसमप्यथ ।
विशाखदत्तः कृतवान् राजनीतिविदांवरः ॥४३॥

महाकवि विशाखदत्त ने ध्रुवदेवी चन्द्रगुप्त और मुद्राराक्षस नाटक लिखे। मुद्राराक्षस राजनीति की बेजाड़ कृति है। अभिनवगुप्त की

ध्वन्यालोक टीका में तथा भोज के सरस्वती-कण्ठाभरण में देवीचन्द्रगुप्त का नामतः उल्लेख है। मुद्राराक्षस के अनेक पद्य दशरूपकावलोक तथा भोज के सरस्वती-कण्ठाभरण में उद्धृत हुए हैं और मुद्रा राक्षस में रत्नाकर की कविता का आभास मिलता है अतः विशाखदत्त का समय नवमशतक उत्तरार्ध है। विशाखदत्त उच्चकोटि का कवि था देखिये—

'कविरमरः कविरचलः कविरभिनन्दो विशाखदत्तश्च।
अन्ये कवयः कपयः चापलमात्रं परं दधति॥

विशाखदत्त का पितामह वटेश्वरदत्त किसी राजा का सामन्त था और पिता पृथु-महाराज कहलाता था, अतः विशाखदत्त का राजनीतिज्ञ होना सुसंगत है। चरित्र चित्रण में भी विशाखदत्त अनुपम था॥

राष्ट्रकूट-नृपेन्द्रस्य तृतीयस्य महाकविः।
भट्टः त्रिविक्रमस्तेने नलचम्पूं मनोहराम्॥४४॥

कर्णाटक महाकवि त्रिविक्रम भट्ट ने मनोहर नलचम्पू काव्य लिखा। गद्य तथा पद्य मिश्रित काव्य को चम्पू कहते हैं। नलचम्पू चम्पू काव्यों का सर्वप्रथम उदाहरण है। नल-चम्पू कर्ता का आश्रय कोई इन्द्रराज तृतीय था, इसके पिता का नाम नेमादित्य था। जैसाकि एक शिलालेख में लिखा है—

'श्री त्रिविक्रम भट्टेन नेमादित्यस्य सूनुना।
कृता शस्ता प्रशस्तेय मिन्द्रराजांघ्रिसेविना॥

इसी ने नवसारी शिलालेख लिखा था, अतः त्रिविक्रम का समय ९७२ विक्रमाब्द निश्चित है॥

अर्धापि नलचम्पूर्ह्लिकं न रञ्जयतेनरम् ।
अनूरुरिवघर्मांशोरर्धेन्दुरिवधूर्जटेः ॥४५॥

अपूर्ण भी नल चम्पू अर्ध अनूरु और अर्धचन्द्र के समान सबको आह्लादित करती है ॥

प्रवीणाः काव्यमाधुर्ये बाणादिकवयोऽपि हि ।
नलचम्पूकवेः तुल्या मधुकूल्यावहा न ते ॥४६॥

बाणादि कवि भी काव्य के माधुर्योत्पादन में कम प्रवीण नहीं थे परन्तु वे त्रिविक्रम के समान माधुर्य की नदी नहीं वहा सके, प्रसिद्ध है कि—भगवती सरस्वती ने ही त्रिविक्रम में प्रवेश करके यह चम्पू बनाई थी ॥

रामायण भारतयोर्यत्र युक्तं कथाद्वयम् ।
तत्प्रणिन्ये महाकाव्यं द्विसंधानं धनञ्जयः ॥४७॥

धनञ्जय ने द्विसंधान महाकाव्य लिखा । यह काव्य रामायण और महाभारत दोनों कथाओं का साथ ही वर्णन करता है । इसमें अट्ठारह सर्ग हैं । राजशेखर ने धनञ्जय की प्रशंसा की है । यह समस्त काव्य प्रसाद गुणविशिष्ट है । इसकानिर्माणसमय नवम शतक है ॥

कुन्दमालां धीरनागः क्षेमेशः चण्डकौशिकम् ।
व्यधुस्तथा शंखधरः कवि लटकमेलकम् ॥४८॥

नवम शतकीय अयोध्या निवासी धीरनाग ने कुन्द-माला नाटक लिखा। इसमें चमत्कारपूर्ण राम कथा वर्णित है। ग्यारह वें शतक में कान्य कुब्जनरेश गोविन्द चन्द्र के सभाकवि क्षेमेश्वर ने चण्ड—कौशिक नाटक लिखा। सत्य—हरिश्चन्द्र इसी का हिन्दी रूपान्तर है। शंखधर ने लटकमेलक प्रहसन लिखा, यह बड़ा ही हास्य पूर्ण नाटक है। 'गुरोर्गिरः पंचदिनान्यधीत्य, यह पद्य इसी का है। इस कवि का समय एकादश शतक है॥

वालरामायणं वालभारतं राजशेखरः।
विद्धशालभञ्जिकां च कृतवान्कविशेखरः ॥४६॥

कवि शेखर राजशेखर ने वालरामायण वाल भारत और विद्धशाल भञ्जिकादि नाटक लिखे। राजशेखर—महाराष्ट्र देश का निवासी था परन्तु कन्नोजके राजा प्रतिहार कालभोज वापारावल के पुत्र महेन्द्रपाल तथा तत्पुत्र महीपाल का सभा कवि था। इसने वालरामायण नाटक की रचना महेन्द्रपाल की प्रार्थना से की थी। वालभारत-नाटक महेन्द्र पाल के पुत्र महीपाल की प्रार्थना से लिखा था। राजशेखर का समय ६०० विक्रमाब्द के आसन्न है। वालरामायण में रामायणी कथा विस्तार पूर्वक दी है और इसमें काव्य प्रतिभा भी चमत्कृत हुई है इसमें १० अङ्क हैं। वालभारत में महाभारत की कथा का नाटकीय रूप है। विद्धशालभंजिका चार अङ्कों में सुललित नाटिका है। इन सब नाटकों में शार्दूल विक्रीड़ित छन्द का प्रचुर प्रयोग है तभी लिखा गया है—'शार्दूल क्रीड़ितै रेवप्रख्यातो राजशेखरः। राजशेखर ने अपने संवन्ध में लिखा है—

'वभूव वल्मीक भवः कविः पुरा, ततः प्रपेदे भुविभर्तृ मेण्ठताम्।
स्थितः पुनर्योभवभूतिरेखया स वर्तते सम्प्रति राजशेखरः ।।

पद्मगुप्तः परिमलः साहसाङ्क चरित्रकम् ।
व्यधाद् भोजो महाराजः चम्पूरामायणं तथा ।।५०।।

पद्मगुप्त परिमल ने नव साहसाङ्क चरित काव्य लिखा। इस महा काव्य में १८ सर्ग हैं। वैदर्भी रीति का यह सर्वोत्कृष्ट काव्य है। पद्म गुप्त ने इसमें अपनी अनुपम प्रतिभा दिखाई है। पद्म गुप्तपरिमल का समय एकादश शतक का मध्य भाग निश्चित है।।

भ्रम्यते यत्र तत्रैव तावत्सहृदयालिभिः ।
पद्मगुप्तः परिमलोयावत्खलु न लभ्यते ।।५१।।

धारानरेश परमारवंशीय कविकल्पतरु महाराज भोज ने चम्पू रामायण लिखा। महाराजभोज का निश्चित समय उसके दान पत्र के अनुसार १०८२ वि० है।।

योगज्ञो योगिभिर्भोजः शाद्बिकैरथ शाब्दिकः ।
वैद्यैर्वैद्यः सभामध्ये कविभिर्दृष्टशोकविः ।।५२।।

एक ही भोज सभा में योगियों ने योगी वैयाकरणों ने वैयाकरण,

दशावतार चरितं क्षेमेन्द्रकविरातनोत् ।
कथासरित्सागरंच सोमदेवो महाकविः ॥५३॥

महाकवि क्षेमेन्द्र ने दशावतार चरित काव्य लिखा। इसमें क्षेमेन्द्र ने भगवान् के दश अवतारों का पवित्र चरित्र वर्णित किया है। क्षेमेन्द्र ने जगत् का क्षेम करने के लिये रामायण मञ्जरी महाभारत मञ्जरी और वृहत्कथा मञ्जरी लिखकर प्राचीन कथाओं का भण्डार खोल दिया है। क्षेमेन्द्र अभिनव गुप्त पादाचार्य का साहित्य शास्त्रीय शिष्य था। यह महाशैव विद्वानों की शिष्यता में रहता हुआ भी भागवत था और कश्मीर निवासी था। कश्मीर के राजा अनन्त तथा तत्पुत्र कलश के राज्यत्व काल में क्षेमेन्द्र ने ये सब ग्रन्थ बनाये। दशावतार-चरित का रचना काल उसने ११२३ विक्रमाब्द लिखा है। इसी अनन्त महाराज की धर्मपत्नी महारानी सूर्यवती के मनोविनोद के लिये सोमदेव कवि ने कथा सरित्सागर लिखा। यह वृहत्कथा के आधार पर लिखा गया है।

सोमदेव का रचना सौन्दर्य तथा कविता-माधुर्य अनुपम है, सब बातों में वह क्षेमेन्द्र से बहुत आगे बढ़ गया है। मुख्य कथा को परिपुष्ट करने के लिये सोमदेव ने अनेक अवान्तर कथानक भी जोड़ दिये हैं। सोमदेव भी काश्मीरिक महाकवि था इस का समय ११२० विक्रमाब्द है॥

विह्लणः कृतवान् काव्यं विक्रमांकचरित्रकम् ।
कह्लणश्चेतिहासज्ञः तथा राजतरङ्गिणीम् ॥५४॥

भारत के प्रसिद्ध नगरों काशी प्रयाग मथुरा आदि में भ्रमण करता हुआ कल्याण नरेश चालुक्य वंशीय विक्रमादित्य षष्ठ के दर्बार में गए, राजा ने विह्लण का महान् सत्कार किया कवि ने राजा से कहा कि मैं विद्वद्गुण ग्राही भोज राजा के दर्शनार्थ धारा में गया था, परन्तु उनका स्वर्गवास हो गया यह सुनकर विक्रम ने बड़ा दुःख माना और कहा कि आप मेरे दरवार में रहें। विह्लण वहीं रहने लगा राजा की गुण ग्राहिता पर प्रसन्न होकर विह्लण ने विक्रमाङ्कदेवचरित लिखा। इस १७ सर्गों के महा काव्य में माधुर्य तथा प्रसाद गुण का पूर्णतया निवेश है। यह ऐतिहासिक महाकाव्य है। इसका निर्माण समय विक्रमीय द्वादश शतक है, विह्लण कश्मीर के श्री नगर समीपवर्ति खोन पुर ग्राम का निवासी था। विह्लण का एक नाम चोर भी था इस सम्बन्ध में हमारा एक पद्य है—'महाकवि विह्लणोहि चोर नाम्ना प्रसिध्यति। यत्तस्य कविता देवी कविचित्तमचूचुरत्॥ विह्लण ने काश्मीर की प्रशंसा में लिखा है—'सहोदराः कुंकुम केसराणां भवन्ति नूनं कविताविलासाः। स शारदा देशमपास्य तेषां मया न दृष्टः क्वचन प्ररोहः॥ यह केवल गर्वोक्ति है महाकवि सभी देशों में उत्पन्न हुए हैं। कल्हण ने कश्मीर का महनीय इतिहास राजतरङ्गिणी लिखा। कल्हण भी काश्मीर का ही रहने वाला था। राजतरङ्गिणी का निर्माण काल १२०७ विक्रमाब्द है। कल्हण, विह्लण के समान स्वदेश पक्षपाती नहीं था। काश्मीरिक होने पर भी कल्हण ने काश्मीर देशवासियों की भीरुता मिथ्या भाषण, परस्पर कलह आदि दुर्गुणों के दिखाने में त्रुटि नहीं रक्खी। वह लिखता है—

'श्लाध्यः स एव गुणवान् रागद्वेष वहिष्कृता।
भूतार्थकथने यस्य स्थेयस्येव सरस्वती॥

कोऽन्यः कालमतिक्रान्तं नेतुं प्रत्यक्षतांक्षमः ।
कविप्रजापतिंत्यक्त्वा रम्य निर्माण शालिनम् ॥

श्रीहर्षः काव्यमकरोत् नैषधं विद्वदौषधम् ।
कृष्णानन्दः सहृदयानन्द काव्यम था द्भु तम् ॥५ ॥

काल्पनिक महाकवि श्री हर्ष ने नैषध चरित महाकाव्य बनाया । इस महाकाव्य में २२ सर्ग हैं । श्रीहर्ष का जन्म काशी में हुआ था । और काशी तथा कन्नौज के राजा विजय चन्द्र का यह सभा कवि था, इसके पिता भी विजयचन्द्र के ही सभासद् पंडित थे, इसका मिथिला के प्रसिद्ध नैयायिक उदयनाचार्य के साथ शास्त्रार्थ हुआ उसमें हर्ष के पिता श्री हीर हारगये मरते समय अपने पुत्र से कहा कि बेटा तुम अच्छी तरह पढ़कर उदयनाचार्य को पराजित करना, श्री हर्ष ने वैसा ही किया । परन्तु यह हुआ चिन्तामणि, मन्त्र सिद्ध करने से ये सब बातें—चाण्डूपण्डित ने अपनी नैषध टीका के आरम्भ में दी हैं, यह भी प्रसिद्धि है कि श्री हर्ष काव्य प्रकाशकार मम्मट भट्ट का भानजा था । श्रीहर्ष उदयनाचार्य को पराजित करने के अनन्तर ही विजयचन्द्र की सभा का पण्डित बन गया । विजय चन्द्र का राज्य समय ११०० वि० तक था । श्री हर्ष का भी समथ यही है श्रीहर्ष ने अपने स्वामी विजय चन्द्र की प्रशंसा में 'विजय प्रशस्ति लिखी थी । श्री हर्ष महाकवि तथा महापण्डित था । इसके काव्य के सम्बन्ध में प्रसिद्धि है—'उदितेनैषधे काव्ये क्वमाघः क्वचभा रविः ॥

अनुप्रास विशिष्टेन कवित्वेन सुचारुणा ।
श्रीहर्षः कस्य हर्षस्य कारणं नभवेत्कवेः ॥५४॥

श्री हर्ष की [illegible]

में श्री हर्ष ने अनुप्रास प्रयोग की चरम सीमा कर दिखायी है ॥

श्रीकण्ठ चरितं मङ्खः काश्मीरिककविर्व्यधात् ।
कृष्णः प्रवोधचन्द्राख्यं नाटकं मोहकाटकम् ॥५५॥

कविवर मंख ने श्री कण्ठचरित महाकाव्य लिखा । इस काव्य में भगवान् शंकर का वर्णन है । प्रसिद्ध अलंकार—सर्वस्वकार रुय्यक इसका साहित्य गुरु था । ये दोनों गुरु शिष्य काश्मीर नरेश जयसिंह के सभा कवि थे। जयसिंह का समय १२०० वि० तक निश्चित है । श्री कण्ठ चरित में २२ सर्ग हैं । इसकी कविता, प्रसाद से ओतप्रोत है । कविवर कृष्ण ने प्रवोध-चन्द्रोदय नाटक लिखा । कृष्ण मिश्र, चन्देल राजा कीर्तिवर्मा का समकालीन था । जिसका शिलालेख १२५६ सं० का उपलब्ध है सर्वाङ्गपूर्ण इस नाटक के आधार पर आजतक अनेक नाटक लिखे गये हैं । जैसे १४ के वेदान्तदेशिक वेङ्कटनाथ का संकल्प सूर्योदय, १२ के यशःपाल का मोहराज पराजय, १७०० के कविकर्णपूर का 'चैतन्यचन्द्रोदय, १८०० के आनन्दराय मखी का विद्यापरिणय आदि । कृष्णमिश्र के सम्बन्ध में कुछ कहना सूर्य को दीपक दिखाना है—

यदि वः परमानन्दे काव्यानन्दे च वासना ।
तदाविधीयतां प्रीतिः कृष्ण-मिश्रकृतिं प्रति ॥५६॥

यदि आपको ब्रह्मानन्द और काव्यानन्द दोनों साथ लेने हैं तो कृष्ण मिश्र की कृति-प्रवोधचन्द्रोदय पढ़िये ॥

गीतगोविन्दमकरोज्जयदेव महाकविः ।
राघवपाण्डवीयं च कविराजो विलक्षणम् ॥५७॥

सर्ग हैं। सभी भक्ति रस से परिपूर्ण हैं। यह काव्य संस्कृत वाणी के माधुर्य की पराकाष्ठा है। अमर कवि जयदेव, वङ्गाल के राजा लक्ष्मण सेन का सभा कवि था। इसी राजा की सभा में दुर्घट—वृत्तिकार शरण देव था।

'गोवर्धनश्च शरणो जयदेव उमापतिः।
कविराजश्चरत्नानि समितौ लक्ष्मणस्य च ॥

गोवर्धन आर्यासप्तशतीकार था, शरणदेव ने अपना समय—'शाक महीपत्तिवत्सर माने एकनभोनवपंचविधाने' अर्थात् १२२९ विक्रमाब्द लिखा है। जयदेव का भी यही समय है। जयदेव की स्त्री का नाम रोहिणी और निवासस्थान का नाम तिन्दु विल्व था। लिखा भी है— 'तिन्दुविल्वसमुद्र संभव रोहिणी रमणेन, महाप्रभुचैतन्य इस काव्य को गाते गाते वेसुध हो जाते थे। इसकी अनेक व्याख्यायें भी इसकी लोकप्रियता का निदर्शन हैं कविवर हरिहर ने लिखा है—'जयदेवकवेःश्रुत्वा गोविन्दानन्दिनीर्गिरः। वालिशाः कालिदासाय स्पृहयन्तु वयन्तु न ॥ कविराज धोयी ने राघवपाण्डवीय, अतीवविलक्षण काव्य लिखा। कविराज आसाम देश के जयन्तीपुर का निवासी था। इसका भी समय प्रायः यही है। गीतगोविन्द में ही लिखा है—'श्रुतिधरो धोयी कविक्ष्मापतिः' श्रुतिधर से तात्पर्य विख्यातका है। यह श्लेषोक्ति में अतीवनिपुण था ॥

पृथिवीराज-विजयं जयानक महाकविः।
शंकर दिग्जयंचक्रे विद्यारण्योयतीश्वरः ॥५८॥

काश्मीरिक कविजयानक ने पृथिवीराज विजय १२ [illegible] में [illegible] में लिखा

इस पर काश्मीरिक जोनराज की टीका भी है यह बड़ा ही रमणीय

ऐतिहासिक काव्य है, इसमें दिल्ली के अन्तिम हिन्दुसम्राट् पृथ्वीराज का अपूर्ण चरित्र चित्रण है। इसकी कविता पढ़िये—

'चन्द्रराजस्य तनयश्चन्द्रराज इवाभवत्।
संग्रहं यः सुवृत्तानां सुवृत्ताना मिव व्यधात्॥

यहां चन्द्रराज का तात्पर्य चन्द्रवरदायी से है जो पृथ्वीराज का परम मित्र था। चन्द्र ने पृथवीराजरासो लिखा था। विद्यारण्योप नामक माधवाचार्य ने शंकरदिग्विजय काव्य लिखा। इसकी कविता वेजोड़ है। यह महाकाव्य काव्यानन्द के साथ साथ वेदान्तानन्द भी देता है। माधवाचार्य का ही संन्यास लेने के वाद का नाम विद्यारण्य स्वामी था, इस का समय विक्रमीय चतुर्दश शतक है चतुर्वेद भाष्यकार सायण इसी का भाई था, ॥

यादवाभ्युदयंचक्रे कविर्वेदान्तदेशिकः।
प्रसन्नराघवंचाथ जयदेवोहितार्किकः ॥५९॥

कवितार्किक वेङ्कटनाथ ने यादवाभ्युदय काव्य लिखा। इस काव्य का महत्त्व इसी से प्रकटित है कि इस पर अप्पय-दीक्षित की टीका है। यह बड़ा ही दिव्य काव्य है वेङ्कट नाथ का समय १४ वां शतक है। कवितार्किक-जयदेव ने प्रसन्न राघव नाटक लिखा। जयेदेव विदर्भ देश का निवासी था इसका समय भी विक्रमीय चतुर्दश शतक ही है। जय-देव की अनुप्रास छटा इस नाटक के पद पद में विलसित है॥

जयद्रथो हरचरित-चिन्तामणिमकल्पयत्।
नलाभ्युदय सत्काव्यं तथा श्री भट्टवामनः ॥६०॥

काश्मीरिक जयद्रथ कवि ने त्रयोदश शतक में हरचरित चिन्तामणि

काव्य लिखा। इसमें भगवान् शंकर का पवित्र चरित्र वर्णित है। वामन भट्ट वाण ने आठ सर्गों में नलाभ्युदय काव्य तथा पार्वती-परिणय नाटक लिखा। भट्टवामन तैलङ्ग राजा वेमभूपाल का सभा कवि था। इसका समय पंचदश शतक है ॥

अनन्तभट्ट: कृतवान् चम्पूभारतमुत्तमम् ।
आनन्दकन्दचम्पूं श्री मित्र मिश्र स्तथैवच ॥६१

अनन्त भट्ट ने १८ स्तवको में भारत चम्पू और मित्र मिश्र ने आनन्दकन्दचम्पू लिखी। इसमें आनन्द कन्द भगवान् कृष्ण का वर्णन है। इसी मित्र मिश्र ने वीर-मित्रोदय, धर्मग्रन्थ लिखा है। यह १६ सौ के ओड़छानरेश वीरसिंह का सभासद् था ॥

जगद्धरोऽकरोत्स्तोत्रं स्तुत्यादिकुसुमाञ्जलिम् ।
सर्वेषांयेन काव्यानां माधुरी अधरीकृता ॥६२॥

काश्मीरिक महाकवि जगद्धर ने स्तुति-कुसुमाञ्जलि स्त्रोत्र काव्य लिखा। जगद्धर भगवान् शंकर का अनन्य भक्त था, इसका पिता रत्नधर भी कवि था, जगद्धर का स्थिति समय पंचदश शतक है स्तुति कुसुमाञ्जलि में सब मिलाकर १४२५ श्लोक हैं और ३८ स्तोत्र हैं ॥

अकृतामरचन्द्रोहि विस्तृतं वालभारतम् ।
श्री पाण्डव चरित्रंच सूरिर्देवप्रभाह्वयः ॥६३॥

गुजरात के कवि अमर चन्द्र ने ४४ सर्गों में बाल भारत और देव

प्रभ ने १८ सर्गों में पाण्डव-चरित्र लिखा, इन दोनों का समय १५ वां शतक है ॥

युधिष्ठिर जयंचक्रे वासुदेवस्तु केरलः ।
सोमेश्वरश्च सुरथोत्सवं काव्यं महाद्भुतम् ॥६४॥

केरल देशीय वासुदेव कवि ने युधिष्ठिर विजय यमककाव्य, और सोमेश्वर ने दुर्गा—चरित्र पर सुरथोत्सव काव्य लिखा । इन दोनों का समय सप्तदश शतक है ॥

रामचन्द्रोदयं चक्रे वेङ्कटेशः कवीश्वरः ।
रघुवीर चरित्रंच मल्लिनाथो महाकविः ॥६५॥

वेङ्कटेश कवि ने रामचन्द्रोदय काव्य लिखा । और षट् काव्य टीकाकार को लाचल मल्लिनाथ ने रघुवीर-चरित्र महाकाव्य लिखा । इन का दोनों का समय सप्तदश शतक है ॥

लक्ष्मीसहस्रं विदधे चम्पूं विश्वगुणां तथा ।
वेङ्कटो नीलकण्ठश्च नीलकण्ठजयं तथा ॥६६॥

वेङ्कटाध्वरी ने पवित्र लक्ष्मी सहस्र स्त्रोत्र तथा विश्वगुणादर्श चम्पू लिखी । यह कवि अप्पदीक्षित का पौत्र रघुनाथ दीक्षित का पुत्र शिक्काञ्चीका रहने वाला था, इसके दोनों ग्रन्थ प्रसाद गुण पूर्ण हैं । नीलकण्ठाध्वरी अप्पदीक्षित के भाई अच्चादीक्षित का पौत्र था । इसने नीलकण्ठविजय गङ्गावतरण और शिवलीलार्णव काव्य लिखे इन दोनों का समय १६८४ वि० है ॥

श्री शिवराजविजयमम्बिकादत्तपण्डितः ।
अलिविलासि संलापं शास्त्रीगङ्गाधरोऽकरोत् ॥६७॥

महोपदेशक साहित्याचार्य अम्बिकादत्त व्यास ने शिवराजविजय गद्यकाव्य लिखा। शिवाजी का निधन १७३७ वि० में हुआ था। इसी का पवित्र चरित्र इस गद्य काव्य में वर्णित है यह काव्य प्रसाद गुण विशिष्ट है। मूल शंकर याज्ञिक ने भी छत्रपति-साम्राज्य नाटक लिखा था। अम्बिकादत्त व्यास का निधन १९५२ वि० में काशी में हुआ था। महामहोपाध्याय गङ्गाधर शास्त्री ने अलिविलासिसंलाप खण्ड काव्य लिखा। शास्त्री जी काशी के क्विंस कालेज में साहित्य और दर्शन के प्राध्यापक थे। यह दार्शनिक काव्य १९६४ वि० में लिखा गया था शास्त्री जी अपने समय के दाक्षिणात्य विद्वानों में शिरोमणि थे॥

बाणदण्डि सुबंधूनां काणत्वान्मास्मभूत्त्रयम् ।
इतिज्ञात्वाम्बिकादत्तश्चतुर्थो विधिनाकृतः ॥६८॥

सनातन धर्म विजयमखिलानन्द आतनोत् ।
वीर प्रताप विजयं मथुरादत्त दीक्षितः ॥६९॥

महोपदेशक कविरत्न अखिलानन्द ने सनातन धर्म विजय काव्य लिखा, अखिलानन्द अनूपशहर यू० पी० वास्तव्य सनाढय ब्राह्मण था। इसने वैदिकसत्यार्थ-विवेकादि अनेक ग्रन्थ लिखे थे। विक्रम सं० २०१० में इसका स्वर्गवास हुआ। सोलनराज गुरु म० म० मथुराप्रसाद-दीक्षित ने वीर प्रताप विजय नाटक लिखा, इसने भारत-विजयादि अन्य भी नाटक लिखे हैं॥

सद्यःकृतैः सुललितै र्बालगम्यैः सुभाषितैः ।
कविरत्नाखिलानन्दोऽखिलानन्द प्रदोभुवि ॥७०॥

महात्मगान्धिचरितं चारुदेवः प्रणीतवान् ।
सत्यव्रतः तस्य पुत्रो बोधिसत्त्वचरित्रकम् ॥७१॥

हमारे मित्र दिल्ली निवासी चारुदेव शास्त्री ने गान्धि चरित नामक गद्य काव्य लिखा । साहित्याचार्य ब्रह्मानन्द शुक्ल का गान्धी-शतक भी द्रष्टव्य है । श्री चारुदेव ने शब्दापशब्द-विवेकादि अन्य ग्रन्थ भी लिखे हैं । इनके पुत्र डा० सत्यव्रत शास्त्री ने बोधिसत्व-चरित काव्य लिखा । सत्यव्रत शास्त्री एमए, दिल्ली विश्व विद्यालय में संस्कृत प्राध्यापक है ॥

विद्वज्जनमनोहारि मयाकारि समासतः ।
नेकी राम कृष्णटीकं दुर्गाभ्युदय नाटकम् ॥७२॥

इस दुर्गाभ्युदय को देखकर कविरत्न अखिलानन्द ने लिखकर भेजा था ।

'प्रयातेऽस्तंजगन्नाथेऽम्बिकादत्तेच पण्डिते ।
छज्जूरामेगुणग्रामे विशश्राम सरस्वती ॥

यन्मुखपद्म विनिःसृत काव्यकलापः प्रतिक्षणं लोके ।
काव्यकलारसिकानां मनांसिसद्यः प्रमोदयति ॥

हमारी संस्कृत साहित्य सेवाओं से प्रसन्न होकर—जगद्गुरु शंकरा-

चार्य [illegible] ने हमको १९७० ई० में विद्यासागर पदवी

से प्रसादित किया। २०१० में दिल्ली राज्य के तत्कालीन मुख्य मन्त्री श्री गुरुमुखनिहालसिंह ने हमको ५ हजार रुपयों की थैली भेंट की। २०१७ में विश्वविद्या—प्रतिष्ठान बम्बई ने थीसिस द्वारा हमको महा महोपाध्याय पदवी से सम्मानित किया। २०२० में हमको अभिनन्दन ग्रन्थ देते हुए – श्री जगद्गुरु शंकराचार्य कृष्णबोध, अनन्त श्री स्वामी करपात्रीजी, माधवाचार्य शास्त्री, प्रभुदत्त शास्त्री, वामदेव शास्त्री प्रभृति विद्वानों ने क्रमशः निम्न शुभ कामनाएं भेजीं 'नानावादि विचक्षणे भदलने शार्दूलविक्रीडितम्। वाचस्पत्यमुपागतं पटुतरान्ते वासिशङ्काङ्कने।

विद्यासागर तर्कमन्थनविधौलब्धोपपाधि पटुम्।
छज्जूराम—महोदयं शतसमैरायुर्भिरायोजये॥

'निष्णातंविविधागमेषु वहुधाप्रस्थानभिन्नेषु तं,
न्याय व्याकरणादिशास्त्रनिवहे वाक्ये च पारंगतम्।
सप्तत्याभियुतं सभाजितमनल्पैः छज्जूरामंबुधं,
आशी राशिशर्तर्हरिस्मृति मुखैर्नन्दामि शंसन्मुहुः॥

'सन्तिक्षाजड़ास्तेते पृथिव्यांसप्तसागराः।
छज्जूरामः कुरुक्षेत्रे विद्यामाध्वीक सागरः॥

न्यायव्याकृतिवद्दधाति किमयंनेत्रोपनेत्रद्वयम्,
सारल्यैकघटः सदोऽप्रतिभटः संप्राप्तविद्वत्पटः।
नित्यं संस्कृतवाक्प्रचारकरणेलग्नश्चतद्रक्षणे।
छज्जूरामपदोबुधो विजयतां दिल्ली पुरीभूषणम्॥

'धन्यं कुरुक्षेत्रमतीव पुण्यं श्री छज्जूरामसदृशस्तु महापुमांसः

काव्यलक्षणसार:—

किं नाम काव्य मित्यत्र किंचिदेवविविच्यते ।
शब्दार्थौ सहितौ काव्य मित्यभाणीत्तुभामहः ॥७३॥

इष्टार्थेन व्यवच्छिन्नां दण्डयुवाच पदावलिम् ।
काव्यस्यात्माध्वनिः काव्य मानन्दस्याहवर्धनः ॥७४॥

अदोषौ यत्र शब्दार्थौ सालंकारौगुणैर्यु तौ ।
तत्काव्यं भवतीत्याह साहित्योद्भटमम्मटः ॥७५॥

निर्दोषं गुणवत्काव्य मलंकारैरलंकृतम् ।
रसान्वितं भोजदेवो व्यलिखन्नृपतिः कविः ॥७६॥

निर्दोषां लक्षणवतीं सरीतिसगुणां तथा ।
सालंकारां च सरसां वाचं काव्यं जयोऽवदत् ॥७७॥

वाक्यं रसात्मकं काव्यं विश्वनाथ उदैरयत् ।
रसज्ञकवितुः कर्म काव्यं विद्याधरस्तथा ॥७८॥

रमणीयार्थ-प्रतिपादकं शब्दं च काव्यकम् ।
पण्डितेन्द्रो जगन्नाथो रसगङ्गाधरेऽगदत् ॥७९॥

रम्यं शब्दार्थ युगलं काव्यमस्माभिरीरितम् ।
रम्यताऽलौकिकाह्लादर्जा का तत्र मन्यताम् ॥८०॥

इति विबुधरत्नावलिनाम्निसंस्कृतेतिहासे सप्तमः अध्यायः ॥

अष्टमः अध्यायः

त्रेतायुगस्य प्रारम्भे मनोर्वैवस्वतस्य च ।
नाट्यशास्त्रं रचितवान् भरतोमुनिपुङ्गवः ॥१॥

महामुनि भरत ने वैवस्वत मनु के त्रेतायुग के आरम्भ में नाट्य शास्त्र लिखा । जैसा कि लिखा भी है—'त्रेतायुगे सम्प्रवृत्ते मनोर्वैव-स्वतस्यच । नाट्यशास्त्रंमुनिश्चक्रे चतुर्वेदाङ्ग सम्भवम् ॥ अग्निपुराण में भरत मुनि का नामोल्लेख है । अतः यह ग्रन्थ पुराणों से प्रथम बना था । पुराणों का निर्माण द्वापर में हुआ तब इसका निर्माण त्रेता में स्वतः सिद्ध है । पाणिनिने भी नट सूत्रों का उल्लेख किया है । वर्तमान काल में भरत का नाट्यशास्त्र ही उपलब्ध होता है और वही सबसे प्राचीन हैं । भरत मुनि कीं सम्मति में नाटक में रस की ही प्रधानता होती हैं । भास और कालिदास ने भरत को देवताओं का नाट्याचार्य माना है । भरत ने अपने इस ग्रन्थ में अलंकार शास्त्र का पूर्णतया विवेचन किया है ॥

वेदं तु द्विजमात्रं हि वेदाकाशमिवाङ्कुतम् ।
नाट्य वेदो विजयते सर्वेषां रञ्जयन्मनः ॥२॥

वेद को तो केवल द्विज (ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य) ही पढ सकते हैं

स्त्री शूद्रादि नहीं पढ़ सकते स्त्री शूद्रद्विजबन्धूनांत्रयी न श्रुतिगोचरा,

परन्तु नाट्य वेद से सभी आनन्दित हो सकते हैं अतः यह श्रेष्ठ है॥

वात्स्यायनापराख्येन मल्लनागेन धीमता।
कामशास्त्राह्वयं नाम काम-सूत्रं विनिर्मितम् ॥३॥

वात्स्यायन गोत्रीय आचार्य मल्ल नागने काम सूत्र लिखा। वात्स्यायन और मल्लनागनामचाणक्य के भी हैं परन्तु यह वात्स्यायन मल्लनाग चाणक्य नहीं हो सकता क्योंकि इसके ग्रन्थ में—'इत्यर्थचिन्तकाः' लिख कर अर्थशास्त्र निर्माता चाणक्य का स्मरण किया गया हैं। 'कर्तर्या कुन्तलः सातकर्णिः सातवाहनो महादेवीं मलयवतीं जघान' लिखकर—विक्रम सं १३५ के सातवाहन का स्मरण किया है तत्कालिक पाटली पुत्र के (मूलदेव) और गोनर्दीय (पतञ्जलि) का भी नाम स्मरण किया है। कोश में लिखा है—गोनर्दीयः पतञ्जलिः, पतञ्जलिका निश्चित समय विक्रम से ५० वर्ष पूर्व है। अतः काम सूत्रों का निर्माता चाणक्य-वात्स्यायन नहीं हो सकता, षष्ठशतक के सुवन्धु ने वासवदत्ता में मल्लनाग और कामसूत्र का नामोल्लेख किया है अतः षष्ठशती से पूर्व १३५ वि० के वाद कोई काल मल्लनाग का हो सकता है। संभवतः यह आचार्य नागवंशी रहा होगा, नागवंश का राज्य विक्रम के तृतीय शतक में था। विष्णुपुराण में नो नागों का वर्णन है समुद्र गुप्त के दिग्-विजय लेख में भी किसी नागराजा का पराजय वर्णित है। उसी का पूर्वज यह रहा होगा। हर्ष चरित में भी एक नाग राजा का वर्णन है॥

कामानन्दो महानेव ब्रह्मानन्दात्प्रतीयते ।
सुखये को ब्रह्मवित किन्तु सुखिनौ कामिनावुभौ ॥४॥

काम विषयक आनन्द ब्रह्मानन्द से भी बढ़ कर है, क्योंकि ब्रह्मानन्द वित् केवल एक ही सुखी होता हैं, और कामी दो स्त्री पुरुष सुखी होते हैं 'सति विशेषे सामान्यंनाद्रियते' ॥

काव्यालंकार मकरोद् ग्रन्थ माचार्यभामहः ।
काव्यादर्शो विरचितः कविना दण्डिनाद्भुतः ॥५॥

आचार्य भामहने काव्यालंकार ग्रन्थ लिखा । भामह पंचमशतक के वसुवन्धु और दिङ् नाग का पश्चाद्वर्ती था, क्योंकि उसने अपने ग्रन्थ में दोनों के प्रत्यक्ष लक्षण लिखे हैं । काव्यालंकार अलंकार—शास्त्र का सर्वप्रथम एवं मान्य ग्रन्थ है । कहते हैं इसके पितारक्रिलगोमिन् और चन्द्रगोमिन् भाई थे । वररुचि के प्राकृत प्रकाश की टीका भी भामह ने लिखी है । वाणभट्ट भट्टि और दण्डी ने इसके ग्रन्थ से पर्याप्त सहायता ली है । भट्टि ने तो सभी अलंकार भामह से लिये है । भामह ने कालिदास के मेघदूत के एक पद्यका हूबहू अनुकरण किया है अतः भामहका समय षष्ठशतक उत्तरार्ध है । इसके काव्यालंकार में ६ परिछेद हैं और चार सौ श्लोक हैं । महाकवि दण्डी ने काव्यादर्श ग्रन्थ लिखा, दण्डी ने भामह के ग्रन्थ का अनेक स्थलों में खण्डन किया है । अतः दण्डी भामह के बाद के है । यह ग्रन्थ साहित्य शास्त्र का सचमुच ही आदर्श है । इसमें चारपरिच्छेद और ७६० श्लोक हैं ॥

आलंकारिक इत्याख्या भामहाद्भामविदत ।
तस्या द्विवचनंजातं जाते दण्डिनि पण्डिते ॥६॥

आलंकारिक यह आख्या भामह से चली, और दूसरी आलंकारिक

दण्डी ही माना गया ।।

विद्वान् भट्टोद्भट श्चक्रे काव्यालंकार संग्रहम्
काव्यालंकार सूत्राणि वामनेन कृतानि वै ।।७।।

भट्टोद्भट ने काव्यालंकार संग्रहग्रन्थ बनाया। राजतरङ्गिणी के अनुसार भट्टोद्भट कश्मीर के राजा जयापीड़ का सभापति था। 'विद्वान् दीनारलक्षेण प्रत्यहंकृतबेतनः। भट्टोऽभूदुद्भटस्तस्यभूमिभर्तुः सभापतिः, बभूवुर्भूरिकवयो वामनाद्याश्च मन्त्रिणः ।।

वामनाचार्य ने स्वोपज्ञवृत्ति—सहित काव्यालंकार सूत्र बनाये। ये दोनों काश्मीरिक विद्वान् थे। इन दोनों का समय विक्रमीय अष्टमशतक है। वामन रीति सम्प्रदाय का आचार्य है तो उद्भट अलंकार सम्प्रदायका है। काव्य में अलंकारों का प्राधान्य उद्भट से ही चला और तभी से इस शास्त्र ने अलंकार शास्त्र नाम प्राप्त किया ।।

शतानन्दापराख्येन रुद्रटेन मनीषिणा ।
काव्यालंकार आतेने भट्ट वामक सूनुना ।।८।।

भट्टवामक के पुत्र शतनन्दा पर नामक रुद्रट ने काव्यालंकार ग्रन्थ लिखा। इस ग्रन्थ में अलंकार शास्त्र के सभी सिद्धान्तों का विस्तारपूर्वक विवेचन है। राजशेखर ने काकुवक्रोक्ति पर इसका नामोल्लेख किया है। यह भी कश्मीर का ही निवासी था। इस ग्रन्थ में ७३४ पद्य हैं। और उदाहरण सभी रुद्रट के अपने हैं। रुद्रट का स्थिति समय नवम शतक है।

ध्वन्यालोकं रचितवान् श्रीमदानन्दवर्धनः ।
चक्रेऽभिनवगुप्तोहि ध्वन्यालोकस्यलोचनम् ॥९॥

विद्वद्वर आनन्दवर्धन ने ध्वनिमार्ग का सर्व प्रथम और प्रामाणिक ग्रन्थ ध्वन्यालोक लिखा ।

अलंकार शास्त्र में इस ग्रन्थ का वही स्थान है जो वेदान्तमें ब्रह्मसूत्रों के शांकर भाष्य का, आनन्द ने साहित्य शास्त्र के मार्ग को परिष्कृत किया है । आनन्दवर्धन काश्मीरिक विद्वान् था, और कश्मीर के जयापीड़ राजा ८५० वि० का सभा कवि था । इसकी प्रशंसा में राजशेखर ने लिखा है—

'ध्वनिनातिगभीरेण काव्यतत्त्वनिवेशिना ।
आनन्दवर्धनः कस्य नासीदानन्दवर्धनः ॥

ध्वन्यालोक की लोचन टीका अभिनव—गुप्ताचार्य ने लिखी । यह भी महाविद्वान् कश्मीर का ही रहने वाला था, इसने नाट्यशास्त्र की टीका 'अभिनव भारती' भी लिखी है इसके और भी तन्त्रालोक आदि मौलिक ग्रन्थ हैं, सम्भवतः काव्य—प्रकाशकार मम्मट का यह गुरु रहा होगा क्षेमेन्द्र का तो यह गुरु था ही इसका समय ११ वां शतक है ॥

वक्रोक्तिजीवितं चक्रे कुन्तको नाम पण्डितः ।
तथा व्यक्तिविवेकं श्रीमहिमा महिमान्वितः ॥१०॥

काश्मीरिक आचार्य कुन्तक ने वक्रोक्तिजीवित ग्रन्थ लिखा ।

इसके ग्रन्थ में राजशेखर के कुछ पद्य उद्धृत हुए हैं अतः यह काव्य

मीमांसाकार नवम शतकीय राजशेखर से बाद का है। इसके ग्रन्थ में चार उन्मेष हैं। जिनमें वक्रोक्ति के भेदों का साङ्गोपाङ्गविवेचन है इस कारण ग्रन्थकार का नाम ही वक्रोक्तिकार पड़ गया है।

'भात्यलंकार युक्तापि वक्रोक्तिरहिता न गीः।'

वक्रोक्तिकार ने वक्रोक्ति में ही ध्वनि का अन्तर्भाव किया है। महिम-भट्ट ने व्यक्ति—विवेक ग्रन्थ लिखा, यह भी कश्मीर का ही निवासी था। इसने यह ग्रन्थ लिखकर-विद्वत्ता की चरम सीमा कर दिखाई है। यह बड़ा भारी नैय्यायिक था। इसने लोचन तथा वक्रोक्ति-कार का खण्डन—'सहृदयमानिनः के चित्, 'विद्वन्मानिनः केचित्, कह कर किया है। अतः कुन्तक इससे पूर्ववर्ती है। खाद्य खण्डन में श्री हर्ष ने इसकी बड़ी प्रशंसा की है—

'दोषं व्यक्ति—विवेकेऽमुं कविलोक विलोचनै।
काव्य मीमांसिषु प्राप्त महिमा महिमादृतः॥

व्यक्ति—विवेक में ध्वन्यालोक का खण्डन है इस पर राजानक रुय्यक की टीका है महिमभट्ट का समय १०५० विक्रमाद्ब है।

दशरूपकमातेने ग्रन्थरत्नं धनञ्जयः।
धनिकोदशरूपस्यालोकं व्याख्यानकं तथा॥११॥

धनंजय ने दशरूपक और छोटे भाई धनिक ने दशरूपावलोक लिखा। दशरूपक की रचना नाट्यशास्त्र के आधार पर हुई है। धनञ्जय अपने ही कथनानुसार धारा के मुञ्ज राजा का सभापण्डित था। जैसा कि इसने लिखा है

'विष्णोः सुतेनाथधनञ्जयेन विद्वन्मनोरागनिवन्ध हेतुः ।
आविष्कृतं मुञ्जमहीश-गोष्ठी वैदग्ध्यभाजा दशरूपमेतत् ॥

महाराज मुञ्ज बड़ा ही कवि तथा रसिक था, उसके सम्बन्ध में यह प्रसिद्धि है—'गते मुञ्जे यशः पुञ्जे निराधारा सरस्वती' इसी की कृपा से परिमल तथा भोज कविराज वने थे। मुञ्ज का निश्चित राज्यत्वकाल-सुभाषितरत्नसन्दोहकार के अनुसार १०५० विक्रमाब्द है। इन दोनों भाइयों का भी स्थिति समय यही है। अवलोक में पद्म गुप्त परिमल के पद्य भी उदाहृत हैं अतः उपर्युक्त समय ठीक है ॥

भोजः सरस्वतीकण्ठाभरणंकृतवान्नृपः ।
यंकण्ठाभरणत्वेनस्वोचकारसरस्वती ॥१२॥

धारानरेश मुञ्ज के भ्रातुष्पुत्र-भोज राजा ने 'सरस्वती-कण्ठा भरण' ग्रन्थ लिखा। भोज स्वयं महापण्डित तथा पण्डितों का अभूतपूर्व आश्रयदाता था। देखिए हमारे साहित्य-विन्दु में—

'एकश्लोकस्य निर्मात्रे लक्षं मुद्राः स्म राति यः ।
कविकल्पतरुर्भोजः प्रशस्यः कस्य नास्ति सः ॥

भोज का दानपत्र १०७८ वि० का उपलब्ध है और उसके उत्तराधिकारी जयसिंह का ११०७ का शिलालेख है, जिससे यह स्पष्ट है कि ११०६ के बाद भोज का शासन नहीं था। यह कण्ठाभरण विस्तृत एवं महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। भोज का दूसरा ग्रन्थ है शृङ्गारप्रकाश। सरस्वती-कण्ठाभरण पर रत्नेश्वर की विशाल टीका है ॥

समालोचकमूर्धन्योऽकृत विद्वत् शिरोमणिः ।

काव्य-प्रकाशं साहित्य-निर्यासं भट्टमम्मटः ॥१३॥

समालोचकों में सर्वप्रथम आचार्य मम्मट ने साहित्य शास्त्र का सर्वोत्कृष्ट ग्रन्थ काव्य-प्रकाश लिखा। इसकी प्रतिष्ठा वही है जो व्याकरण में महाभाष्य की, इस ग्रन्थ में १० उल्लास हैं। यह ग्रन्थ ध्वनि-प्रस्थापन में और ध्वनि विरोधियों के खण्डन में अनुपम है। काव्य प्रकाश में भोज के दान की प्रशंसा का एक पद्य उद्धृत हुआ है— 'यद् विद्वद्भुवनेषु भोज नृपतेः तत्त्याग लीलायितम्' अतः यह ग्रन्थ भोज के बाद का है, काव्य प्रकाश की संकेत टीका का निर्माण समय १२१६ विक्रमाद्व है अतः मम्मट का समय १२१६ वि० से पूर्व एकादश शतक है। काव्य-प्रकाश पर परमानन्द चक्रवर्ती जैसे नैयायिकों की और विश्व-नाथ कविराज जैसे साहित्य शास्त्रियों की पचासों टीकाएं बन चुकी हैं तथापि इस ग्रन्थ की ग्रन्थियां अभी तक भी सुलझाना सरल कार्य नहीं है टीकाओं में वामना चार्य की टीका सर्वश्रेष्ठ है॥

साहित्य वाग् दैवतस्य मम्मटस्य कृतिर्विदाम्।
आह्लादयति चेतांसि कुमुदानीव चन्द्रिका ॥१४॥

साहित्य पुंभाववाग् देवता सम्मट की कृति काव्य-प्रकाश कुमुदों को चन्द्रिकावत् विद्वन्मनों को आह्लादित करने वाली है॥

चक्रेऽलंकार सर्वस्वं रुय्यकः कविनायकः
वाग्भटो वाग्भटालंकारंच काव्यानुशासनम् ॥१५॥

काश्मीरिक राजानक रुय्यक ने अलंकार-सर्वस्व ग्रन्थ लिखा। रुय्यक ने अपने ग्रन्थ में काव्य-प्रकाश का खण्डन किया है—और मम्मट ने रुय्यक का अतः रुय्यक मम्मट का समकालिक है, १२१६ वि० में

निर्मित काव्य-प्रकाश-टीका संकेत में रुय्यक के अलंकार सर्वस्व का भी निर्देश है अतः यह भी ग्रन्थ १२१६ वि० से पूर्व निर्मित है अर्थात् एकादश शतक में, ११५२ में श्री कण्ठ चरित बना इसका कर्ता मङ्खक रुय्यक का शिष्य था सर्वस्व पर १३ सौ के जयरथ की विमर्शिनी टीका अतीव श्रेष्ठ है। वाग्भट, दक्षिण के चालुक्य वंशीय राजा जयसिंह का अमात्य था। इसका समय १२१३ विक्रमाब्द है। इसने वाग्भटालंकार और काव्यानुशासन अलंकार के दो ग्रन्थ लिखे हैं। यह जैन कवि था। इसी समय अनेक ग्रन्थ निर्मातृ-हेमचन्द्र ने अपना 'काव्यानुशासन' लिखा है परन्तु इस ग्रन्थ में कुछ भी मौलिकता नहीं है॥

अलंकार विहीनावाग् दृश्यते विधुरेव यत्।
तदलंकारसर्वस्वं रुय्यकस्तत्कृतेऽपिपत् ॥१६॥

अलंकार रहित वाणी विधवा स्त्रीवत् दीखती है अतः रुय्यक ने उसको सब अलंकार दिये॥

एकावलीमलंकारग्रन्थं विद्याधरोऽकरोत्।
तथा प्रतापरुद्रीयं विद्यानाथः सुधीवरः ॥१७॥

१३१७ संवत् के दानपत्रानुसार विक्रम चतुर्दश शतक में उत्कल देश का राजा नरसिंह विद्यमान था। उसकी प्रशंसा में विद्याधर पण्डित ने एकावली ग्रन्थ लिखा। जैसा कि विद्याधर ने स्वयं लिखा है—

'करोमि नरसिंहस्य चाटु श्लोकानुदाहरन्"।

चल मल्लिनाथ है। जिसका निश्चित समय १६३३ वि० है।

तैलङ्ग-देशीय किद्यानाथ ने प्रतापरुद्रीय ग्रन्थ लिखा। यह ग्रन्थ काव्यप्रकाश और अलंकार सर्वस्व के आधार पर एकावली की तरह वीर रुद्र के यशो वर्णन में विद्यानाथ ने लिखा था। वीररुद्र आन्ध्रप्रदेश का राजा था। इसका समय है १३७७ विक्रमाब्द तक यही लगभग विद्यानाथ का है। प्रताप रुद्रीय का टीकाकार भल्लिनाथ का पुत्र कुमार स्वामी है॥

साहित्य-विद्यानाथेन विद्यानाथेनधीमता।
कृता प्रताप रुद्रीयकृतिः कृतिविभूषणम् ॥१८॥

पीयूषवर्ष-विवुधःजयदेवापराभिधः।
चन्द्रालोकं रचितवान् विद्वद्हृदय मोहकम् ॥१९॥

पीयूषवर्ष जयदेव ने चन्द्रालोक ग्रन्थ बनाया। इसके प्रसन्नराघव का उल्लेख १२३७ वि० में शिङ्ग भूपाल ने किया है और कदली २ पद्य साहित्य दर्पणकार ने उद्धृत किया है, १२०० वि० के गंगेशोपाध्याय की तत्त्वचिन्तामणि की टीका इसने की है अतः जयदेव का समय त्रयोदश शतक है॥

किमक्षराणां भारेण निःसारेण मनीषिणः।
स्वल्पाक्षरापि पीयूषकृतिः पीयूष-वर्षिणी ॥२०॥

अक्षरों वाली पीयूष-कविकृति, अमृत वर्षा रही है ॥

साहित्य-दर्पणं चक्रे विश्वनाथ कवीश्वरः ।
येन साहित्य सर्वज्ञो विज्ञो भवति मानवः ॥२१॥

कविराज विश्वनाथ ने सर्वाङ्गपूर्ण साहित्य-दर्पण ग्रन्थ लिखा। दर्पणकार किसी उत्कल राजा का सन्धि विग्रहीक मन्त्री था। इसके पितामह के भ्राता चण्डीदास ने काव्य प्रकाश पर अद्भुत टीका लिखी है। विश्वनाथ ने अलावुद्दीन खिलजी की जीवितावस्थाका एक पद्य दर्पण में दिया है 'सन्धौसर्वस्वहरणं विग्रहेप्राणनिग्रहः। अलावुद्दीन नृपतौ न सन्धिर्नच विग्रहः॥ अलावुद्दीन की मृत्यु १२३७ वि० में हुई थी अतः विश्वनाथ का समय १४ वां शतक है। विश्वनाथ कलिङ्गदेशीय उत्कल ब्राह्मण था। तभी अपने देश की प्रशंसा में लिखा है-'कलिङ्गः साहसिकः, इसने काव्य प्रकाश की टीका भी लिखी है और काव्य प्रकाश की ही शैली पर यह साहित्य दर्पण लिखा है, काव्य प्रकाश में नाटकों के संवन्ध में कुछ भी नहीं लिखा गया है इसने नाटकों पर पूर्ण विवेचन किया है जिसके जानने पर विद्वान् नाटककार वन सकता है। यह ग्रन्थ नितान्त उपयोगी है। साहित्य दर्पण पर १६ सौ के रामचरण तर्क वागीश की टीका है॥

काव्यप्रकाशमाश्रित्य गोविन्दो नाम ठक्कुरः ।
काव्यप्रदीपमातेने काव्योत्कर्ष विधायकम् ॥२२॥

मैथिल विद्वान् गोविन्द ठक्कुर ने काव्य प्रकाश पर स्वतन्त्र विचार पूर्ण काव्य प्रदीप लिखा। व्याकरण में सुप्रसिद्ध प्रदीप की जो ख्याति

ष्ठा है वही साहित्यशास्त्र में इस काव्य प्रकाश प्रदीप की है। इसने अपने काव्य प्रदीप में दर्पणकार विश्वनाथ का मत दिया है अतः यह दर्पणकार से पीछे का है। १६६८ विक्रम के कमलाकर ने प्रदीपकार का उल्लेख किया है अतः गोविन्द षोड़श शतक का है। इस प्रदीप पर वैद्यनाथ और नागेश भट्ट की टीकाएं हैं जिससे इसका महत्त्व वहुत वढ़ गया है। यह ग्रन्थ विद्वानों के पढ़ने योग्य है॥

कर्णपूर कविश्चक्रे स्वमलंकार-कौस्तुभम्।
दिव्यालंकार संयुक्तं दिव्योदाहरणान्वितम्॥२३॥

कविकर्णपूर ने अलंकार कौस्तुभ ग्रन्थ वनाया। कर्णपूर महाप्रभु चैतन्य का शिष्य था और वङ्गप्रदेश का रहने वाला था। इस का असली नाम परमानन्द था कर्णपूर इसकी उपाधि थी। चैतन्य-चन्द्रोदय भी इसी की कृति है, कर्णपूर का समय षोड़श शतक है॥

शौद्धोदनि प्रणीतानां सूत्राणां कवितार्किकः।
व्याख्यानं केशवः चक्रे नाम्नालंकार शेखरम्॥२४॥

केशवमिश्र ने वौद्ध शोद्धोदनि के सूत्रों का व्याख्यान अलंकार शेखर लिखा। केशवमिश्र कोटकांगडा नरेश माणिक्य चन्द्र का सभा पण्डित था। जिसका शासनकाल-विक्रमीयषोडश शतक का उत्तर भाग है। सोलह सो तेंतीस के मल्लि नाथ ने केशव के कोश को उद्धृत किया है। इसी केशव ने न्याय में भी तर्क-भाषा आदि ग्रन्थ बनाये हैं॥

अकरोच्चित्रमीमासां वृत्तिवार्तिक मप्यथ।

श्रीमान् अप्पय दीक्षित ने चित्र मीमांसा वृत्तिवार्तिक और कुवलयानन्द ये तीन ग्रन्थ बनाये। इनमें कुवलयानन्द अप्पदीक्षित ने अपने संरक्षक किसी वेङ्कटपति की आज्ञा से बनाया था। अप्पयदीक्षित ने सैकड़ों ग्रन्थ लिखे थे जैसाकि इसके भ्रातुष्पौत्र नील कण्ठ ने लिखा है—'द्वासप्तर्ति प्राप्य वयः प्रबन्धान् शतंव्यधादप्पय दीक्षितेन्द्रः'। यह दोनों मीमांसाओं का भी बड़ा विद्वान् था। भट्टोजिदीक्षित ने इससे वेदान्त शास्त्र पढ़ा था। इसका स्वर्गवास १७१५ में हुआ॥

मीमांसाद्वयविज्ञत्वे साहित्यागम-विज्ञता।
विलोकिताचेत्कस्मिंश्चित् पण्डितेह्यप्पदीक्षिते ॥२६॥

मीमांसा द्वय के प्रकाण्ड विद्वान् होते हुए साहित्य शास्त्र का भी प्रकाण्ड पाण्डित्य अप्पयदीक्षित में देखा॥

पण्डितेन्द्रोजगन्नाथ शर्मा निर्माण कौशलात्।
रसगङ्गाधरं कृत्वा रसगङ्गामवाहयत् ॥२७॥

तैलङ्गदेशीय पण्डितराज जगन्नाथ ने रसङ्गाधर लिखकर रसगङ्गा-वहादी। जगन्नाथ अकबर के पौत्र दिल्ली सम्राट् शहाजहां का सभा पण्डित रहा था। यह प्रकाण्ड विद्वान् था इसमें तिलमात्र भी सन्देह नहीं परन्तु आत्म प्रशंसा करने में भी अपूर्व था। जिस प्रकार श्री हर्ष ने नैषध में लिखा है—'यत्काव्यं मधुवर्षि धर्षितपराः तर्केषु यस्योक्तयः'' इसी प्रकार रसगङ्गाधर में इस ने लिखा है—'निर्मायनूतनमुदाहरणा-नुरूपं काव्यं मयात्र निहितं न परस्य किंचित्। किंसेव्यते सुमनसां मनसापि गन्धः कस्तूरिकाजनन शक्तिभृतामृगेण॥

जगन्नाथ ने अपने कथनानुसार अपनी युवावस्था दिल्ली में और वृद्धावस्था काशी तथा मथुरा में व्यतीत की, दिल्ली वल्लभ पाणिपल्लवतलेनीतं नवीनंवयः सम्प्रत्युज्झितवासनं मधुपुरी मध्ये हरिः सेव्यते ।। अप्यदीक्षित और भट्टोजिदीक्षित से इसका महान् विरोध था इसीलिये अपने ग्रन्थों में इसने उनके ग्रन्थों का खण्डन किया है। चित्र मीमांसा खण्डन की एक हस्तलिपि स्वलिखित मिली है, उस पर १६५३ ई० और १७२० विक्रमाद्व है। यही जगन्नाथ का अन्तिम समय है। इसके रसगङ्गाधर पर इसके साहित्य शास्त्र शिष्य नागेश भट्ट की गुरु मर्मप्रकाश टीका है। नागेश का समय १८०० विक्रमाव्द तक है ।।

साहित्य-कौमुदी विद्याभूषणेन विनिर्मिता ।
विश्वेश्वरेण विदुषा कृतोऽलंकार कौस्तुभः ।।२८।।

वङ्गदेशीय विद्याभूषण वलदेव ने साहित्य-कौमुदी लिखी। यह महा प्रभु चैतन्य का भक्त था। इसका समय १८ सौ का पूर्वभाग है। इसने और भी कई ग्रन्थ लिखे हैं। और विश्वेश्वर पण्डित ने अलंकार कौस्तुभ लिखा। यह ग्रन्थ इसने रसगङ्गाधर के उपमर्दन के लिये वनाया था परन्तु वैसा नहीं बनपाया तथापि वह न्यायमिश्रितहोने से साधारण बुद्धिवेद्य नहीं है। विश्वेश्वर ने कई ग्रन्थ लिखे हैं। इनमें सिद्धान्त सुधानिधि व्याकरण का उत्कृष्ट ग्रन्थ है। विश्वेश्वर अलमोड़ा प्रान्त के पटियाणंग्राम का निवासी था, इसका समय १८ शतककाउत्तरार्ध है।

काव्यप्रकाश निष्कासा एषा साहित्य कौमुदी ।
कौमुदीवचकास्त्यत्र श्लोकादाहरणावलिः ।।२९।।

तर्ककर्कशतेजोभि र्विशेष र्णोज्वलीकृतम् ।
अलंकार कौस्तुभंनोमनो मोदयतेभृशम् ॥३०॥

काव्य प्रकाश से निकली हुई साहित्य कौमुदी साहित्य शास्त्रियों को कौमुदी (चन्द्रिका) वत्प्रकाशित करती है।

तर्क की कर्कश उक्तियों से उज्वलीकृत अलंकार कौस्तुभ, किस विवेचक के मन को प्रसन्न नहीं करता है ॥

भानुदेवेन रसमञ्जरी रसतरङ्गिणी ।
शृङ्गारादि रसज्ञानां विबुधानां कृते कृते ॥३१॥

मैथिलभानुदत्त मिश्र ने रसमञ्जरी और रसतरङ्गिणी षोडश शतक में लिखी ॥

काव्यकल्पलता श्रीमदरिसिंहेन निर्मिता ।
कविकल्पलता देवेनाथ दिव्यगुणान्विता ॥३२॥

अरिसिंह ने काव्य-कल्पलता और देवेश्वर ने कविकल्पलता वनाई ये दोनों श्लोक रचना प्रकार दर्शिका हैं ॥

शारदातनयो भावप्रकाशनमकल्पयत् ।
रामचन्द्रगुणचन्द्रौचक्रतुः नाट्यदर्पणम् ॥३३॥

शारदातनय ने भाव-प्रकाशन और रामचन्द्र गुणचन्द ने नाटय दर्पण लिखा ये तीनों १२वें शतक में थे ॥

शिङ्गोऽकृतमहीपालो रसार्णवसुधाकरम् ।
शिवरामोरसरत्न हारमत्यन्तसुन्दरम् ॥३४॥

शिङ्गभूपाल ने सप्तदश शतक में रसार्णवसुधाकर और शिवराम ने रसरत्न हार लिखा ॥

भीमसेनोऽलंकार-सारोद्धारं प्रणीतवान् ।
देवशर्मालंकार मञ्जूषा मति विस्तृताम् ॥३५॥

देवशङ्कर ने अलंकारमञ्जूषा, और भीमसेन ने अलंकार—सारोद्धार ग्रन्थ बनाये । भीमसेन की काव्यप्रकाश टीका सुधासागर भी है । इन दोनों का समय भी अट्ठारहवां शतक है ॥

साहित्यसारं विदधेऽच्युतराय मनीषिणा ।
साहित्योद्देश संदर्भः सीतारामेण शास्त्रिणा ॥३६॥

दाक्षिणात्य अच्युतराय शास्त्री ने साहित्यसार ग्रन्थ लिखा । अच्युतराय मोड़क किसी नारायण शास्त्री का शिष्य था । इसने पण्डित राज के भामिनी-विलास की भी टीका लिखी है । इसका समय १८७८ विक्रमाब्द है । अच्युत ने अपने इस ग्रन्थ की सरसामोदटीका भी स्वयं ही लिखी है, सर्व श्री सीताराम शास्त्री ने साहित्योद्देश ग्रन्थ लिखा पूज्य शास्त्रीजी, अपने समय के संस्कृत विद्वानों में अतिप्रतिष्ठित थे । आपका हिन्दी-निरुक्त ग्रन्थ प्रसिद्ध है । आप मरुप्रान्तीय भिवानी नगर के निवासी थे भिवानी में आपका स्थापित ब्रह्मचर्याश्रम है ॥

ग्रन्थकारसूची

